शिवानन्दाश्रम

भजनावली

(द्वितीय परिवर्द्धित संस्करण)
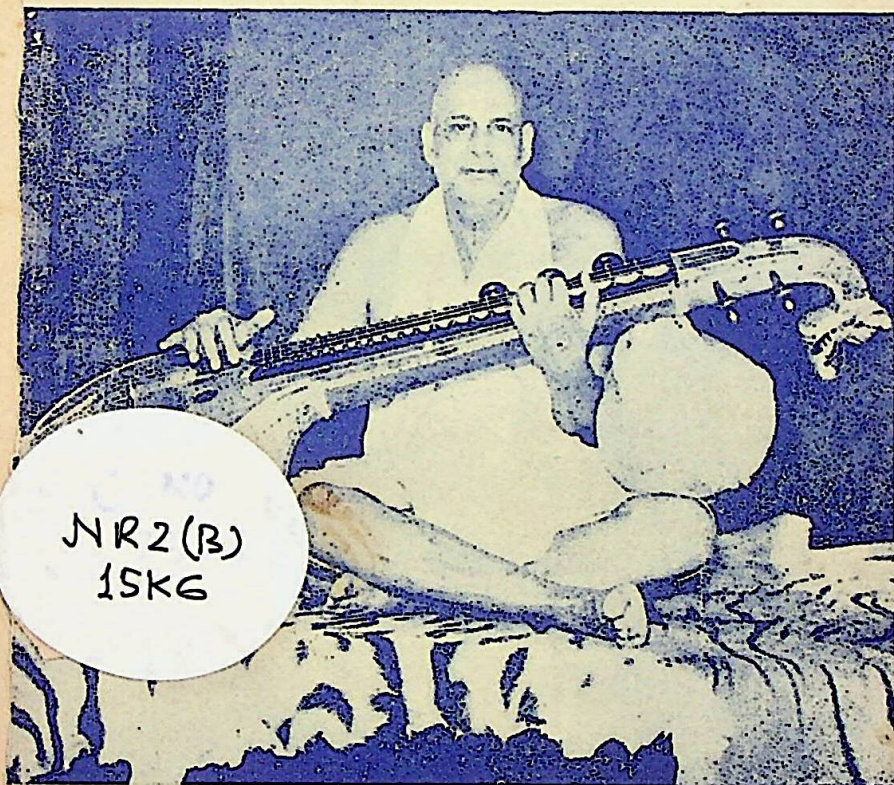
प० पू० स्वामी शिवानन्द जी महाराज

सङ्कलनकर्ता
श्री स्वामी विद्यानन्द

डिवाइन लाइफ सोसायटी पब्लीकेशन

योग-वेदान्त फारेस्ट अकादमी, डिवाइन लाइफ सोसाइटी, शिवानन्दनगर के लिए श्री स्वामी कृष्णानन्द द्वारा प्रकाशित तथा श्री देवेन्द्र विज्ञानी द्वारा विज्ञान प्रेस, ऋषीकेश, जिला देहरादून (यू० पी०) में मुद्रित।

द्वितीय (हिन्दी) संस्करण : १९६६
(१००० प्रतियाँ)

प्राप्ति स्थान :—
शिवानन्द पब्लीकेशन लीग,
डिवाइन लाइफ सोसाइटी,
पो० शिवानन्दनगर,
जिला टहरी-गढ़वाल (यू० पी०)
हिमालय।

प्राक्कथन

हमारे आश्रम के गुरुबन्धु परम पूज्य श्री स्वामी विद्यानन्द जी महाराज द्वारा अवधानपूर्वक सङ्कलित कुछ स्तोत्र और कीर्तनों की इस पुस्तक के विषय में इन पंक्तियों को लिखते हुए मुझे बड़ी प्रसन्नता हो रही है। यह भक्तिरसपूर्ण रचनाओं का अनूठा सङ्कलन है। गुरुदेव स्वामी शिवानन्द जी महाराज को ये रचनाएं बहुत ही प्रिय थीं और वह इनकी बड़ी प्रशंसा किया करते थे। इस भजनावली की मुख्य विशेषता यह है कि इसमें दिये हुए सारे भजन आदि गायन के लिए इतने अनुकूल हैं कि इन भजनों से बिलकुल अनभिज्ञ व्यक्ति भी इनके तर्ज का अनुसरण कर, बड़ी आसानी से गा सकता है। स्वर और ताल की सहायता से ये गाने वाद्ययन्त्रों के साथ भी बड़ी सुगमता से गाये जा सकते हैं। श्री स्वामी विद्यानन्द जी महाराज ने, जो संगीत-कला के प्रवीण हैं, अत्यन्त कुशलता के साथ इन भजनों की स्वर-रचना निर्धारित की है। इस कारण इस पुस्तक की उपादेयता बहुत ही बढ़ गयी है।

सन् १९६२ में श्री गुरुदेव की अनन्यभक्त श्रीमती गौरी रामभद्रन् केरल राज्य के अन्तर्गत कोलंगगोड के वेंगुनाड

राजमहल से अपने साथियों सहित हमारे आश्रम में आयी थीं। उन्होंने हमारे यहाँ प्रतिदिन प्रातःकाल भजन वर्ग में इन भजनों को गाते सुना और दो बातों से वे मुग्ध हो गयीं, एक यह कि इन भजनों में उच्च कोटि का आध्यात्मिक भाव भरा हुआ है और दूसरी यह कि इनकी स्वर-रचना बड़ी मनोहर है। इससे श्रीमती गौरीदेवी ने इन भजनों को मलयालम् भाषा में 'शिवानन्दाश्रम भजनावली' के नाम से पुस्तक रूप में प्रकाशित करने का भार अपने ऊपर लिया और वह मलयालम् संस्करण उनके स्वर्गीय प्रिय भ्राता (पद्मनाथ रवि वर्मा राजा) की पुण्य स्मृति में ७ अक्टूबर १६६२ को उनकी प्रथम पुण्य तिथि के अवसर पर प्रकाशित किया गया। उन्होंने उस पुस्तक की कुछ प्रतियाँ यहाँ आश्रम में रहने वाले मलयालम् जानने वाले साधकों के उपयोगार्थ उपहार स्वरूप भी दीं।

कुछ समय बाद मद्रास के श्री वाई० रामकृष्ण प्रसाद तथा उत्तर प्रदेश के दो भक्त—श्रीमती रानी चन्द्रावती सिंह तथा श्रीमती रानी भेष राज्यलक्ष्मी की दृष्टि उपर्युक्त 'आश्रम भजनावली' की एक प्रति पर पड़ी। उन्हें वह पुस्तक बहुत पसन्द आयी और उनकी इच्छा हुई कि उस पुस्तक के अंग्रेजी और हिन्दी संस्करण निकलें जिससे कि उत्तर भारत के तथा अंग्रेजी जानने वाले भक्तों और साधकों को यह उपलब्ध हो सके। इस प्रकाशन से असंख्य लोगों को श्री आदि शङ्कराचार्य,

श्री सदाशिव ब्रह्मेन्द्र तथा ऐसे ही अन्यान्य साक्षात्कार प्राप्त व्यक्तियों और आध्यात्मिक पुरुषों की आत्मबोध कराने वाली कृतियों का लाभ सहज सुलभ हो सकेगा। इन तीनों उदार आत्माओं ने स्वेच्छा से प्रस्तुत पुस्तक के प्रकाशन का व्यय-भार वहन किया। निश्चय ही यह उनकी उदारता और महानता है।

इस सङ्कलन की एक विशेषता यह है कि प्रत्येक भजन के पहले उसके अनुरूप श्लोक तथा अन्त में वैसी ही नामावली जोड़ी गयी है और इस प्रकार इस पुस्तक को सर्वजनसाधारण के लिए उपयोगी बनाने में यथेष्ट श्रम किया गया है। साथ ही सभी भजन, श्लोक और नामावली का सर्वसाधारण की सरल भाषा में अनुवाद दिया गया है जो सङ्कीर्त्तन के समय साधकों में 'भाव' जागृत करने के प्रचलित पारम्परिक साधनों में एक मौलिक प्रयत्न है। इन भजनों के सङ्कलन तथा तैयारी में श्री स्वामी विद्यानन्द जी ने अमूल्य सेवा की है। अपनी इस निष्काम आध्यात्मिक सेवा के कारण आप असंख्य भक्तजनों की कृतज्ञता के पात्र हैं। मूल कृतियों के बहुत उपयोगी अनुवाद प्रस्तुत करके श्री स्वामी विरजानन्द जी, श्री स्वामी रामानन्द जी तथा श्री स्वामी ज्योतिर्मयानन्द जी ने इस पुस्तक के प्रकाशन में अमूल्य सहायता दी है। नवीन परिवर्द्धित संस्करण में नये रूप से आये हुए गीतों के हिन्दी रूप और भाव तैयार करने तथा प्रथम हिन्दी संस्करण में छूटी

हुई भूलों को सुधारने में अखिल भारत सर्व सेवा संघ, वाराणसी के श्री ति० न० आत्रेय जी का अमूल्य योगदान विशेष रूप से उल्लेखनीय है। अपने अतिव्यस्त जीवन से प्रतिवर्ष कुछ समय निकाल कर यहाँ की पुस्तकों के हिन्दी संस्करण तैयार करने में जो श्रम वे उठाते हैं, उसके लिए हम सच्चे हृदय से उनके आभारी हैं।

इस सङ्कलन को जनता के सामने प्रस्तुत करते हुए हमारी प्रार्थना है कि परमेश्वर तथा श्री गुरुदेव इन सब भक्तों को, उनके परिवार को तथा सबको दीर्घायुष्य, शान्ति, समृद्धि और परम आनन्द प्रदान करें। इस पुस्तक से सब पाठकों को परा-भक्ति तथा दिव्य अनुग्रह प्राप्त हो, यही हमारी सद्कामना है।

—स्वामी चिदानन्द

आमुख

भक्ति का अर्थ है निःस्वार्थ प्रेम। यह उस शब्द का अक्षरार्थ है। यह शब्द 'भज्' धातु से बना है जिसका अर्थ है सेवा अथवा गहरी रुचि। संस्कृत धात्वर्थ—'भज् सेवायाम' —है। अतः भक्ति का अर्थ है ईश्वर के प्रति एकनिष्ठ प्रीति, ईश्वर या उससे सम्बन्धित बातों में गहरी रुचि।

अपने से भिन्न किसी वस्तुके प्रति प्रेम रखना सभी प्राणियों का नैसर्गिक स्वभाव है। हृदय से किसी से प्रेम किये बिना, प्यार किये बिना हम नहीं रह सकते; क्योंकि निश्चय ही एकमात्र परमात्मा का ही अस्तित्व है। मनुष्य का केवल एक अहङ्कार है, अभिमान है जो उससे भिन्न और दृष्टिगोचर होता है। सब के साथ एकरूप होने की प्रत्येक में आन्तरिक किन्तु अज्ञात इच्छा होती है, वही प्रेम है; क्योंकि वस्तुस्थिति यह है कि मनुष्य सब कुछ है, साक्षात् परमात्मा है। वह सब कुछ चाहता है। प्रेम अनुभूति का सन्देशवाहक है। प्रेम है ही पाने की इच्छा। उसकी पूर्ति का नाम अनुभूति है। किसी से प्रेम किये बिना कोई रह नहीं सकता। 'विधाता ने इन्द्रियों को बाह्यमुखी बनाया है', और यह विधान यहाँ प्रत्येक पर

लागू होता है। मन ही प्रमुख ज्ञानेन्द्रिय है; क्योंकि मन ही विभिन्न इन्द्रियों के द्वारा ज्ञान ग्रहण करता है। मन न चाहे तो इन्द्रियाँ कुछ भी नहीं कर सकतीं।

परन्तु मन को चारों ओर उच्छृङ्खलता से घूमने देना हमारी अपनी मूर्खता है। मन की बिखरी किरणें संसार में दृष्टि तथा कर्णगोचर होने वाली असंख्य वस्तुओं की ओर आकृष्ट होती हैं और उन्हीं में रुचि लेती हैं। योगीजन इस परिणाम पर पहुँचे हैं कि यदि मन सर्वदा एक स्थान में केन्द्रित हो जाय तो उसमें अलौकिक शक्ति प्रकट हो सकेगी और वह कुछ भी बना या मिटा सकता है। सूर्य-रश्मियों को काँच के द्वारा जब केन्द्रित करते हैं तो वे जला दे सकती हैं, किन्तु वे ही किरणें यदि बिखरी हों तो वह जला नहीं सकती हैं। यह या वह, किसी एक तत्त्व पर मन को एकाग्र करना होगा। मन को इधर से उधर कूदते नहीं रहना चाहिए। यही संसार की रीति है। एकाग्रता के द्वारा मन को नियन्त्रित करके उसकी इस चञ्चलता को रोकना होगा। एकाग्रता दो प्रकार से साधी जा सकती है,- किसी एक स्थान में केन्द्रित करें (भक्ति मार्ग) अथवा समस्त जगत् पर केन्द्रित कर (ज्ञान मार्ग)। विचारों की समाप्ति व्यष्टि की समाप्ति है, और यही परम तत्त्व की अनुभूति है।

मनुष्य किसी भी वस्तु पर मन को केन्द्रित कर सकता है। वह अपनी पत्नी या सन्तान पर भी अपना मन केन्द्रित कर

सकता है, जैसा प्रायः आजकल होता है। लेकिन इस प्रकार की एकाग्रता अथवा प्रेम यहाँ अभिप्रेत नहीं है। प्रापंचिक विषयों पर प्रेम या ध्यान बन्धनकारक है, जो जीव को जन्म-मरण के अनन्त चक्र में घसीटते हैं। यहाँ तो ईश्वर का ध्यान और ईश्वर के प्रति प्रेम अभिप्रेत है। यह निःस्वार्थ प्रेम चरम मुक्ति तक पहुँचने की सीढ़ी है।

परिपूर्ण साक्षात्कार के मार्ग में भावनाएं सामान्यतया बाधारूप मानी जाती हैं, परन्तु कुछ ही भावनाएं जीव के लिए बन्धनकारक होती हैं, अन्य कुछ भावनाएं तो उसे बन्धन-मुक्त करती हैं। ईश्वर-भावना मनुष्य के अन्दर बन्धनकारक भावना को उत्पन्न नहीं करती। वह विशुद्ध भावना है जिसमें ऐहिकता और विषयासक्ति का स्पर्श नहीं है। ईश्वर के प्रति वैषयिक प्रेम सम्भव नहीं है। ईश्वर और ईश्वर-प्रेम की धारणा विशुद्धतम भावनाओं को जगाती है और ये भावनाएं उन दुर्भावनाओं से कई गुना उत्तम हैं जो कि मनुष्य को दिन-रात अभिभूत किये रहती हैं। जो व्यक्ति सब भावनाओं को रोक नहीं सकते, उन्हें कम-से-कम इतना तो करना ही चाहिए कि विशुद्ध भावना रखें। यही भक्ति-मार्ग की दिव्य भावनाओं का इस दृष्टि से महत्व है। ईश्वर का प्रेम उस प्रकार का नहीं होता जैसा पत्नी, सन्तान या सम्पत्ति के प्रति होता है। कई भक्त ऐसे होते हैं जो अपनी प्रापंचिक आसक्तियों को एकदम छोड़ नहीं सकते, वे यद्यपि ईश्वर को पुत्र, पिता, पति, मित्र

आदि सांसारिक सम्बन्धों का रङ्ग देकर प्रेम करते हैं, फिर भी उसमें और इसमें बहुत अन्तर है।

तब ईश्वर के प्रति प्रेम हमें संसार से कैसे मुक्त करता है ? मनुष्य अहङ्कारयुक्त एक प्राणी है। उसका एकमात्र शत्रु यह अहङ्कार है। वह समझता है कि विश्व की सभी वस्तुओं से वह एकदम भिन्न है। उसका दृढ़ विश्वास है कि उसे यह शरीर देकर समस्त विश्व से पृथक् कर दिया गया है। उसके मन में यह निश्चय है कि वह शरीर ही है, भले ही इस बात से वह किसी प्रकार इनकार किया करे। जबभी वह 'मैं' बोलता है, तब वह अपनी ऊपरी छाल को ही निर्देशित करता है, अन्तस्तत्त्व को नहीं। कई अभागे वेदान्ती तक यही मानते हैं कि 'मैं ब्रह्म हूँ' का अर्थ 'यह शरीर ही ब्रह्म है'। 'मैं' को शरीर-भावना से पृथक् करना बहुत कठिन है। जब कोई कहता है कि 'मैं रामकृष्ण हूँ', तब उसका यही आशय है कि 'यह शरीर रामकृष्ण है।' शरीर को ही आत्मा समझने की इस भूल से कोई बचा नहीं है। इस अहं भाव का विनाश करना ही योग का लक्ष्य है और भक्ति-योग इस अहं भाव या पार्थक्य को निर्मूल करने की एक पद्धति है। वह मन के वैचित्र्य को मिटाती है और मनुष्य को विश्वात्म भाव से भर देती है।

भक्त कहता है—'हे प्रभु, मैं तेरा हूँ। सब कुछ तेरा है। मैं तुझसे पृथक् वस्तु नहीं हूँ। मुझमें कुछ भी कर सकने की

सामर्थ्य नहीं है। तू ही मुझे अपना साधन बना कर सब कुछ करता है। प्रभु, तू सर्वत्र है, मैं चल भी नहीं सकता, क्योंकि तू सर्वत्र है। मैं तेरे बदन पर चलता हूँ। अलग से जी नहीं सकता; क्योंकि तुझे मैं सर्वत्र देख रहा हूँ। नर-नारी के रूप में और मार्ग पर लाठी के सहारे लड़खड़ाते हुए चलने वाले बूढ़े के रूप में भी तू ही दिखाई देता है। तू सब कुछ बन गया। मुझे स्वतन्त्रता नहीं है। मैं तेरा दास हूँ। दास की दृष्टि ऐच्छिक नहीं हो सकती। वह वही कर सकता है जैसा प्रभु आदेश देता है। मैं कुछ भी नहीं कर रहा हूँ। मेरे द्वारा तू ही कर रहा है। तू ही कर्ता है। तू ही भोक्ता है। मैं कुछ नहीं हूँ। तेरी इच्छा ही चलेगी।'

यह प्रेम का उत्कृष्ट प्रकार है। यह दिव्य प्रेम है। अहंकार की स्वतन्त्र सत्ता नहीं है, क्योंकि सर्वत्र हरि हैं। मन इन्द्रिय-विषयों के प्रति वृत्तियों के रूप में रूपान्तरित हो नहीं सकता; क्योंकि ईश्वर-भिन्न विषय कुछ है ही नहीं। किससे द्वेष किया जाय, किसे प्यार किया जाय? राग-द्वेष आखिर किससे? इसलिए भक्त सर्वदा प्रसन्न और सन्तुष्ट रहते हैं। उनका मन अन्य कुछ भी सोच नहीं सकता; क्योंकि सब कुछ ईश्वर है— 'यत्र यत्र मनो याति तत्र तत्र समाधयः।' मन जहाँ भी जाता है, वहाँ समाधि का ही अनुभव पाता है; क्योंकि उसे वैषयिक सुख का कोई विषय ही नहीं मिलता। कण-कण में ईश्वर व्याप्त है। सारा संसार ईश्वर की महिमा से परिपूर्ण है। साधु और

पापी, सज्जन और दुर्जन, भला और बुरा, मानव और पशु—सब ईश्वर के ही रूप हैं। तब मन उनसे दिव्यत्व हीन भावना से कैसे व्यवहार करे? वहाँ मन समाधि पा लेता है। वह जागृत होता है, किन्तु उसके लिए कोई विषय नहीं है। यही समाधि है। विचारशून्य जागृति समाधि है, विषयशून्य ज्ञान समाधि है। यही परा भक्ति है। यह और वेदान्तिक साक्षात्कार एक ही है। वेदान्तिक साक्षात्कार और परा भक्ति ये दो नाम मात्र हैं, वस्तुतः दोनों एक ही हैं, समान हैं। दोनों का परिणाम भी एक ही है, अहंतानाश अथवा मनोनाश। मन परिपूर्ण विषय के अभाव में रह नहीं सकता। ईश्वर, जो कि परम शक्तिशाली है, परम ज्ञानी है और परम आनन्दमय है, समस्त पृथ्वी और सारे ब्रह्माण्ड में व्याप्त है। वही धरती है, वही स्वर्ग है। वही माता-पिता है, वही भाई-बहन है। ईश्वर ही सारे प्रेम और आकर्षणों की, इच्छा और आकांक्षाओं की समाप्ति (पूर्णता) है। सारी मनोवृत्तियों की वही मञ्जिल है, आश्रयस्थान है। वही प्राप्तव्य आदर्श है।

जब सर्वत्र हरि का अनुभव होने लगता है, तब वैषयिक-वृत्ति नष्ट हो जाती है। ऐन्द्रिय विषय दिव्य आनन्द में बदल जाते हैं। पत्नी अब वासना का विषय नहीं है और न धन ऐसी सम्पत्ति है जिसका सञ्चय किया जाय। जो भी है ईश्वर है और ईश्वर से भिन्न कुछ नहीं है। सब पूजनीय हैं। श्री कृष्ण ने उद्धव से कहा—'गधा, कुत्ता और चाण्डाल सब प्रणाम

करने योग्य हैं; क्योंकि सब ईश्वर हैं।' यह और 'सर्वं खल्विदं ब्रह्म'—दोनों एक ही हैं, इनमें कोई अन्तर नहीं है।

श्री कृष्ण की रासलीला में समाधि के दोनों प्रकार के चित्र मिलते हैं। प्रथम गोपियाँ देखती हैं कि सब कहीं कृष्ण ही कृष्ण हैं। यह सविकल्प समाधि के समान है। बाद में वे स्वयं अपने को भी कृष्ण ही समझने लगती हैं। यह निर्विकल्प समाधि के समान है, जहाँ 'अहं' विनष्ट हो जाता है। भक्तों के लिए श्रीमद्भागवत परम-पूज्य ग्रन्थ है। उसमें भक्ति का विकास करने वाले विभिन्न रसों और प्रसंगों का चित्रण है।

'मन का नियन्त्रण करो, अहं का नाश करो'—यह सभी योगों का सार है। नाम कुछ भी हो, किन्तु सभी योगों का एकमात्र उद्देश्य है 'मन और अहं का नाश'। यही भक्तियोग का भी आदर्श है जो कि बहुत मधुर है और जिसकी प्रक्रिया बहुत सरल है। भावनाओं को मिटा देने की आवश्यकता नहीं है, न ही जंगल में जा बैठने की। इतना ही करना होगा कि भावनाओं को ईश्वर की ओर मोड़ें और संसार में उसी (ईश्वर) की उपस्थिति देखें। इस प्रकार भक्ति आत्म-प्रेम की ही प्रतिच्छाया है जिसका उद्घोष उपनिषदों ने किया है। केवल नाम अलग-अलग हैं। कोई उसे आत्मा कहता है, दूसरा ईश्वर कहता है। नाम का महत्व नहीं है, महत्व है भाव का।

आत्मसमर्पण भक्ति का सर्वोच्च रूप है। आत्मसमर्पण का अर्थ है 'अहं' का या पृथक् व्यक्तित्व का समर्पण। तब वह वेदान्तियों का परम तत्त्व ही बच रहता है। इस भाँति वेदान्त और परा-भक्ति में कोई अन्तर नहीं है। किसी भी दशा में दोनों के अन्दर 'अहं' नहीं रहता है। भक्त अहं का समर्पण करता है और वेदान्ती उसका निराकरण। उनका आदर्श समान है। कोई चावल खाये या गेहूँ, दोनों बराबर ही हैं। दोनों का हेतु भूख मिटाना ही है। इसमें कोई झगड़ा नहीं है। आप चाहे भक्ति का अनुसरण करें, चाहे वेदान्त का, परिणाम तो एक ही है 'अहंता का नाश'। यही सत्य है।

भक्ति दो प्रकार की है। निम्न श्रेणी का भक्त मानता है कि उसके अपने आपके अतिरिक्त अन्य सब कुछ ईश्वर है। वह समझता है कि वही एक है जो ईश्वर नहीं है और शेष सब ईश्वर है। यह निम्न प्रकार की भक्ति है और इसमें अहं के कारण अन्तिम अनुभूति में बाधा पहुँचती है। उन्नत श्रेणी का भक्त मानता है कि वह स्वयं ईश्वर में समाया हुआ है और उसका पृथक् अस्तित्व नहीं है। उसके अहं का पूर्णतः उन्मूलन हो जाता है और यह परा-भक्ति की अथवा वेदान्त की अनुभूति है। इसमें उसकी भावनाएं रुक जाती हैं और वह शान्त स्तब्ध सागरवत् हो जाता है जिसमें तरंगें नहीं उठती हैं। उसका मन शान्त हो जाता है और चिरन्तन सत्य में लीन हो जाता है। यह भक्ति की अन्तिम परिणति है जिसका अनुभव

वृन्दावन की गोपियों और गौरांग महाप्रभु जैसे पहुँचे हुए भक्तों को हुआ था।

ईश्वर के प्रति प्रेम निष्काम होना चाहिए। ईश्वर-प्रेम के पीछे कोई प्रापंचिक हेतु नहीं होना चाहिए, अन्यथा यह प्रेम काम और माया का ही रूपान्तर होगा। आर्त, जिज्ञासु और अर्थार्थी–सब सकाम भक्त हैं। उन्हें भक्ति का उत्कृष्टतम फल नहीं मिल सकता है। वे सांसारिकता में विभ्रान्त हुए हैं। केवल ज्ञानी भक्त ही, जो निरुद्विग्न शान्ति की महिमा और उदात्तता से ओतप्रोत है, वास्तविक निष्काम भक्त है। सर्वोत्तम प्रकार का भक्त वह है जो ईश्वर से कुछ नहीं चाहता। वह केवल ईश्वर को चाहता है। वह कहता है—"हे प्रभु, मैं तुझे चाहता हूँ; और कुछ नहीं चाहता। तू सर्वमूल है, सर्वाधार है; तब तुझे पा लेने के बाद, मुझे पाने के लिए और क्या रह जाता है?" गेहूँ जब मिल गया तब रोटी, परांठा, हलवा आदि उसके सारे प्रकार मिल गये। स्वर्ण के प्राप्त होने पर सारे आभूषण स्वत: प्राप्त हो जाते हैं। जब ईश्वर को पा लिया तो सब कुछ पा लिया। भक्त ईश्वर में लीन हो जाता है। वह आनन्द-सागर में निमग्न हो जाता है। वह अमृतसिन्धु में स्नान कर चुका है। उसने अमरता का नवनीत आकण्ठ पान किया है। वह आप्तकाम हो गया, क्योंकि उसने ईश्वर पा लिया।

उन्नत श्रेणी के भक्तों का पठनीय ग्रन्थ है 'श्रीमद्भागवत'। उसमें संन्यास, भक्ति और ज्ञान के आदर्शों का वर्णन सर्वथा

निर्दोष रूप से किया गया है। यह पुराण,—सामान्यतया पुराण का जो स्वरूप माना जाता है उससे बहुत उत्कृष्ट,—हिन्दुओं के भक्तिपरक साहित्य का सार है। वह हरि-प्रेमियों की निधि है। वह दिव्य ज्ञान का ग्रन्थ है। वह नैष्कर्मता का प्रतिपादन करता है। कहा जाता है कि श्री कृष्ण चैतन्य (गौरांग) इस ग्रन्थ को भारतीय आध्यात्मिक रचनाओं में सर्वोत्कृष्ट मानते थे। शुद्ध आध्यात्मिक धर्म का वह एक महान् प्रमाण ग्रन्थ है, जो धर्म, अर्थ और काम का नहीं, वरन् साक्षात् मोक्ष का साधन है। जो लोग उसके अन्दर न्यूनताओं और दोषों को ही खोजने जाते हैं, उनको भी मोह लेने की सामर्थ्य उसमें है। वह सम्पूर्ण ग्रन्थ भक्ति, वैराग्य और ज्ञान के उन्नत विवेचनों से लबालब भरा हुआ है। जड़ भरत, ऋषभ देव, अवन्ती के ब्राह्मण ने संन्यास और ज्ञान का जो आदर्श प्रस्तुत किया; ध्रुव, प्रह्लाद और अम्बरीष ने भक्ति का जो आदर्श दिखाया, नारद, कपिल ने जो दर्शन प्रस्तुत किया और इन सबसे बढ़ कर भगवान् श्रीकृष्ण ने अपने परम भक्त शिष्य उद्धव के सामने जो उपदेश दिया और जो अमर जीवन दिखाया, इन सबका हार्द श्रीमद्भागवत है।

भक्ति के विषय में वितण्डावाद करना या उसे गलत अर्थ में प्रस्तुत करना शोचनीय अपराध है, क्योंकि ईश्वर-प्रेम, ईश्वर-पूजन और ईश्वर से एकात्मता की प्राप्ति सब धर्मों का ही आशय है। अखण्ड आनन्द की जो उत्कृष्ट कल्पना है,

वह केवल सेवा और पूजा ही नहीं है, परन्तु उस परमात्मा से प्रेममय एकात्मता है। मुक्ति के साधन के रूप में भक्ति पर जोर देने का यह तात्पर्य नहीं है कि मानवता की सेवा और प्रीति को दुर्लक्ष्य किया जाय। चूंकि सब कुछ ईश्वर ही है, अतः जो मानवता की सेवा करता है, वह ईश्वर की सेवा करता है, जो प्रतिवेशी (पड़ोसी) से प्यार करता है, वह ईश्वर से प्यार करता है। भक्त विश्व के प्रत्येक प्राणी से एकरूप होता है, सारी सृष्टि को ईश्वर की ही प्रतिकृति समझता है और यह अद्वैत साक्षात्कार से किसी भी रूप में न्यून नहीं है। जो लोग ईश्वर से वास्तव में प्रेम करते हैं, वे विपथगामी नहीं हो सकते, विनाश को नहीं प्राप्त होते। पापी और शूद्र का भी साक्षात्कार की भव्य उन्नत अवस्था तक उत्थान हो सकता है। ईश्वर की दया अपरिमेय है। ईश्वर उनकी बुद्धि को निर्मल बनाता है और हर समय उनका ध्यान रखता है। श्रीमद्भगवद्गीता और भागवत इस तथ्य के निदर्शक हैं। भक्त को ईश्वर का पथ-प्रदर्शन प्राप्त होता है और उसे ज्ञान-प्रकाश मिलता है जिससे परम पद की प्राप्ति होती है।

—श्री स्वामी कृष्णानन्द

प्रस्तावना

ईश्वर के नाम का गायन करना भक्ति का ही एक प्रकार है। यह बहुत ही स्वाभाविक है तथा प्रारम्भिक अवस्थाओं में विषय-पदार्थों से मन को अलग कर ईश्वर-साक्षात्कार की ओर अग्रसर होने के लिए सर्वोत्तम साधन है। हम सभी अज्ञान में निमग्न हैं तथा आवेगात्मक इन्द्रियों और बन्दर के समान अपने मन के कारण प्रतिक्षण भटकते रहते हैं। मनुष्य विषय-सुखों की खोज के पीछे अन्धाधुन्ध रूप से पड़ जाता है तथा प्रकृति के अनेकानेक थपेड़ों के लगने से वह (उपनिषद् के शब्दों में कहें तो) यह समझ जाता है कि प्रेय एक वस्तु है और श्रेय एक दूसरी वस्तु है।' अब वह परमात्मा से रक्षा की माँग करता है। यही भक्ति का समारम्भ है।

तालबद्ध स्वरों से विशेष आकृति का निर्माण होता है। यह कोरी कल्पना नहीं है। प्रत्येक ध्वनि के लिए एक विशेष आकृति है। वैज्ञानिक रूप से यह प्रमाणित किया गया है कि विशेष ध्वनि के द्वारा विशेष प्रकार की आकृति का निर्माण होता है। अतः यह विश्वास करना तर्कसंगत है कि ईश्वर के विभिन्न नाम मानस पटल पर विभिन्न चित्रों का निर्माण करते

हैं। सतत जप के द्वारा जापक के मन पर गम्भीर छाप पड़ती है जिससे वह अन्ततः ईश्वर के दर्शन करता है। ईश्वर के नाम में अथाह गहराई, अतीव माधुर्य तथा अनुपम आकर्षण है। यह सीमित बुद्धि की पहुँच से परे है। यह केवल अनुभवगम्य है। संगीत सर्वप्रथम स्नायुओं को प्रफुल्लित करता है, उनमें सामञ्जस्य लाता है तथा मन पर रहस्यमय प्रभाव डालता है। सच्चा भक्त भाव-विभोर हो उठता है। ईश्वर का नाम आनन्द-मय है। उसका कीतन करने पर मन उसके आनन्द में विलीन हो जाता है। आनन्द में वह अपने अहं भाव को खो देता है। वह आनन्द से एक हो जाता है। ईश्वर तथा उसका नाम एक ही है। ये दोनों अभेद्य हैं। जहाँ ईश्वर के नाम को गाया जाता है वहाँ ईश्वर का निवास है। सारा वातावरण पवित्र हो जाता है। ईश्वर का नाम कामुक मन को शुद्ध बनाता तथा मनुष्य को विश्वात्म चैतन्य तथा ईश्वरत्व की ओर ले जाता है।

कीर्तन अथवा ईश्वर की लीला का गान करना अथवा भगवद्नाम संकीर्तन भक्तियोग का अंग है। प्रत्येक नाम एक विशेष भाव का वाचिक स्वरूप है। वह भावना की वस्तु चाहे जो भी हो, स्थूल अथवा सूक्ष्म, काल्पनिक अथवा सत्य, नाम उसके साथ अवश्यमेव सम्बन्धित रहता है। नाम-जप द्वारा नाम से सम्बन्धित वस्तु की अभिव्यक्ति होती है तथा मन में उसकी गहरी छाप पड़ती है। नाम परमात्मा की शाब्दिक प्रतिमूर्ति है। उस परमात्मा को विभिन्न समयों अथवा देशों

में विभिन्न नाम-रूप से जाना जाता है। वह परमात्मा असीम है और सामान्य मनुष्य के लिए सीमित मन से परे की वस्तु को ग्रहण करना असम्भव है। अतः वे असीम को प्रतीक के रूप में प्रस्तुत करते हैं। प्रतीक तथा विभिन्न नाम-रूप बदलते रहते हैं, परन्तु एकमेव सत्य बना रहता है। प्रारम्भ में विभिन्न नामों में तथा उनसे सम्बन्धित वस्तुओं में विभिन्नता रहती है, परन्तु ईश्वरीय चैतन्य के जागरण होने पर किसी प्रकार का भेद नहीं रहता। अपरोक्ष ज्ञान के द्वारा परमात्मा ही नाम में अभिव्यक्त होता है, क्योंकि सारे नाम-रूपों का आधार वह एक ही परमात्मा है जो विभिन्न धर्मों एवं सम्प्रदायों में, विभिन्न समयों और देशों में, विभिन्न नाम-रूपों द्वारा अभिव्यक्त होता है।

कीर्तन के महत्व का एक दूसरा भी कारण है। मनुष्य भावनात्मक प्राणी है। वह संसार की वस्तुओं से प्रेम किये बिना नहीं रह सकता। प्रारम्भ में उसका प्रेम काम के रूप में रहता है जो शुद्ध ईश्वरीय प्रेम नहीं है। वह मधुर संगीत सुनना चाहता है, सुन्दर वस्तुओं को देखना चाहता है तथा विभिन्न मनोरञ्जनों को पसन्द करता है। संगीत से पाषाणवत् कठोर हृदय भी पिघल जाता है। मनुष्य के हृदय को शीघ्र परिवर्तित करने के लिए सबसे सुलभ वस्तु यदि कोई है तो वह संगीत ही है। कीर्तन-भक्ति में इसी उपाय को प्रयोग में लाते हैं; परन्तु इसमें प्रेम को विषय पदार्थों में लगाने के स्थान में उसे हटा

कर ईश्वर की ओर प्रवृत्त किया जाता है। मनुष्य की भावनाएं ईश्वर की ओर लगायी जाती हैं तथा उसका संगीत-प्रेम भी नष्ट नहीं होता। यदि उसके संगीत-प्रेम को अचानक नष्ट कर दिया जाय तो वह पूर्णता-प्राप्ति में विफल रहेगा। कीर्तन मधुर तथा सुखद है और यह हृदय को सुगमतया परिवर्तित कर देता है। शुक महर्षि कीर्तन भक्त के उदाहरण हैं। राजा परीक्षित को भागवत सुनाते समय वह भाव समाधि की अवस्था में थे। भागवत माहात्म्य में ऐसा वर्णन है कि जिस समय श्री शुकदेव जी भगवान् की महिमा का गान कर रहे थे उस समय स्वर्ग से देवतागण उतर आये तथा विभिन्न स्वर्गिक वाद्ययन्त्रों के साथ कीर्तन में भाग लिये। नारद अपनी वीणा बजाते थे तथा इन्द्र अपनी मृदङ्ग और प्रह्लाद झाँझ बजाने लगे तथा भगवान् शिव नृत्य करने लगे। भगवान् नारायण भी वहाँ उपस्थित थे। वे सभी भाव-विभोर हो उठे थे।

कीर्तन करते समय भक्त ईश्वरीय भाव से विभोर हो उठता है। वह ईश्वर प्रेम में अपने को खो देता है। भक्त ईश्वरीय नाम के गायन में सदा संलग्न रहता है, उसकी महिमा के वर्णन करने में निरत रहता है। ईश्वर को प्राप्त करने के समस्त साधनों में कीर्तन सबसे सुगम है। गृहस्थों के लिए भी कीर्तन सबसे अधिक उपयुक्त है। यह मन को सुख प्रदान करता और साथ ही हृदय को शुद्ध बनाता है। कीतन सम्भवतः सबों के लिए सुगम तथा अनुकूल है। कहा गया है कि कलियुग म

एकमात्र संकीतन ही सर्वोत्तम योग है। 'कलौ केशव कीर्तनात्' —इस युग के लिए कीर्तन ही सर्वोत्तम मार्ग माना गया है।

संगीत सभी प्रकार की मनोवृत्ति वाले लोगों को आकृष्ट करता है तथा सबों के हृदय को जीत लेता है चाहे वे मानवी स्तर से नीचे हों अथवा ऊपर। देवगण संगीत से शीघ्र प्रसन्न होते हैं, फिर मनुष्यों का क्या कहना! मधुर संगीत द्वारा पशु भी वशीभूत तथा मोहित हो जाते हैं। संगीत के लिए श्वास पर नियन्त्रण की बहुत हद तक आवश्यकता है, अतः इसको हठयोग साधना का भी एक अङ्ग मानते हैं। संगीत में श्वास गम्भीर तथा पूर्ण रूप से लेते हैं जिससे फेफड़े मजबूत होते हैं तथा रुधिर भी साफ होता है। इसके अतिरिक्त संगीत के विभिन्न स्वरों के अनुसार सूक्ष्म शरीर में कुण्डलिनी के चक्र हैं। संगीत के द्वारा सूक्ष्म नाड़ियों की शुद्धि के कारण मन को ही सुख तथा शान्ति नहीं प्राप्त होती वरन यह योग-साधना में भी सहायता प्रदान करता है।

संगीत द्वारा वशीभूत होकर सहस्रों वृत्तियों तथा वासनाओं से युक्त यह मन शान्त पड़ कर साधक के अधीन हो जाता है। साधक अपनी इच्छानुसार उस पर शासन कर सकता है। मनुष्य में मन ही शैतान का यन्त्र है। यही माया का जादू है। यही सारी आध्यात्मिक आकांक्षाओं का बाधक है। परन्तु संगीत के द्वारा यह संगीत-योगी के पूर्ण अधीन हो जाता है।

संगीत योग के विषय में एक अद्भुत बात यह है कि इससे केवल गायक का ही मन नियन्त्रित नहीं होता वरन् जो भी इसका श्रवण करते हैं उनका मन भी शान्त, स्थिर तथा सुखी होता है। सम्भवतः यही कारण है कि तुकाराम, कबीरदास, मीराबाई, श्री त्यागराज तथा अन्य सन्तों ने अपने उपदेशों को संगीत में व्यक्त किया था। सांसारिकता रूपी-सर्प मानव-हृदय की बड़ी ही सतर्कतता से रखवाली करते रहते हैं, किन्तु मधुर संगीत के द्वारा समुन्नत विचार आसानी से हृदय में प्रविष्ट हो जाते हैं। संगीत योग अनायास ही राजयोगियों के चित्तवृत्ति-निरोध को प्रदान कर देता है। संगीत अथवा संकीर्तन भक्ति-योग का आवश्यक अङ्ग है। संकीर्तन तथा भक्ति अविभाज्य हैं। इस भाँति जब मन स्थिर तथा शुद्ध हो जाता है, तब वह नाद में विलीन हो जाता है तब ज्ञान-नेत्र खुल जाते हैं तथा संगीत योगी योग-सिद्धि अथवा समाधि को प्राप्त कर लेता है, क्योंकि सारे संगीत प्रणव अथवा ओ३म् की ही अभिव्यक्ति हैं।

संगीत स्नायविक उत्तेजन अथवा इन्द्रियों की तृप्ति के लिए नहीं है। यह वह योग-साधना है जो आपको आत्मसाक्षात्कार के लिए समर्थ बनाती है। सारे संगीतज्ञों तथा संगीत-संस्थाओं का यह अग्रिम कर्तव्य है कि वे संगीत के इस महान् आदर्श तथा उसकी पुरातन शुद्धता को बनाये रखें। त्यागराज और पुरन्दरदास जैसे सन्तों ने इस पर बारम्बार बल दिया है। उन्होंने अपने त्याग और भक्तिमय जीवन के द्वारा यह प्रदर्शित

किया है कि संगीत को योग समझना चाहिए तथा सच्चे और आत्मोद्बोधक संगीत का आस्वादन वे ही सुचारु रूप से कर सकते हैं जो संगीत का अभ्यास आत्मसाक्षात्कार की साधना के रूप में करते हैं।

अब हमें यह मालूम हो चुका है कि संकीर्तन अथवा संगीत- योग का महत्व क्या है। यही कारण है कि श्री स्वामी शिवानन्द जी महाराज ने, जो स्वयं संगीत-प्रेमी तथा संकीर्तन-भक्त थे, आश्रम के जीवन में नाम-संकीर्तन को प्रमुख स्थान प्रदान किया। योग-वेदान्त आरण्य अकादमी में कर्म, योग, वेदान्त विभागों के अतिरिक्त संकीर्तन विभाग भी कार्य कर रहा है जिसके अध्यक्ष हैं श्री स्वामी विद्यानन्द जी महाराज। स्वामी विद्यानन्द जी भक्त तथा संगीत के सच्चे प्रेमी हैं। वह दम्भ तथा वाह्य प्रदर्शन से रहित हैं। उनकी एकमेव लगन संगीत ही है। वह अधिकारपूर्वक वीणा बजाते हैं। यदि वह चाहते तो कलाकार के नाते संसार में बड़ा उच्च स्थान प्राप्त करते; परन्तु कला तथा कलाकारों की सेवा में उन्होंने अपने जीवन को अर्पित कर दिया। सच्चे साधकों के लिए वह सदा दया से पूर्ण हैं। निष्काम्य सेवा की भावना उनमें इतनी तीव्र है कि अपने दुर्बल शरीर पर श्रम का अधिक भार डाल कर भी वह बहुधा घण्टों तक छात्रों को वीणा तथा संगीत की शिक्षा देते रहते हैं। अपने छात्रों के हृदय में संगीत-योग के प्रति दिलचस्पी उत्पन्न करने तथा सच्ची निष्ठा लाने के लिए वह

हार्दिक प्रयत्न करते हैं तथा नित्यप्रति दयापूर्वक उन छात्रों की सेवा में तैयार रहते हैं। संगीत-शिक्षा देने की उनकी कला अनुपम है। वह छात्र में संगीत के प्रति निष्ठा तथा आत्म-विश्वास का सञ्चार करते हैं। प्रारम्भ में राग-स्वरूप की रूप-रेखा बतलायी जाती है तथा उसके अनन्तर कीर्तन-संगीत सिखाया जाता है, जिससे साधक रागों को समझ पाता है तथा भाव के प्रति आकृष्ट होता है जो संकीर्तन योग के लिए आवश्यक है। इस सहज उपाय को उन्होंने अपने विद्यागुरु श्री पी० श्रीनिवास अय्यर, दक्षिण के सुविख्यात संगीतज्ञ, से सीखा है।

वर्तमान कीर्तन संग्रह का श्रेय स्वामी विद्यानन्द जी को ही प्राप्त है। भक्ति भावात्मक संगीतों के संग्रह की आवश्यकता थी जिससे कि आश्रम के साधक ही नहीं वरन् अनेकानेक भक्त, भजन मण्डलियाँ, दिव्य जीवन के सदस्य तथा शाखाएं उनसे लाभ उठा सकें तथा इसके फलस्वरूप जनता में धार्मिक चेतना का सञ्चार हो। इसी उद्देश्य को दृष्टिकोण में रखते हुए इस पुस्तक में संस्कृत, हिन्दी, तामिल आदि भाषाओं के चुने हुए मुख्य कीर्तनों को एकत्र किया गया है।

प्रथम संस्करण में लोगों ने इतना उत्साह दिखलाया और वह इतना लोकप्रिय हुआ कि हमें शीघ्र ही यह द्वितीय परिवर्द्धित संस्करण प्रकाशित करना पड़ा।

यदि साधकों को करुणामय भगवान् की सत्ता की अनुभूति में अल्प मात्र भी सफलता प्राप्त हुई तो इस पुस्तक के प्रकाशन का उद्देश्य पूर्णतः सफल हुआ समझिए। इस पुस्तक से साधकगण संगीत की प्राचीन परम्परा को बनाए रखते हुए इसका अनुभव कर सकते हैं कि आधुनिक कलिसंतप्त जीवन में नाम-कीर्तन की अपेक्षा कोई भी सुगम साधन नहीं जो मनुष्य को अमृतत्व की ओर ले जाय।

हरि ॐ तत्सत्

—श्री स्वामी माधवानन्द

संगीत — ईश्वर-साक्षात्कार का अनुपम साधन

(श्री स्वामी विद्यानन्द)

सर्वं खल्विदं ब्रह्म—यह सब वास्तव में ब्रह्म ही है, यही है वेदान्त की घोषणा, यही है प्राचीन भारतीय ऋषियों की शाश्वत एवं नित्य उक्ति। इस विशाल विश्व के समस्त पदार्थों तथा प्राणियों में सत् व्याप्त है और इस सत्य का साक्षात्कार करना ही मानव जीवन का लक्ष्य है। विभिन्न साधनों से एक ही लक्ष्य प्राप्त किया जाता है; ठीक उसी प्रकार जिस प्रकार विभिन्न सरिताएं एक ही सागर की ओर प्रयाण करती हैं। कला के विभिन्न रूप अपनी शुद्ध अवस्था में जीवन-लक्ष्य के साक्षात्कार के लिए विभिन्न साधन हैं। सभी कलाओं में मुख्य पाँच कलाएं भारत के प्राचीन ऋषियों द्वारा आध्यात्मिक मार्ग में उन्नति के लिए ही विकसित की गयी हैं।

इन कलाओं में संगीत का सबों के ऊपर प्रेरणात्मक प्रभाव है। ये पाँच कलाएं हैं—चित्रकारी, मूर्तिकला, नृत्य, साहित्य तथा संगीत। इनका महत्व क्रमोन्नति के रूप में है। यह कैसे सम्भव है? इसे समझने के लिए पहले हम चित्रकारी को लेते हैं। यह सुन्दर आकृति तथा दृश्य को सादे कागज पर अङ्कित

करती है। चित्र के द्वारा हम अपनी भावना को व्यक्त करते हैं। दूसरी कला मूर्तिकला है। यह चित्रकला का अधिक विकसित रूप है। इसमें हम आकृति, मुटापा आदि विभिन्न पहलुओं को देख सकते हैं। मूर्तिकला में आकृति पूर्णतः व्यक्त होती है।

परन्तु यह आकृति स्थिर होने के कारण इसमें जीवन का अभाव मालूम पड़ता है। गति के द्वारा आकृति जीवित मालूम पड़ती है। रुचिर गति के लिए नियम अनुशासन की आवश्यकता है जिसे ताल कहते हैं। नृत्य इस प्रकार मूर्तिकला का अग्रिम विकास है। यह जीवन से पूर्ण है। इसमें अङ्गों की तालबद्ध गतियाँ होती हैं तथा चेहरे से विभिन्न भावों की अभिव्यक्ति होती है। इस अवस्था में भावनाएं मन में मूर्त्त रूप धारण करने लगती हैं। वे अभिव्यक्त होना चाहती हैं। शब्दों की धारा फूट पड़ती है; परन्तु अपने विचारों को पूर्णतः व्यक्त कर सकने के लिए शब्दों के गठन में नियम तथा चातुर्य की आवश्यकता है। तभी वे विचार अच्छी तरह समझे जा सकते हैं तथा हृदयग्राही हो सकते हैं। साहित्य इस उद्देश्य को पूर्ण करता है। साहित्य कला द्वारा नये विचारों को सुन्दर ढंग से व्यक्त करते हैं जिससे मनुष्य की बुद्धि विकसित होती है और साथ ही उसे बौद्धिक प्रोत्साहन एवं मनोरंजन प्राप्त होता है।

कला का इससे अधिक विकास संगीत में पाया जाता है।

यह अधिक स्पन्दनपूर्ण, मर्मस्पर्शी तथा हृदयग्राही होता है। यदि हम "राम राम, राम राम, राम-नाम तारकम्" का जप करें तो इससे यह भाव व्यक्त होता है कि राम-नाम संसार-सागर से पार ले जाकर अमृतत्व प्रदान करता है; परन्तु यह समझ मानसिक ही है। हाँ; यदि इन्हीं शब्दों को स्वर-युक्त संगीत के रूप में गाया जाय तो इन शब्दों की भावनात्मक अनुभूति की गहराई प्राप्त होती है। इस अवस्था में केवल मन ही नहीं समझता, अपितु हृदय भी भावना से स्पन्दित होने लगता है। अतः संगीत में अधिक गहराई तथा व्यापकता है और इसी लिए इसको सभी कलाओं में अग्रिम स्थान प्राप्त है। ईश्वर-साक्षात्कार के लिए यह सबसे सरल, सबसे निश्चित, मधुर तथा सर्वोत्तम साधन है।

संगीत गायक तथा श्रोता दोनों को आनन्द प्रदान करता है। यह उन्नत भावनात्मक आनन्द देता है तथा सबों में शुद्ध भावना के प्रस्फुटन द्वारा भावसमाधि का सञ्चार करता है। संगीत का सुख सार्वभौमिक है। यदि कोई जापानी अपनी भाषा में अपने विशेष वाद्ययन्त्रों द्वारा संगीत गावे अथवा बजावे तो उसके एक शब्द को भी नहीं समझते हुए भी अथवा वाद्ययन्त्र से अपरिचित होते हुए भी अंग्रेज संगीत का आनन्द ले सकता है और उसी प्रकार एक जर्मन भारतीय संगीत से आनन्द ले सकता है; परन्तु साहित्य के विषय में ऐसी बात नहीं है। साहित्य में भाषा का बन्धन है। अंग्रेजी भाषा जानने

वाले ही अंग्रेजी साहित्य से आनन्द ले सकते हैं। फ्रेंच भाषा जानने वाले ही फ्रेंच साहित्य से लाभ उठा सकते हैं।

संगीत दिव्य है। यह मनुष्य को ईश्वर के सन्निकट लाता है। यह स्वतः ईश्वर ही है। हम इसे नादब्रह्म कहते हैं। संगीत ब्रह्म का प्रतीक है। साधना के रूप में हम इसे नाद-उपासना कहते हैं। विद्या की देवी सरस्वती अपने हाथों में वीणा धारण करती है। वीणा नाद का प्रतीक है। इस वीणा से ॐ की अमर-ध्वनि सञ्चरित होती है। भगवान् कृष्ण अपने हाथों में बाँसुरी लिए हुए हैं। यह बाँसुरी भी प्रतीकात्मक है; क्योंकि इससे आत्मसंगीत का सृजन होता है। मीरा, गौरांग, सूरदास, कबीरदास, रामदास, तुकाराम, त्यागराज तथा अन्य अनेक सन्तों ने संगीत द्वारा ही ईश्वर-साक्षात्कार प्राप्त किया।

संगीत सबों के हृदय को द्रवित करता है। यह दिव्य स्पन्दनों का निर्माण करता है जो शनैः शनैः जीवात्मा को परमात्मा से मिला देते हैं। यही आध्यात्मिक साधनाओं का लक्ष्य है। सगीत द्वारा मानव जीवन का चरम लक्ष्य सुगमतया प्राप्त किया जाता है।

ईश्वर के अमृतमय नाम तथा उसकी महिमा का यदि उपयुक्त साधनों के द्वारा गान किया जाय तो इससे हृदय शुद्ध होता है, सांसारिक कष्टों की ज्वालाएं बुझ जाती हैं तथा मनुष्य जन्म-मृत्यु के चक्र से मुक्त हो जाता है। यह मनुष्य को श्रेय

मार्ग से ले जाकर ज्ञान प्रदान करता है, ईश्वरीय कृपा का सञ्चार करता है तथा गायक एवं श्रोता दोनों को ईश्वरीय योग प्राप्ति के लिए समर्थ बनाता है।

इस दृष्टि से परम पूज्य स्वामी शिवानन्द जी महाराज संगीत को योग का स्थान देते हैं। वह भजन तथा कीर्तन को प्रोत्साहन देते हैं जिससे मनुष्य शीघ्र ही आध्यात्मिक उन्नति प्राप्त कर सके। योग-वेदान्त आरण्य अकादमी में संगीत का एक विभाग है, जिसमें संगीत में रुचि रखने वाले साधकों को सहायता दी जाती है तथा जीवन में प्रेरणा एवं शान्ति की प्राप्ति के इस अनुपम साधन को सीखने के लिए प्रोत्साहित किया जाता है। पूर्व तथा पश्चिम देशों के बहुत से साधक संगीत तथा वाद्य में यहाँ प्रशिक्षित हुए हैं।

महानारायण

सहस्रशीर्षं देवं विश्वाक्षं विश्वशं भुवम् । विश्वं नारायणं देवमक्षरं परमं पदम् । विश्वतः परमान्नित्यं विश्वं नारायणँ हरिम् । विश्वमेवेदं पुरुषस्तद्विश्वमुपजीवति । पतिं विश्वस्यात्मेश्वरँ शाश्वतँ शिवमच्युतम् ! नारायणं महाज्ञेयं विश्वात्मानं परायणम् । नारायणपरो ज्योतिरात्मा नारायणः परः । नारायणपरं ब्रह्म तत्त्वं नारायणः परः । नारायणपरो ध्याता ध्यानं नारायणः परः । यच्च किञ्चिज्जगत्सर्वं दृश्यते श्रूयतेऽपि वा । अन्तर्बहिश्च तत्सर्वं व्याप्य नारायणः स्थितः । अनन्तमव्ययं कविँ समुद्रेऽन्तं विश्वशंभुवम् । पद्मकोशप्रतीकाशँ हृदयं चाप्यधोमुखम् । अधो निष्ट्या वितस्त्यान्ते नाभ्यामुपरि तिष्ठति । ज्वालमालाकुलं भाति विश्वस्यायतनं महत् । सन्ततँ शिलाभिस्तु लम्बत्याकोशसन्निभम् । तस्यान्ते सुषिरँ सूक्ष्मं तस्मिन्सर्वं प्रतिष्ठितम् । तस्य मध्ये महानग्निर्विश्वार्चिर्विश्वतोमुखः । सोऽग्रभुग्विभजन्तिष्ठन्नाहारमजरः कविः । तिर्यगूर्ध्वमधश्शायी रश्मयस्तस्य सन्तता । सन्तापयति स्वं देहमापादतलमस्तगः । तस्य मध्ये वह्निशिखा अणीयोर्ध्वा व्यवस्थितः । नीलतोयदमध्यस्थाद्विद्युल्लेखेव भास्वरा । नीवारशूकवत्तन्वी पीता भास्वत्य-

णूपमा। तस्याः शिखाया मध्ये परमात्मा व्यवस्थितः। स ब्रह्म स शिवः स हरिः सेन्द्रः सोऽक्षरः परमः स्वराट् ॥

ऋत ँ्‌ सत्यं परं ब्रह्म पुरुषं कृष्णपिङ्गलम्। ऊर्ध्वरेतं विरूपाक्षं विश्वरूपाय वै नमो नमः॥

नारायणाय विद्महे वासुदेवाय धीमहि। तन्नो विष्णुः प्रचोदयात्।

विष्णोर्नुकं वीर्याणि प्रवोचं यः पार्थिवानि विममे रजा ँ्‌सि यो अस्कभायदुत्तर ँ्‌सधस्थं विचक्रमाणस्त्रेधोरुगायो विष्णो रराटमसि विष्णोः पृष्ठमसि विष्णोः श्नप्त्रे स्थो विष्णोस्स्यूरसि विष्णोर्ध्रुवमसि वैष्णवमसि विष्णवे त्वा॥

॥ ॐ शान्तिः शान्तिः शान्तिः॥

सूचीपत्र

पृष्ठ संख्या

४. श्री सुब्रह्मण्य स्तोत्रम्

५. श्री हरिहर पुत्र स्तोत्र

६. श्री हनुमत् स्तोत्रम्

७. भक्तों को उपदेश

पृष्ठ संख्या

८. श्री राम स्तोत्रम्

९. श्री कृष्ण स्तोत्रम

पृष्ठ संख्या

१०. श्री विष्णु स्तोत्रम्

११. श्री देवी स्तोत्रम

पृष्ठ संख्या

१२. श्री शिवस्तोत्रम्

१३. वेदान्तिक गीत

१४. मङ्गल गान

१५. शान्ति मन्त्र

१६. सर्वं ब्रह्मार्पणम्

१७. भारत माता

वरिष्ठ विद्यार्थी, एक विशेष अवसर पर

जिस समय श्रीमती शिवानन्द मार्गरीटा के नेतृत्व में स्विस पार्टी का शिवानन्दाश्रम में आगमन हुआ था, वीणा बजा रहे हैं। (बायें से दायें) स्वामी वेंकटेशानन्द, स्वामी माधवानन्द, स्वामी शान्तानन्द, स्वामी विद्यानन्द (वीणा-विद्या-गुरु), स्वामी शिवानन्द-हृदयानन्द, स्वामी उमाशङ्करानन्द (जर्मनी) तथा श्रीमती कल्याणी नानिक (हांगकांग)।

शिवानन्दाश्रम भजनावली

१–प्रार्थना और श्री गणेश स्तोत्र

१

मंगलं दिशतु मे विनायको और जय गणेश

श्लोक

मंगलं दिशतु मे विनायको
मंगलं दिशतु मे सरस्वती ।
मंगलं दिशतु मे महेश्वरी
मंगलं दिशतु मे सदाशिवः ॥
गुरुर्ब्रह्मा गुरुर्विष्णु गुरुर्देवो महेश्वरः ।
गुरुः साक्षात् परब्रह्म तस्मै श्री गुरवे नमः ॥
सर्वमंगल मांगल्ये, शिवे सर्वार्थ साधिके ।
शरण्ये त्र्यम्बके गौरि नारायणि नमोऽस्तुते ॥
लोकाः समस्ताः सुखिनो भवन्तु ।

अर्थ

श्री गणेश हमारा मंगल करे, श्री सरस्वती देवी हमारा मंगल करे, श्री महेश्वरी देवी हमारा मंगल करे, श्री सदाशिव हमारा मंगल करे।

गुरु ब्रह्मा है, गुरु ही विष्णु है, गुरु भगवान् शिव है, गुरु ही परब्रह्म है, उस गुरु को नमस्कार।

हे पार्वती देवी, हे शिवपत्नी, सम्पूर्ण पुरुषार्थों को सिद्ध करने वाली, मगल प्रदान करने वाली, भक्तों की रक्षा करने वाली, तीन नेत्रों वाली माँ दुर्गे ! तुम्हें नमस्कार है।

सम्पूर्ण विश्व सुखी हों !

❀ ❀ ❀

१—जय गणेश जय गणेश जय गणेश पाहि माम्।
श्री गणेश श्री गणेश श्री गणेश रक्ष माम्॥

२—जय सरस्वती जय सरस्वती श्री सरस्वती पाहि माम्।
श्री सरस्वती श्री सरस्वती श्री सरस्वती रक्ष माम्॥

३—सद्गुरु जय सद्गुरु जय सद्गुरु जय पाहि माम्।
सद्गुरु जय सद्गुरु जय सद्गुरु जय रक्ष माम्॥

४—राम गुरु जय राम गुरु जय राम गुरु जय पाहि माम्।
राम गुरु जय राम गुरु जय राम गुरु जय रक्ष माम्॥

५—श्याम गुरु जय श्याम गुरु जय श्याम गुरु जय पाहि माम्।
श्याम गुरु जय श्याम गुरु जय श्याम गुरु जय रक्ष माम्॥

६—ओं गुरु जय ओं गुरु जय ओं गुरु जय पाहि माम्।
ओं गुरु जय ओं गुरु जय ओं गुरु जय रक्ष माम्॥

७—राजराजेश्वरी राजराजेश्वरी राजराजेश्वरी पाहि माम्।
राजराजेश्वरी राजराजेश्वरी राजराजेश्वरी रक्ष माम्॥

८—शरवणभव शरवणभव शरवणभव पाहि माम्।
सुब्रह्मण्य सुब्रह्मण्य सुब्रह्मण्य रक्ष माम्॥

९–वेल मुरुगा वेल मुरुगा वेल मुरुगा पाहि माम् ।
वेलायुधा वेलायुधा वेलायुधा रक्ष माम् ॥

१०–आंजनेय आंजनेय आंजनेय पाहि माम् ।
हनुमन्त हनुमन्त हनुमन्त रक्ष माम् ॥

११–आदित्याय आदित्याय आदित्याय नमः ओ३म् ।
भास्कराय भास्कराय भास्कराय नमः ओ३म् ॥

१२–गंगा रानी गंगा रानी गंगा रानी पाहि माम् ।
भागीरथी भागीरथी भागीरथी रक्ष माम् ॥

१३–हरे राम हरे राम राम राम हरे हरे ।
हरे कृष्ण हरे कृष्ण कृष्ण कृष्ण हरे हरे ॥

१४–नमः शिवाय नमः शिवाय नमः शिवाय पाहि माम् ।
नमः शिवाय नमः शिवाय नमः शिवाय रक्ष माम् ॥

१५–ओं शक्ति ओं शक्ति ओं शक्ति पाहि माम् ।
ब्रह्म शक्ति विष्णु शक्ति शिव शक्ति रक्ष माम् ॥

१६–इच्छा शक्ति क्रिया शक्ति ज्ञान शक्ति पाहि माम् ।
आदि शक्ति महा शक्ति परा शक्ति रक्ष माम् ॥

१७–सर्वनाम सर्वरूप सर्वेश पाहि माम् ।
सर्वनाम सर्वरूप सर्वेश रक्ष माम् ॥

१८–ओं तत्सत् ओं तत्सत् ओं तत्सत् ओं ।
ओं शान्तिः ओं शान्तिः ओं शान्तिः ओं ॥

महामन्त्र

हरे राम हरे राम राम राम हरे हरे ।
हरे कृष्ण हरे कृष्ण कृष्ण कृष्ण हरे हरे ॥

२

मुदा करात्तमोदकम्

(श्री शंकराचार्य कृत)

श्लोक

ओं ओं ओंकाररूपं त्वहमिति च परं यत्स्वरूपं तुरीयम् ।
त्रैगुण्यातीतनीलं कलयति मनसः तेजसिंदूरमूर्तिम् ॥
योगीन्द्रैः ब्रह्मरंध्रैः सकलगुणमयं श्री हरेन्द्रेण संगम ।
गं गं गं गं गणेशं गजमुखमभितो व्यापकं चिन्तयंति ॥

अर्थ

अपने मन में सोचो कि मैं वही ओंकार रूप हूँ जो परम है, तुरीय स्वरूप है, त्रिगुणातीत है, जो कुशल और सुन्दर है, जिस गजमुख गणेश का ध्यान योगिश्रेष्ठ अपने ब्रह्मरंध्र के द्वारा किया करते हैं, जो शिव और इन्द्र के सहित है, जिसका बीजाक्षर गं है और जो सर्वत्र व्यापक है ।

गीत

मुदा कराक्तमोदकं सदा विमुक्तिसाधकं
कलाधरावतंसकं विचित्रलोकरक्षकम्
अनायकैकनायकं विनाशितेभदैत्यकं
नताशुभप्रणाशकं नमामि तं विनायकम् ॥१॥

नतेतरातिभीकरं नवोदितार्कभास्वरं
नमत्सुरारिनिर्जरं नताधिकापदुद्धरम्
सुरेश्वरं निधीश्वरं गजेश्वरं गणेश्वरं
महेश्वरं तमाश्रये परात्परं निरंतरम् ॥२॥

समस्तलोकशंकरं निरस्तदैत्यकुंजरं ।
दरेतरोदरं वरं वरेभवक्त्रमक्षरम्
कृपाकरं क्षमाकरं मुदाकरं यशस्करं
मनस्करम् नमस्कृतं नमस्करोमि भास्वरम् ॥३॥

अकिंचनार्तिमार्जनं चिरंतनोक्तिभाजनं
पुरारिपूर्वनन्दनं सुरारिगर्वचर्वणम्
प्रपंचनाशभीषणं धनंजयादि भूषणं
कपोलदानवारणं भजे पुराणवारणम् ॥४॥

नितांतकांतिदंतकं तमन्तकान्तकात्मजं
अचिंत्यरूपमन्तहीनमन्तरायकृन्तनम्
हृदन्तरे निरंतरं वसन्तमेव योगिनं
तमेकदन्तमेव तं विचिन्तयामि संततम् ॥५॥

महागणेश पंचरत्न मादरेण योऽन्वहं
प्रजल्पति प्रभातके हृदि स्मरन् गणेश्वरम्
अरोगतामदोषतां सुसाहितीं सुपुत्रतां
समाहितायुरष्टभूतिमभ्युपैति सोऽचिरात् ॥६॥

अर्थ

मैं उस गणेश को प्रणाम करता हूँ जो प्रसन्नता के साथ मोदक धारण किये हुए है, मोक्ष का दाता है, जिसके मस्तक पर चन्द्रमा है, जो विचित्र ढंग से लोकरक्षण करता है, जहाँ कोई नायक न हो तो जो नायक हो जाता है, जिसने गजासुर का संहार किया है, जो शरणागत लोगों का अमंगल दूर करता है।

मैं उस परात्पर गणेश की शरण में सर्वदा जाता हूँ जो शत्रुओं के लिए महा भयानक है, जिसकी कांति प्रातःकालीन सूर्य के समान है, जिसे देवता और राक्षस सभी प्रणाम करते हैं, प्रणाम करने वालों को जो सारी विपत्तियों से बचाता है, जो देवताओं का भी स्वामी है, सारी सम्पत्ति का, हाथियों का तथा देवताओं का स्वामी है और साक्षात् महेश्वर भी है।

उस विनायक को मैं प्रणाम करता हूँ जो सारे लोकों का कल्याण करने वाला है, गज-राक्षस का जिसने संहार किया है, जिसका पेट बड़ा है, जो उत्तम है, गजवदन है, शाश्वत है, कृपा, क्षमा, संतोष, कीर्ति, मान्यता आदि का जो देने वाला है, जो अत्यन्त तेजस्वी है।

मैं उस सनातन गणेश जी का भजन करता हूँ जो दीन जनों का दुःख दूर करता है, जो सनातन कहे जाने के योग्य है, जो श्री शिव भगवान् का ज्येष्ठ पुत्र है, जो राक्षसों का गर्व चूर करता है, प्रलय-काल में जो अति भयंकर है, धनंजय आदि भक्तों के लिए जो आभूषण

रूप है और जिसके कपोल से मद जल प्रस्रवित होता रहता है।

मैं उस विनायक का चिंतन करता हूँ जो काल के काल का पुत्र है (शिव जी ने यम को जीता था), जिसके दाँत अत्यन्त प्रकाशमान हैं, जो अवर्णनीय रूपवान् है, अनंत है, विघ्न नाशक है, योगियों के हृदय में सर्वदा निवास करता है।

जो प्रतिदिन प्रातःकाल श्री गणेश जी का स्मरण करते हुए इस गणेश-पंचक का पारायण करता है उसे आरोग्य लाभ होगा, उसका पाप क्षय होगा, उसको संतान, दीर्घायुष्य और अष्टसिद्धियों की प्राप्ति होगी।

नामावली

जय गणेश जय गणेश जय गणेश पाहि माम्।
श्री गणेश श्री गणेश श्री गणेश रक्ष माम्॥

श्री सरस्वती स्तोत्रम्

३

श्री सरस्वति नमोऽस्तुते

(श्री दीक्षित कृत)

श्लोक

या कुन्देन्दुतुषारहारधवला या शुभ्रवस्त्रावृता
या वीणावरदण्डमण्डितकरा या श्वेतपद्मासना।

या ब्रह्माच्युतशंकरप्रभृतिभि र्देवैः सदा पूजिता
सा मां पातु सरस्वती भगवती निःशेष जाड्यापहा ॥

अर्थ

देवी सरस्वती मेरी रक्षा करे जो कुन्द पुष्प की तरह, चन्द्रमा की तरह, हिम बिन्दु की तरह धवल है, जिसने शुभ्र वस्त्र धारण किया है, जिसके हाथ वीणा से सुशोभित हैं, जो श्वेत पद्म पर विराजमान है, जो सर्वदा ब्रह्मा, विष्णु, महेश आदि देवों से पूजित है, तथा जो समस्त जड़ता का नाश करने वाली है।

गीत

श्री सरस्वति नमोऽस्तुते ।
वरदे, परदेवते ।
श्रीपति गौरीपति गुरु गुहविनुते विधियुवते ।
वासनात्रयविवर्जित वर मुनि भावित मूर्ते ।
वासवाद्यखिलनिर्जर वर वितरण बहुकीर्ते ।
दरहासयुतमुखाम्बुरुहे अद्भुत चरणाम्बुरुहे ।
संसारभीत्यापहे सकल मंत्राक्षरगुहे ।

अर्थ

हे देवी सरस्वती, वर प्रदान करने वाली, परम देवते, तुझे नमस्कार।

विष्णु, शंकर, गुरु तथा गुह तेरा गुणगान करते हैं। तू ब्रह्मा की प्रेयसी है, तीनों प्रकार की वासनाओं से तू मुक्त है। तेरी मूर्ति की भावना श्रेष्ठ मुनिजन किया करते हैं। इन्द्र आदि देवताओं को वांछित वर देने की तेरी कीर्ति अपार है। तेरा मुखकमल मन्दस्मित युक्त है,

तेरे चरण-कमल अद्भुत हैं । तू संसारभय दूर करने वाली है, सभी मंत्रों का आधार तू ही है ।

नामावली

वीणा पुस्तक धारिणी अंबा,
वाणी जय जय पाहि माम् ।
शक्ति दायिनी पाहि माम् ।
भुक्ति दायिनी पाहि माम् ।
भक्ति दायिनी पाहि माम् ।
मुक्ति दायिनी पाहि माम् ।

४

दे मज दिव्य मती ।

(श्री रामदास कृतं)

श्लोक

१–सर्वरूपमयी देवी
सर्वं देवीमयं जगत् ।
अतोहं विश्वरूपां त्वां
नमामि परमेश्वरीम् ।
२–माणिक्यवीणामुपलालयन्तीं
मदालसां मंजुल वाग्विलासाम् ।

माहेन्द्रनीलद्युतिकोमलांगीं
मातंगकन्यां मनसा स्मरामि ॥

अर्थ

देवी सर्व रूपमयी है तथा यह विश्व देवीमय है। अतः हे विश्व रूपिणी परमेश्वरी ! मैं तुझे नमस्कार करता हूँ।

मैं मतंग मुनि की कन्या (सरस्वती देवी) का ध्यान करता हूँ जो मणिजटित वीणा बजा रही है, जिसकी भावभंगिमा रमणीय है, वाणी मधुर है तथा जिसके सुकुमार वदन की द्युति नील-मणि के समान है।

गीत

दे मज दिव्य मती सरस्वती।
दे मज दिव्य मती।
१–राम कथा बहु गूढ़ निरूपण
चालवी शीघ्र गती। दे मज……
२–ब्रह्मादिक देव पूजिती तुजला
प्रार्थनाहि करिती। दे मज……
३–रामदास म्हणे काय मला उणे
तू असता जगति। दे मज……

अर्थ

हे सरस्वती देवी, मुझे दिव्य ज्ञान दे।

१—भगवान् राम की परम मधुर तथा रमणीय कथा का द्रुत गति से वर्णन करने के लिए मुझे दिव्य ज्ञान दे।

२--ब्रह्मादिक देवगण भी इसके लिए तुझसे प्रार्थना करते हैं।

३ — 'रामदास' कहते हैं कि जब तक तू यहाँ है मुझे किसी वस्तु का अभाव नहीं है।

नामावली

वीणा पुस्तक धारिणी अम्बा,
वाणी जय-जय पाहि माम्।
शक्तिदायिनी पाहि माम्।
भुक्तिदायिनी पाहि माम्।
भक्तिदायिनी पाहि माम्।
मुक्तिदायिनी पाहि माम्।

५

सुवक्षोजकुम्भाम्

(श्री शंकराचार्य कृत)

श्लोक

सुरासुरासेवितपादपंकजा
करे विराजत्कमनीयपुस्तका।
विरिंचिपत्नी कमलासनस्थिता,
सरस्वती नृत्यतु वाचि मे सदा॥

अर्थ

हे ब्रह्मा की प्रेयसी, पद्मपुष्प पर आसीन, हाथ में सुन्दर पुस्तक धारण किये हुए, कमल के समान चरणों वाली तथा देवताओं और असुरों से पूजित देवी सरस्वती तू मेरी वाणी में नृत्य करे।

गीत

१–सुवक्षोजकुम्भां सुधापूर्णकुम्भां
प्रसादावलम्बां प्रपुण्यावलम्बाम्।
सदास्येन्दुबिम्बां सदानोष्ठबिम्बां
भजे शारदाम्बां अजस्रं मदम्बाम् ॥१॥

२–कटाक्षे दयार्द्रां करे ज्ञानमुद्रां
कलाभिर्विनिद्रां कलापैः सुभद्राम्।
पुरन्ध्रीं विनिद्रां पुरस्तुंगभद्रां
भजे ... ... ॥२॥

३–ललामांकफालां लसद्गानलोलां
स्वभक्तैकपालां यशश्रीकपोलां।
करे त्वक्षमालां कनद्रत्नलोलां
भजे ... ... ॥३॥

४–सुसीमन्तवेणीं दृशा निर्जितैणीं
रमत्कीरवाणीं नमद्वज्रपाणिम्।
सुधामन्थरास्यां मुदा चिन्त्यवेणीं
भजे ... ... ॥४॥

सुशान्तां सुदेहां दृगन्ते कचान्तां
लसत्सल्लतांगीं अनन्तां अचिन्त्याम् ।
स्मरेत्तापसैः सर्गपूर्वस्थितां तां
भजे ... ... ॥५॥

कुरंगे तुरंगे मृगेन्द्रे खगेन्द्रे
मराले मदेभे महोक्षेऽधिरूढाम् ।
महत्यां नवम्यां सदा सामरूपां
भजे ... ... ॥६॥

ज्वलत्कान्तिवह्निं जगन्मोहनांगीं
भजेन्मानसाम्भोज सुभ्रान्तभृंगीम् ।
निजस्तोत्रसंगीतनृत्यप्रभांगीं
भजे ... ... ॥७॥

भवाम्भोजनेत्राजसम्पूज्यमानां
लसन्मन्दहासप्रभावक्त्र चिह्नाम् ।
लसत्चंचलाचारु ताटंक कर्णां
भजे ... ... ॥८॥

अर्थ

मैं अपनी माँ श्री शारदा माता की नित्य आराधना करता हूँ। उसके वक्ष अमृत-कलश की भाँति सुन्दर हैं, उसका मुख चन्द्रमा के समान कमनीय है और उसके ओष्ठ दयार्द्र तथा विम्ब-फल की भाँति अरुण हैं।१।

मैं अपनी माँ श्री शारदा माता की नित्य आराधना करता हूँ।

वह तुंगभद्रा नदी के तट पर निवास करती है। उसकी दृष्टि करुणास्निग्ध है। उसके कर में ज्ञानमुद्रा है। वह कलाओं से प्रफुल्ल है। वह सिर पर भूषण धारण किये हुए शोभायमान है। वह पवित्र तथा सदा प्रसन्न रहने वाली है।२।

मैं अपनी माँ श्री शारदा माता की नित्य आराधना करता हूँ। उसके मस्तक में तिलक है। वह संगीत के आनन्द से दीप्तमान है। वह अपने भक्तों की रक्षा करती है। उसके कपोल यशश्री की भाँति सुन्दर हैं। वह अपने हाथों में माला धारण करती है और आभापूर्ण रत्नों से सुशोभित है।३।

मैं अपनी माँ श्री शारदा माता की नित्य आराधना करता हूँ। उसके मस्तक के मध्य में एक सुन्दर रेखा है। उसके सुन्दर नेत्र मृग के नेत्र को भी पराजित करने वाले हैं। उसकी वाणी बुलबुल के समान मधुर है। इन्द्र उसको नमस्कार करते हैं। उसका सुधापूर्ण मुख तथा वेणी ध्यान करने योग्य हैं।४।

मैं अपनी माँ श्री शारदा माता की नित्य आराधना करता हूँ। वह शान्त है। उसका शरीर मनोहर है। उनके नेत्रों के कोर पर बाल की लटें झूल रही हैं। उसका अंग लता के समान कोमल और कमनीय है। वह अनन्त और अचिन्त्य है। ऋषिगण उसके सम्मुख बैठे हुए उनका ध्यान करते हैं। ।५।

मैं अपनी माँ श्री शारदा माता की नित्य आराधना करता हूँ। वह सदा सामवेद के रूप में रहती है और नवमी महोत्सव के समय मृग, तुरंग, सिंह, गरुड़, हंस, मत्त गज तथा वृषभ पर आरूढ़ होती है।६।

मैं अपनी माँ शारदा की नित्य आराधना करता हूँ। उसके शरीर की कान्ति प्रज्वलित अग्नि के समान है। उसके अंग की शोभा

सम्पूर्ण विश्व को विमोहित करती है। वह अपने स्तोत्र, संगीत और नृत्य की आभा से प्रकाशित है और अपने आराधकों के कमल-रूपी मन में भृंग की भाँति विहार करती है।७।

मैं अपनी माँ श्री शारदा माता की नित्य आराधना करता हूँ। ब्रह्मा, विष्णु और शिव उसकी नित्य आराधना करते हैं। उसका मुख मन्द हास की ज्योति से प्रकाशित है। उसके कुण्डल दामिनी की भाँति सुन्दर एवं चंचल हैं।८।
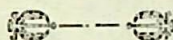
श्री गुरु स्तोत्रम्

६

विदिताखिल शास्त्रसुधाजलधे

(हस्तामलक कृतं)

श्लोक

पद्मासीनं प्रशान्तं यमनिरतं अनंगारितुल्य-प्रभावम् ।
फाले भस्मांकिताभं स्मितरुचिरमुखांभोजं इन्दीवराक्षम् ।
कंबुग्रीवं कराभ्यामविहतविलसत्पुस्तकं ज्ञानमुद्रम् ।
वन्द्यं गीर्वाणमुख्यैर्नतजनवरदं भावये शंकरार्यम् ।

अर्थ

मैं उन भगवान् शंकराचार्य जी का ध्यान करता हूँ जो पद्मासन लगाए बैठे हैं, प्रसन्न वदन हैं, यम में लीन हैं, जिनका प्रभाव कामारि भगवान् शिव के समान है, मस्तक पर भस्म धारण किये हुए हैं, जिनका मुख-कमल मंद हास से मनोहर है, जिनकी आँखें इन्दीवर पुष्प के समान हैं, जिनकी गर्दन शंख के समान है, जिनके हाथों में निरन्तर पुस्तक सुशोभित रहती है, जो ज्ञानमुद्रा में हैं, देवताओं के प्रमुख भी जिनकी वन्दना करते हैं और जो भक्तजनों को वरदान देते हैं।

———

गीत

विदिताखिलशास्त्रसुधाजलधे
महितोपनिषत्कथितार्थनिधे ।
हृदये कलये विमलं चरणं
भव शंकरदेशिक मे शरणम् ॥१॥

करुणावरुणालय पालय मां
भवसागर दुःख विदूनहृदम् ।
रचिताखिलदर्शनतत्त्वविदं
भव शंकरदेशिक मे शरणम् ॥२॥

भवता जनता सुखिता भविता
निजबोधविचारणचारुमते ।
कलयेऽश्वरजीवविवेकविदं
भव शंकरदेशिक मे शरणम् ॥३॥

मम एव भवानिति मे नितरां
समजायत चेतसि कौतुकिता ।
मम वारय मोहमहाजलधिं
भव शंकरदेशिक मे शरणम् ॥४॥

सुकृतेऽधिकृते बहुधा भवतो
भविता पददर्शनलालसता ।
अतिदीनमिमं परिपालय मां
भव शंकरदेशिक मे शरणम् ॥५॥

जगतीमवितुं कलिताकृतयो
विचरन्ति महामहसश्चलिताः ।
अहिमांशुरिवात्र विभासि पुरो
भव शंकरदेशिक मे शरणम् ॥६॥

गुरुपुंगव पुंगवकेतन ते
समतामयतां न हि कोऽपि सुधीः ।
शरणागतवत्सल तत्त्वनिधे
भव शंकरदेशिक मे शरणम् ॥७॥

विदिता न मया विशदैककला
न च किंचन काञ्चनमस्ति गुरो ।
द्रुतमेव विधेहि कृपां सहजां
भव शंकरदेशिक मे शरणम् ॥८॥

अर्थ

हे पूज्यपाद शंकर, समस्त शास्त्र-रूपी अमृतसागर के आप ज्ञाता हैं, पूजनीय उपनिषदों के अर्थ-रूपी निधि को आपने (संसार के सामने) कहा है। आपके विशुद्ध चरणों को मैं अपने हृदय में धारण करता हूँ। हे आचार्य, आप मुझे शरण दें ।१।

हे करुणासागर, संसार-सागर के दुःख से मेरा हृदय अत्यन्त पीड़ित है, मेरी आप रक्षा करें। आपने समस्त दर्शनों के तत्त्वों का सत्य उद्घाटित किया है। आप मुझे शरण दें ।२।

आपके कारण ही सारा संसार सुखी हो सकेगा। आप आत्मज्ञान की चर्चा में निष्णात हैं, आपकी बुद्धि कुशल है। आपने जीव और

ईश्वर के विवेक को पहचाना है। आपका मैं ध्यान करता हूँ। आप मुझे शरण दें ।३।

यह जानकर मुझे वड़ा आनन्द हुआ है कि आप साक्षात् भगवान् ही हैं। अव तक मेरे अन्दर महासागर के समान जो मोह रहा है वह आप दूर करें और मुझे शरण दें ।४।

वहुत काल से जव पुण्य-संचय होता है तभी आपके चरण-दर्शन की इच्छा उत्पन्न होती है। मैं अत्यन्त दीन हूँ। आप मेरी रक्षा करें। हे आचार्य शंकर, आप मुझे शरण दें ।५।

भूलोक की रक्षा करने के लिए आप के समान तेजस्वी आत्माएं मनुष्य-रूप धारण कर इधर-उधर घूमते रहते हैं। मेरे सामने आप सूर्य की तरह प्रकाशमान हैं। आप मुझे शरण दें ।६।

हे मेरे गुरु महाराज ! आप सारे गुरुओं में श्रेष्ठ हैं और ऐसा कोई विद्वान् नहीं है जो आपकी वरावरी कर सके। आप शरण में आये हुओं पर अत्यन्त कृपा रखते हैं। हे तत्त्वज्ञानी आचार्य, आप मुझे शरण दें ।७।

मुझे इस संसार में आपके अतिरिक्त कोई भी सम्पत्ति या निधि आपसे वढ़कर नहीं दिखी जिसका संचय किया जासके। अतः हे आचार्य, मुझ पर शीघ्र कृपा कीजिए। कृपा तो आपकी सहज वस्तु है। मुझे आप शरण दीजिए ।८।

नामावली

भव शंकरदेशिक मे शरणम् ।
भव शंकरदेशिक मे शरणम् ॥

७

देव देव शिवानन्द

(श्री हृदयानन्द कृतं)

श्लोक

मंगलं योगिवर्याय महनीयगुणाब्धये ।
गंगातीरनिवासाय शिवानन्दाय मंगलम् ॥

अर्थ

वह गुरु जो श्रेष्ठ योगियों में महान् हैं तथा दैवी गुणों के सागर हैं जो गंगा के तट पर निवास करते हैं, उन शिवानन्द का मंगल हो !

गीत

१–देव देव शिवानन्द दीनबन्धो पाहि माम् ।
चन्द्रवदन मन्दहास प्रेमरूप रक्ष माम् ॥
मधुर गीत गान लोल ज्ञान रूप पाहि माम् ।
समस्त लोक पूजितांग मोहनांग रक्ष माम् ॥

२–दिव्य गंगातीरवास दानशील पाहि माम् ।
पापहरण पुण्यशील परमपुरुष रक्ष माम् ॥
भक्तलोक-हृदयवास स्वामिनाथ पाहि माम् ।
चित्स्वरूप चिदानन्द नमः शिवाय रक्ष माम् ॥

अर्थ

१–शिवानन्द देवों के देव हैं, वे मेरी रक्षा करें। उनका मुख

चन्द्रमा के समान है, मुस्कान मधुर है, वे प्रेमस्वरूप हैं। मेरी रक्षा करें।

वे मधुर गीत गाने में प्रसन्नता प्राप्त करते हैं, ज्ञानस्वरूप हैं, वे मेरी रक्षा करें।

सभी प्राणियों के द्वारा वे पूजित हैं, उनके अंग मोहक हैं, वे मेरी रक्षा करें।

२–वे गंगा तट पर निवास करते हैं तथा दानशील हैं। वे मेरी रक्षा करें।

वे पाप को दूर करते हैं, सद्‌गुणों के आगार हैं, परम पुरुष हैं, वे मेरी रक्षा करें।

वे चैतन्य तथा आनन्द के स्वरूप हैं। उस शिव को नमस्कार हो। वे मेरी रक्षा करें।

नामावली

सद्‌गुरु जय सद्‌गुरु जय, सद्‌गुरु जय पाहि माम्।
सद्‌गुरु जय सद्‌गुरु जय, सद्‌गुरु जय रक्ष माम्॥

———

श्री सुब्रह्मण्य स्तोत्रम्

८

नाद विन्दु कलादि नमो नमः

(तिरुप्पुगल)

श्लोक

षडाननं कुंकुमरक्तवर्णं महामतिं दिव्यमयूरवाहनम् ।
रुद्रस्य सूनुं सुरसैन्यनाथं गुहं सदाऽहं शरणं प्रपद्ये ॥

अर्थ

मैं सदा भगवान् कार्तिकेय की शरण जाता हूँ, जो कुंकुमरक्तवर्ण वाले हैं, जिनमें असीम ज्ञान है, जिनका वाहन दिव्य मयूर है, जो भगवान शिव के पुत्र हैं तथा देवताओं की सेना के नायक हैं ।

गीत

१–नाद विन्दु कलादि नमो नमः ।
वेदमन्त्रस्वरूपा नमो नमः ।
ज्ञानपण्डितस्वामी नमो नमः ॥ (वहु कोटि)

२–नाम शम्भुकुमारा नमो नमः ।
भोग अन्तरिपाला नमो नमः ।
नागवन्ध मयूरा नमो नमः । (परशूर)

३–छेद दण्डविनोदा नमो नमः ।
गीत किंकिणि पादा नमो नमः ।
धीर सम्भ्रम वीरा नमो नमः ॥ (गिरिराजा)

४–दीपमंगल ज्योति नमो नमः ।
तूय अम्बल लीला नमो नमः ।
देवकुंजरि भागा नमो नमः ॥ (अरुल्ताराई)

अर्थ

१—उसको नमस्कार है जो शब्द, देश तथा काल से परे है। उसको नमस्कार है जो वेद मन्त्र स्वरूप है। उसको नमस्कार है जो ज्ञानियों का सम्राट् है।

२—उसको नमस्कार है जो शिव का पुत्र है। उसको नमस्कार है जो सारे भोगों तथा ऐश्वर्यों का आगार है। उसको नमस्कार है जो मयूर पर आसीन होकर भक्तों के वासनारूपी सर्पों को नष्ठ करता है।

३—उसको नमस्कार है जो प्राण के ऊपर नृत्य करता है। उसको नमस्कार है जिसके पैर में किंकिणि है। उसको नमस्कार है जो महान् वीर है तथा पर्वतों का राजा है।

४—उसको नमस्कार है जो दीप नैवेद्य आदि में वर्तमान है। उसको नमस्कार है जो पवित्र स्थल में नृत्य करता है। उसको नमस्कार है जिसके पास में देवयानी है। वह सुब्रह्मण्य हम पर कृपा तथा आनन्द की वृष्टि करे !

नामावली

सुब्रह्मण्य सुब्रह्मण्य सुब्रह्मण्य पाहि माम् ।
कार्तिकेय कार्त्तिकेय कार्तिकेय रक्ष माम् ॥

————

६

एन्तै-वरुक

गीत

१-एन्तै वरुक रघुनायक वरुक मन्त वरुक मकने इनिवरुक
येन् कण वरुक येन् तारुयिर्वरुक अभिराम
२-इंकु वरुक अरशे वरुक अन्नम् उएक वरुकमलर् चूडिडवरुक
येएड् परिविनोडु कोसलै पुकल वरुमायन्
३-चिन्तै मकिलुं मरुका कुरवरिलं
वंजि मरुवुं अलका अमरर् चिरै
चिन्त असुरर् किलैवेरोडू माडिय अतिधीरा
४-तिंगल अरवु नदि चूडिय परमर, तंत कुमर अलैये करै पोरुत
शेन्तिल नगरिल् इनिते मरुवि वलर् पेरुमाले ॥

अर्थ

१—मेरे पिता आओ, रघु के रत्न आओ।
हे मेरे पुत्र आओ, आओ।
मेरे प्रियतम आत्मा, हे पुत्र, मेरी आंख, आओ।

२—मेरे राजा यहाँ आओ।
तण्डुल खाओ, सिर पर फूलों को सजाओ।
इस तरह कौशल्या प्रेमपूर्वक बुलाती है।

३—जो अपने आत्मा से सुखी है, जिसने वल्ली को मोहित किया है, जिसने देवताओं की रक्षा की है। जिसने राक्षसों का संपूर्ण नाश किया है वह महान् वीर सुब्रह्मण्य आओ।

४—वह भगवान् शिव जिनके सिर पर चन्द्रमा, सर्प तथा गंगा है, जो भारतीय महासागर के तट पर हैं, उस प्रभु की जय हो !

१०

शरणागतमातुरमाधिजितम्

श्लोक

शक्तिहस्तं विरूपाक्षं शिखिवाहं षडाननम् ।
दारुणं रिपुरोगघ्नं भावये कुक्कुटध्वजम् ॥

अर्थ

मैं भगवान् षण्मुख का ध्यान करता हूँ जो अपने हाथों में शक्ति-अस्त्र को धारण किये हुए है, जिसके सूर्य, चन्द्र और अग्नि ये तीन नेत्र हैं, जो मोर की सवारी करता है, दुष्टों के लिए भयानक है, अपने भक्त के शत्रुओं और रोगों का विनाशक है तथा जिसकी ध्वजा पर कुक्कुट का चिन्ह अंकित है ।

स्तोत्रम्

शरणागतमातुरमाधिजितं
करुणाकर कामद कामहतम् ।
शरकाननसंभव चारुरुचे
परिपालय तारकमारक माम् ॥१॥

हरसारसमुद्भव हैमवती-
करपल्लवलालितकम्रतनो ।
मुरवैरिविरिंचिमुदम्बुनिधे
परिपालय तारकमारक माम् ॥२॥

गिरिजासुत सायकभिन्नगिरे
सुरसिन्धुतनूज सुवर्णरुचे ।
सुरसैन्यपते शिखिवाहन हे
परिपालय तारकमारक माम् ॥३॥

जय विप्रजनप्रिय वीर नमो
जय भक्तजनप्रिय भद्र नमः ।
जय देव विशाखकुमार नमः
परिपालय तारकमारक माम् ॥४॥

पुरतो भव मे परितो भव मे
पथि मे भगवन् भव रक्ष गतम् ।
वितराजिषु मे विजयं भगवन्
परिपालय तारकमारक माम् ॥५॥

शरदिन्दुसमानषडाननया
सरसीरुहचारुविलोचनया ।
निरुपाधिकया निजबालतया
परिपालय तारकमारक माम् ॥६॥

इति कुक्कुटकेतुमनुस्मरतां
पठतामपि षण्मुखषट्कमिमम् ।
नमतामपि नन्दनमिन्दुभृतो
न भयं क्वचिदस्ति शरीरभृताम् ॥७॥

अर्थ

मैं चिन्ताओं और कामनाओं से आक्रान्त हूँ। मैं तेरे चरण-कमल

की शरण लेता हूँ। तू दया के सागर, भक्तों की मनोकामनाओं को पूर्ण करने वाला, शेरों के वन में जन्म ग्रहण करने वाला तथा मनोहर है। हे तारकासुर के वध करने वाले कार्तिकेय, तू मेरा परिपालन कर ॥१॥

तू शिव जी के पुत्र है। माता पार्वती जी के कोमल हाथों से दुलारा गया है। तू ब्रह्मा और विष्णु के आनन्द का सागर है। हे तारकासुर के वध करने वाले कार्तिकेय, तू मेरा परिपालन कर ॥२॥

हे पार्वती पुत्र, तूने अपने बाणों से (क्रौंच) पर्वत को विदीर्ण कर डाला। तू गंगा जी का पुत्र है, स्वर्ण के समान कान्तिवाला है, देवताओं की सेना का अधिपति है और मोर की सवारी करता है। हे तारका-सुर के वध करने वाले कार्तिकेय जी, तू मेरा परिपालन कर ॥३॥

तेरी जय हो ! तुझे वेदज्ञ ब्राह्मण तथा भक्त प्रिय हैं। तू विशाख और कुमार नाम से प्रसिद्ध है। तुझको नमस्कार है। हे तारकासुर का वध करने वाले कार्तिकेय, तू मेरा परिपालन कर ॥४॥

हे भगवन् ! मेरे सम्मुख तथा चतुर्दिक तू उपस्थित रहे। मेरे मार्ग में तू सहायक बन और मेरी यात्रा सफल बनाए। हे तारकासुर का वध करने वाले कार्तिकेय, तू मेरा परिपालन कर ॥५॥

तेरे छः मुख शरच्चन्द्र के समान और नेत्र कमल के समान सुन्दर हैं। तू सभी प्रकार की परिच्छिन्नताओं से मुक्त चिरकुमार है। हे तारकासुर का बध करने वाले कार्तिकेय, तू मेरा परिपालन कर ॥६॥

जो कुक्कुट ध्वजाधारी भगवान् षण्मुख को स्मरण करते हैं, जो इन स्तोत्रों का पाठ करते हैं और शिव-पुत्र कार्तिकेय जी को नमस्कार करते हैं, उन्हें कहीं भी कोई भय नहीं प्राप्त होता ॥७॥

नामावली

सुब्रह्मण्य सुब्रह्मण्य सुब्रह्मण्य पाहि माम् ।
कार्तिकेय कार्तिकेय कार्तिकेय रक्ष माम् ॥

श्री हरिहर पुत्र स्तोत्र

११

पादारविन्द भक्त लोक पालनैकलोलुपम् ।

श्लोक

श्रितानन्द चिन्तामणि श्रीनिवासं ।
सदा सच्चिदानन्दपूर्णप्रकाशम् ।
उदारं सुदारं सुराधारमीशं ।
परंज्योतिरूपं भजे भूतनाथम् ॥

अर्थ

जो सर्व भूतों का नाथ है, आश्रितजनों के आनन्द के लिए चिन्तामणि रूप है, जो लक्ष्मी का आवासस्थान है, सर्वदा सत्, चित् और आनन्द के पूर्ण प्रकाश से युक्त है, जो उदार है, जिसकी पत्नी मंगल कारिणी है, जो देवताओं का आधार है, स्वामी है तथा परम ज्योति स्वरुप है, मैं उसकी आराधना करता हूँ ।

गीत

पदारविन्द भक्त लोक पालनैक लोलुपं ।
सदारपार्श्वमात्मजादि मोदकं सुराधिपम् ।
उदारमादि भूतनाथ मद्भुतात्म वैभवं ।
सदा रवीन्दुकुण्डलं नमामि भाग्यसम्भवंम् ॥१॥
कृपाकटाक्षवीक्षणं विभूतिवेत्र भूषणं ।
सुपावनं सनातनादि सत्य धर्म पोषणम् ।
अपार शक्ति युक्तमात्मलक्षणं सुलक्षणं ।
प्रभा मनोहरं हरीशभाग्यसंभवं भजे ॥२॥

मृगासनं वरासनं शरासनं महौजसम् ।
जगद्धितं समस्त भक्त चित्तरंग संस्थितम् ।
नगाधिराज राजयोग पीठ मध्यवर्तिनं ।
मृगांक शेखरं हरीशभाग्यसंभवं भजे ॥३॥
समस्त लोक चिन्तितप्रदं सदा सुखप्रदम् ।
समुत्थिता पदन्धकार कृन्तनं प्रभाकरम् ।
अमर्त्यनृत्यगीत वाद्यलालसं मदालसं ।
नमस्करोमि भूतनाथमादिधर्मपालकम् ॥४॥
चराचरान्तरस्थित प्रभा मनोहर प्रभो ।
सुरा सुरा र्चितांघ्रिपद्म युग्म भूतनायक ।
विराजमानवक्त्र भक्तमित्र वेत्रशोभित ।
हरीश भाग्यजात साधुपारिजात पाहि माम् ॥५॥

अर्थ

जो अपने चरणकमल की शरण लेने वाले भक्तजनों का पालन करने में ही लीन है, जिसके पार्श्व में उसकी पत्नी है, जो अपने बच्चे आदि को आनन्द देने वाला है, जो देवताओं का स्वामी है, उदार है, भूतमात्र का आदि स्वामी है, जिसका अपना वैभव अद्भुत है, जिसके कर्ण कुण्डल के रूप में सूर्य और चन्द्र हैं, उस विश्व के समस्त भाग्यों से सम्भूत देव को नमस्कार करता हूँ ।१।

जिसके अवलोकन में कृपा भरी हुई है, जो विभूति से तथा बेंत से विभूषित है, जो पवित्र है, सनातन सत्य, धर्म आदि का जो रक्षण करता है, जिसकी शक्ति अपार है, जिसका लक्षण आत्म-ज्ञान ही है, जिसका शरीर अच्छे लक्षणों से युक्त है, कान्ति के कारण जो मनोहर

है और जो विष्णु और शिव का, समस्त भाग्यों से जन्मा हुआ पुत्रहै, उस देव की आराधना करता हूँ ।२।

जो वाघ पर बैठा है, जिसका आसन श्रेष्ठ है, जिसके हाथ में बाण है, जिसका तेज महान् है, जो सारे जग का हित करने वाला है, सब भक्तों के चित्त में जो विराजमान है, पर्वत-श्रेष्ठ पर राजयोग करने वालों के बीच जो बसता है और जिसके मुकुट पर चन्द्र है, हरि और शिवका, समस्त भाग्यों से जन्मा हुआ जो पुत्र है, उस देव की आराधना करता हूँ ।३।

जो सारे संसार की इच्छा पूरी करता है, सर्वदा सुख देने वाला है, विपत्ति रूपी अन्धकार को नाश करने वाला है, प्रकाशमान है, देवताओं के नृत्य, गीत, वाद्य आदि के प्रति विशेष रुचि रखता है, आदि धर्म का पालन करता है, उस भूतनाथ को मैं प्रणाम करता हूँ ।४।

चर और अचर सृष्टि के अन्तस्थल में रहने वाले, कान्तियुक्त, शोभायमान, हे प्रभु ! देवताओं तथा असुरों द्वारा जिसके चरण-युगल धोये जाते हैं, ऐसे हे भूतनाथ, सुन्दरवदन, भक्तों के मित्र, बेंत से सुशोभित, हे हरि और शिव के पुत्र, साधुजनों के लिए पारिजात वृक्ष तुल्य देव ! मेरी रक्षा कर ।५।

नामावली

पूर्ण पुष्कल समेत भूतनाथ पाहि माम् ।

श्री हनुमत् स्तोत्रम्

१२

वन्दे सन्तं श्री हनुमन्तम्

यत्र यत्र रघुनाथ कीर्तनं, तत्र तत्र कृतमस्तकाञ्जलिम् ।
वाष्पवारिपरिपूर्ण लोचनं, मारुतिं नमत राक्षसान्तकम् ।।

अर्थ

जहाँ कहीं भी भगवान् का कीर्तन किया जाता है, वहाँ वायु-पुत्र हनुमान् उपस्थित रहते हैं, जो राक्षसों के लिये मृत्यु के समान हैं, आँखों में अश्रु भरकर तथा भक्ति से सिर नबाकर उन्हें प्रणाम करें।

१—वन्दे सन्तं श्री हनुमन्तं, रामदासममलं वलवन्तं ।

२—प्रेमरुद्धगलमश्रु वहन्तं, पुलकांकितवपुषा विलसन्तम् ।
रामकथामृत मधूनि पिवन्तं, परम प्रेम भरेण नटन्तं ।

३—सर्वं राममयं पश्यन्तं, राम राम इति सदा जपन्तं ।
सद्भक्तिपथं समुपदिशन्तं, विटठलवन्धं प्रतिसुखयन्तं ।

अर्थ

मैं श्री हनुमान् जी को नमस्कार करता हूँ जो भगवान् राम के अनन्य भक्त हैं, जो शुद्ध तथा सवल हैं ।१।

जिनका कण्ठ भक्ति से रुद्ध है, आँखों से अश्रुओं की धारा प्रवाहित हो रही है तथा जो रोमांच से पुलकित हो रहे हैं ।

जो मधु का पान करते हैं, भगवान् राम की कथा-रूपी मधुपान कर परम भक्ति के साथ नृत्य करते हैं ।२।

जो सव कुछ भगवान् राम के ही रूप में देखते हैं तथा जो सदा 'राम-राम' जप करते हैं ।

जो भक्ति-मार्ग-पथ-प्रदर्शन करते हैं, जो ईश्वर के साथ परम अनुरक्त हैं तथा जो सुख को प्रदान करने वाले हैं ।३।

नामावली

आंजनेय आंजनेय आंजनेय पाहिमाम् ।
हनुमन्त हनुमन्त हनुमन्त रक्ष माम् ।।

१३

जयति मंगलागार

(श्री तुलसीदास कृत)

श्लोक

मनोजवं　मारुततुल्यवेगं,
　　　　जितेन्द्रियं बुद्धिमतां वरिष्ठम् ।
वातात्मजं वानरयूथ-मुख्यम्,
　　　　श्री रामदूतं शिरसा नमामि ।।

अर्थ

मैं उस श्री रामदूत को अपने मस्तक से प्रणाम करता हूँ जो मन और वायु के समान गतिमान् है, जिसने इन्द्रियों पर काबू पा लिया है, जो समस्त बुद्धिमानों में श्रेष्ठ है, जो वायुपुत्र है और जो वानर-सेना का प्रमुख है ।

जयति　मंगलागार　संसार-भारापहार,
　　　　वानराकारविग्रहपुरारि ।
रामरोषानल ज्वालमाला मिषध्वान्तचर-
　　　　शलभसंहारकारि　।।१।।

जयति　मरुदंजना　मोद-मंदिर,
　　　　नतग्रीव सुग्रीवदुःखैकबंधो ।
यातुधानोद्धतक्रुद्धकालाग्निहर,
　　　　सिद्धसुरसज्जनानंद सिन्धो ।।२।।

जयति रुद्राग्रणि विश्ववंद्याग्रणि,
विश्वविख्यात भटचक्रवर्ति ।
सामगाताग्रणि कामजेताग्रणि,
रामहित रामभक्तानुवर्ति ।।३।।

जयति संग्रामजय रामसंदेशहर,
कौशलकुशलकल्याणभाषि ।
रामविरहार्कसंतप्तभरतादि नर—
नारि शीतल करण कल्पशशि ।।४।।

जयति सिंहासनासीन सीतारमण,
निरखि निर्भर हरष नृत्यकारी ।
राम संभ्राज शोभा सहित सर्वदा,
तुलसी मानस रामपुर-विहारी ।।५।।

अर्थ

हे हनुमान, तेरी जय हो ! तू मंगलों का घर है, (जन्म-मृत्यु) रूपी संसार के भार को हलका करने वाला है । तू स्वयं वानर वेषधारी भगवान् शिव है । तू श्री राम के क्रोध रूपी अग्निशिखा के मिस में राक्षस रूपी पतंगों का संहार करने वाला है ।१।

तेरी जय हो ! तू वायु और अंजना देवी के आनन्द का मन्दिर है । सुग्रीव के दुःख में, जिनका मस्तक झुक गया था, तू ही एकमात्र मित्र रहा है । तू क्षुब्ध राक्षसों के कालाग्नि सदृश क्रोध को मिटाने वाला और सिद्धपुरुषों, देवताओं और सज्जनों को आनन्द देने वाला महासागर है ।२।

तेरी जय हो ! एकादश रुद्रों में तू सर्वप्रथम है। विश्वभर में जितने भी पूजनीय हैं, उन सबों में तू उत्कृष्ट है। तू विश्वविख्यात योद्धाओं का सम्राट् है। सामवेद के गायकों और कामविजेताओं में भी तू प्रथम है और भगवान् रामचन्द्र का भला चाहने वाला तथा श्री राम के भक्तों का अनुयायी है ।३।

तेरी जय हो ! तू संग्रामों का विजेता है। श्री रामचन्द्र जी का संदेशवाहक है। अयोध्या में श्री राम के कुशल-समाचार पहुँचाने वाला है। भरत आदि नरनारी जन श्री राम के वियोग-रूपी सूर्य से संतप्त थे, तब उनको शीतलता पहुँचाने वाला कल्पतरु तू ही था ।४।

तेरी जय हो ! श्री सीताराम जब सिंहासन पर विराजमान हुए तब उन्हें देखकर आनन्द विभोर हो नृत्य करने वाला तू ही है। जिस प्रकार अयोध्या में श्री रामचन्द्र अपनी समस्त शोभा के साथ विराजमान हैं, उसी प्रकार तुलसीदास के मानस रूपी अयोध्या में तू सर्वदा विराजमान रहे ।५।

नामावली

श्रीरामदूत जय हनुमन्त पाहि माम् ।

अर्थ

श्री राम के दूत की जय हो। हे हनुमान, तू मेरी रक्षा कर।

भक्तों को उपदेश

१४

रे मन कृष्ण नाम कहि लीजे।

(श्री सूरदास कृत)

श्लोक

कृष्णानमेतत्पुनरुक्त शोभं
उष्णेतरांशोरुदयं मुखेन्दोः।
तृष्णाम्बुराशिं द्विगुणीकरोति
कृष्णाह्वयं किंचन जीवितं मे॥

अर्थ

वह अवर्णनीय शोभा, जिसे कृष्ण कहते हैं, मेरे जीवन का सर्वस्व है। चन्द्रमा की सस्मित किरणों से देदीप्यमान उसके मुखचन्द्र ने मेरी (मिलन) की पिपासा को और भी उद्दीप्त कर दिया है।

गीत

रे मन कृष्णनाम कहि लीजै।
गुरु के वचन अटल करि मानहिं,
साधु समागम कीजै ॥१॥ रे मन···
पढ़िये गुनिये भगति भागवत,
और कहा कथि कीजै॥
कृष्णनाम विनु जनम वादि है,

विरथा काहे जीजै ॥२॥ रे मन···

कृष्णनाम रस वह्यो जात है,

तृषावंत ह्वै पीजै ॥

सूरदास हरि सरन ताकिये,

जनम सफल करि लीजै ॥३॥रे मन···

अर्थ

हे मन, कृष्ण-नाम का उच्चारण कर ले।

गुरु के वचन को अटल समझ और सदा सत्संग करता रह।

श्रीमद्भागवत को ही पढ़ और उसका ही चिन्तन कर। उसके अतिरिक्त और कुछ बोल कर क्या करेगा ?

कृष्णनाम के विना यह जीवन निरर्थक है। फिर तू व्यर्थ ही क्यों जीता है ?

श्रीकृष्णनाम रूपी रस प्रवाहित हो रहा है। तू प्यासा बन कर खूब पान कर।

'सूरदास' कहते हैं कि हरि की शरण लेकर अपने जीवन को सार्थक बना ले।

नामावली

कृष्ण कृष्ण मुकुन्द जनार्दन ।
कृष्ण गोविन्द नारायण हरे ॥
अच्युतानन्द गोविन्द माधव ।
सच्चिदानन्द नारायण हरे ॥

१५

राम सुमिर राम सुमिर

(श्री गुरु नानक कृत)

श्लोक

आपदामपहर्तारं दातारं सर्वसम्पदाम् ।
लोकाभिरामं श्रीरामं भूयो-भूयो नमाम्यहम् ॥

अर्थ

मैं भगवान् श्री राम को वारम्बार नमस्कार करता हूँ जो सम्पूर्ण आपत्तियों को दूर करता है, अखिल सम्पत्तियों को प्रदान करता है और समस्त संसार को आनन्दित करता है ।

गीत

राम सुमिर राम सुमिर एहि तेरो काज है ।
माया कौ संग त्याग, हरि जू की सरन लाग
जगत सुख मान मिथ्या, झूठौ सब साज है ॥१॥
सुपने ज्यों धन पिछान, काहे पर करत मान
बारू की भीत तैसे, वसुधा कौ राज है ॥२॥
नानक जन कहत बात, विनसि जैहैं तेरो गात
छिन छिन करि गयो काल्ह, तैसे जात आज है ॥३॥

अर्थ

रे मन, श्री राम का स्मरण कर, श्री राम का स्मरण कर ।
माया का साथ छोड़ दे । भगवान् की शरण ग्रहण कर । जगत् के

सुख को मिथ्या समझ। यह सांसारिक ऐश्वर्य झूठा है। तू राम को स्मरण कर।१।

धन को स्वप्नवत् समझ। यह संसार एक वालू की दीवाल के समान (क्षणभंगुर) है। फिर तू किस पर अभिमान कर रहा है? तू राम का स्मरण कर।२।

नानक जी यह बात कह रहे हैं कि एक दिन तेरा शरीर नाश को प्राप्त होगा। पल-पल करके कल का दिन व्यतीत हो चला और उसी भाँति आज भी (पल-पल कर) व्यतीत हो जायगा। तू राम का स्मरण कर।३।

नामावली

राम राम राम सीता राम राम राम।

१६

राम राम राम राम एन्निरो

(श्री पुरन्दरदास कृत)

श्लोक

निखिलनिलयमंत्रं नित्यतद्वाक्यमंत्रं
भवकुलहरमंत्रं भूमिजाप्राणमंत्रम्
पवनजनुतमंत्रं पार्वतीमोक्षमंत्रं
पशुपतिनिजमंत्रं पातु मां राममंत्रम्॥

अर्थ

जो सभी घरों में मुखरित होता है, जो नित्य ब्रह्म का निदर्शन करता है, माता सीता जी का प्राणस्वरूप था, जो माँ पार्वती जी

का मोक्ष-मंत्र था, जो हनुमान जी द्वारा प्रशंसित है तथा जो भगवान् शिव जी का अपना मंत्र है—वह राम मंत्र मेरी रक्षा करे।

गीत

राम राम राम राम राम एन्निरो सीता
राम राम राम राम राम एन्निरो सीता।

१–नेमिदिंद भजिसुववर
कामितगल कोडुव नाम॥ राम......

२–कल्लिनंते इरुव जीव
निल्लदंते मरणव्याले
फुल्लनाभ कृष्णनेंवो
सोल्लु वायिगे ओदगदो॥ राम......

३–वातपित्तवेरडु सेरि
श्लेष्म वंदु ओदगिदाग
धातु कुंदिदाग
रघुनाथनेंदु ओदगदो॥ राम......

४–इहदल्लि इष्ट उंटु
परदल्लि सुखवुंटु
वर पुरंदर विठलन्न
स्मरण वायिगे ओदगदो॥ राम......

अर्थ

हे प्राणी! तू राम राम का उच्चारण कर। सीताराम सीताराम कह।

जो लोग नाम को नियमित रूप से पूजते हैं, नाम उन्हें वांछित फल प्रदान करता है ।१।

यह जीव जो इस शरीर से इतना आसक्त हो रहा है, मृत्यु का समय आ उपस्थित होने पर एक पल भी नहीं ठहरेगा। उस समय पद्मनाभि भगवान् कृष्ण का नाम मुख से नहीं निकलेगा ।।२।।

जब वात, पित्त और कफ घेर लेते हैं और प्राणशक्ति क्षीण पड़ जाती है, उस समय भगवान् रघुनाथ जी का नाम स्मरण करने का प्रयास व्यर्थ ही जाता है ।३।

जब मन में इहलौकिक जीवन के प्रति आसक्ति तथा पारलौकिक सुखों की एषणा बनी रहती है तो पुरन्दर विट्ठल का नाम मुख से नहीं निकलता है ।४।

नामावली

श्री राम राम राम
सीता राम राम राम ।।

१७

दिन नीके बीते जाते हैं

श्लोक

माता रामो मत्पिता रामचन्द्रः
स्वामी रामो मत्सखा रामचन्द्रः ।
सर्वस्वं मे रामचन्द्रो दयालुः
नान्यं जाने नैव जाने न जाने ।।

अर्थ

भगवान् रामचन्द्र मेरी माता है, मेरा पिता है, मेरा मालिक और मेरा मित्र भी राम ही है। वह दयानिधि रामचन्द्र ही मेरा सब कुछ है और उसको छोड़ कर मैं और किसी को विलकुल ही नहीं जानता।

गीत

दिन नीके बीते जाते हैं।
सुमिरन कर श्री रामनाम
तज विषय भोग अरु सर्व काम
तेरे संग चले नहिं एक दाम
जो देते हैं सो पाते हैं। दिन···
भाई बंधु अरु कुटुंब परिवारा
किसके हो तुम कौन तुम्हारा
किसके बल हरि नाम विसारा।
सब जीते जी के नाते हैं। दिन नीके···
लख चौरासी भरम के आये
बड़े भाग मानुष तन पाये
तिस पर भी नहिं करी कमाई
फिर पाछे पछताते हैं। दिन नीके···
जो तू लागे विषय-विलासा
मूरख फँसे मृत्यु की पासा
क्या देखे श्वासा की आसा
गये फेर नहिं आते हैं। दिन नीके...

अर्थ

भगवान् श्री रामचन्द्र के नाम का स्मरण कर। प्रापंचिक विषयों और कामनाओं को भूल जा। एक भी छदाम तेरे साथ चलने वाला नहीं है। जो कुछ देते हैं वे ही पाते हैं। दिन बराबर बीतते जा रहे हैं।

भाई, बन्धु, कुटुंब, परिवार ये सब नाते-रिश्ते तभी तक हैं जब तक तू जीवित है। अन्यथा तू किसका है और कौन तेरा है ? तू किसके बल पर उस हरि का नाम भूल गया है ? दिन बराबर बीतते जा रहे हैं।

चौरासी लाख योनियों में तू भटक चुका है। बड़े भाग्य से तूने यह मनुष्य शरीर पाया है । फिर भी (अगले जन्म के लिए) यदि तूने कुछ किया नहीं तो उसके लिए तुझे पछताना पड़ेगा। दिन बराबर बीतते जा रहे हैं ।

यदि तू प्रापंचिक विषय-भोगों के पीछे पड़ेगा तो तू हे मूर्ख, अपने ही गले में मौत का फंदा लगा लेगा। श्वास की क्या आस लगाये हुए है। याद रख, जो गया सो गया, फिर लौट कर आने वाला नहीं है, दिन बराबर बीतते जा रहे हैं ।

नामावली

श्री राम राम जय राजा राम।
श्री राम राम जय सीता राम ॥

१८

भजो रे भैया राम गोविन्द हरि

(विष्णु स्तुति)

(श्री कबीरदास कृत)

श्लोक

हरिर्हरति पापानि दुष्टचित्तैरपि स्मृतः।
अनिच्छन्नपि संस्पृष्टो दहत्येव हि पावकः॥

अर्थ

दुर्जन भी यदि भगवान् का स्मरण कर लें तो वे उनके पापों को दूर कर देते हैं। जैसे अनिच्छा पूर्वक भी यदि हाथ लग जाय तो अग्नि हाथ को जलाती ही है।

भजो रे भैया राम गोविन्द हरि।
जप तप साधन नहिं कछु लागत
खरचत नहि गठरी। भजो रे भैया…
संतत सम्पत सुख के कारण
जासो भूल परी। भजो रे भैया…
कहत कबीर राम न जा मुख
ता मुख धूल भरी। भजो रे भैया…

अर्थ

हे भाई, राम, गोविन्द और हरि का भजन करो। इसमें जप,

तपस्या आदि कोई भी साधन नहीं लगता और गाँठ से कुछ खर्च भी नहीं होता ।

जिसे तुम भूल गये हो वह नाम शाश्वत सुख और सम्पत्ति का कारण है।

कवीरदास कहते हैं कि जिस मुख में राम का नाम नहीं है उसका मुख मिट्टी से भरने योग्य है।

नामावली

राम गोविन्द हरि राम गोविन्द।

१६

सांग आफ एट्टीन इटीज़
(अठारह सद्गुणों का संगीत)

श्री राम, जय राम, जय जय राम ॐ।
श्री राम, जय राम, जय जय राम ओ३म् ।।
श्री राम जय राम जय जय राम ।

सिरिनिटी, रेगुलारिटि, अवसेन्स आफ वैनिटी
सिन्सेरिटी, सिंप्लिसिटी, वेरासिटी,
इक्वानिमिटि, फिक्सिटि, नान-इरिटिविलिटी,
अडाप्टिविलिटि, ह्यूमिलिटि, टेनासिटी,
इन्टेग्रिटि, नोविलिटि, मैगनानिमिटी,
चैरिटी, जेनरासिटी, प्यूरिटी ।
प्रैक्टिस डेली दीज़ एट्टीन इटीज़
यू विल सून अटेन इम्मौर्टैलिटी

ब्रह्मन इज़ दी वन्ली रियल इनटाइटी,
मिस्टर सो एण्ड सो इज़ ए फाल्स नान-इनटाइटी,
यू विल अवाइड इन इनफिनिटी एण्ड इटर्निटी,
यू विल विहोल्ड यूनिटी इन डायवर्सिटी,
यू कैन नाट अटेन दिस इन दि यूनिवर्सिटी,
वाइ ग्रेस आफ गुरु यू कैन अटेन इम्मौर्टैलिटी ।
श्री राम जय राम जय जय राम ॐ ।
श्री राम जय राम जय जय राम ॥

अर्थ

शम, नियमितता, निरभिमानिता,
सच्चाई, सरलता, आर्जवता,
अक्रोध, समत्व, स्थिरता,
अनुकूलता, नम्रता, संलग्नता,
पूर्णता, शिष्टता, उदारता,
दान, विशालता, शुद्धता,
अभ्यास करें ये अट्ठारह सद्गुण,
आप प्राप्त करेंगे अमरता,
ब्रह्म ही एकमेव है सत्,
सब नाम रूप हैं मिथ्या, असत्,
आप वास करेंगे नित्य असीमता में,
आप देखेंगे एकता अनेकता में,
आप इसे नहीं पा सकते विश्वविद्यालयों में,
परन्तु पा सकते हैं आप वह अमरता गुरु अनुकम्पा से ।
श्रीराम जय राम जय जय राम ॐ ।
श्रीराम जय राम जय जय राम ॥

२०

सांग आफ मेडीटेशन

ट्रुथ इज़ ब्रह्मन् (आब्सोल्यूट) ट्रुथ इज़ योर ओन सेल्फ
रियलाइज़ दिस ट्रुथ वी फ्री, वी फ्री, वी फ्री
राम राम राम राम राम राम
" " " " " "
" " " " " "
" " " " " " राम राम
यू मस्ट हैव ए प्योर माइण्ड इफ यू वाण्ट टु रियलाइज़,
प्रैक्टिस कर्मयोग (योग आफ ऐक्शन), वी प्योर,
वी प्योर, वी प्योर। राम……
यू कैन नाट इनज्वाय पीस आफ माइण्ड,
ऐण्ड कैन नाट प्रैक्टिस मेडीटेशन,
इफ यू आर पैशनेट, किल दिस लस्ट, किल दिस लस्ट।
राम…… ॥

वी रेगुलर इन योर मेडीटेशन,
ऐण्ड टेक सात्त्विक फूड,
यू विल हैव पीस आफ माइण्ड, दिस इज़ दी ट्रुथ;
दिस इज़ दी ट्रुथ। राम……

ह्वैन यू मेडीटेट आन हरि,
कीप हिज़ पिक्चर इन फ्रण्ट आफ यू,

लुक ऐट इट विद ए स्टेडी गेज़,
यू विल डेपलप कन्सेनट्रेशन । राम ····
इफ इविल थाट्स इएटर द माइएड,
डू नाट ड्राइव देम फोर्सिबिली,
सबस्टिच्यूट डिवाइन थाट्स, दे विल पास अवे,
दे विल पास अवे। राम·····
मेडीटेशन लीड्स टु नालेज, मेडीटेशन किल्स पेन,
मेडीटेशन ब्रिंग्स पीस, मेडीटेट, मेडीटेट, मेडीटेट ।
राम ···· ।
समाधि इज़ यूनियन विद गाड, दिस फालोज़ मेडीटेशन,
यू विल अटेन इम्मौर्टैलिटी, दिस इज़ मोक्ष,
दिस इज़ मोक्ष। राम ···· ।

अर्थ

सत्य है ब्रह्मन्, सत्य है तेरी आत्मा,
इस सत्य का करो साक्षात्कार, मुक्त वनो ।
राम राम राम राम राम राम
" " " " " "
" " " " " "
" " " " " " राम राम

यदि तुम चाहते हो साक्षात्कार, रखो शुद्ध मनस,
करो अभ्यास कर्मयोग, शुद्ध वनो, शुद्ध वनो, शुद्ध वनो । राम···
ध्यान में रहो नियमित, करो सात्त्विक आहार,

तुम पाओगे मन की शान्ति, यही है सत्य, यही है सत्य । राम·····
जब तुम करो हरि पर ध्यान, रखो चित्र अपने सामने,
देखो स्थिर दृष्टि से उस पर, इससे वढ़ेगी एकाग्रता । राम·······

यदि बुरे विचार मन में आयें, उन्हें बलपूर्वक न भगाओ,
दिव्य विचारों को प्रश्रय दो, वे चले जायेंगे, वे चले जायेंगे । राम····

ध्यान से होता ज्ञान, ध्यान से होता दुःख निदान,
ध्यान करता है शान्ति प्रदान, करो ध्यान, ध्यान ध्यान । राम·····

ध्यान के वाद लगती है समाधि, समाधि है ईश्वर से एकता,
तुम प्राप्त करोगे अमरता, यही है मोक्ष, यही है मोक्ष । राम·····

२१

सांग श्राफ़ इम्मोर्टैलिटी

राम राम राम राम राम राम राम राम ।
जय जय सीताराम ॥
राम राम राम राम राम राम राम राम ।
जय जय राधेश्याम ॥

टर्न दी गेज़, ड्रा दी इन्द्रियाज़, स्टिल दी माइण्ड,
शार्पेन दी इन्टलेक्ट,
चांट ॐ विद फीलिङ्ग, मेडीटेट ग्रान ग्रात्मा,
चांट राम विद फीलिङ्ग, मेडीटेट ग्रान सीताराम

ओ चिल्ड्रेन ग्राफ लाइट, विल यू ड्रिन्क नाट,
वोन्ट यू ड्रिन्क नाउ नैक्टर ग्राफ इम्मौर्टैलिटी,
राम राम राम राम ।

आल कर्माज़ आर वर्न्ट नाउ, यू हैव बीकम ए जीवन्मुक्त
दैट ब्लेस्ड स्टेट तुरीयातीत, नो वर्ड्स कैन डिस्क्राइब
ओ चिल्ड्रेन आफ लाइट......राम, राम राम।
ग्रास इज़ ग्रीन, रोज़ इज़ रेड ऐण्ड दी स्काई इज़ ब्लू।
वट दी आत्मा इज़ कलरलेस, फार्मलेस ऐण्ड गुनालेस टू।
ओ चिल्ड्रेन आफ लाइट.......राम राम राम।

लाइफ़ इज़ शार्ट, टाइम इज़ फ्लीटिंग,
दि वर्ल्ड इज़ फुल आफ मिज़रीज़,
कट दी नाट आफ अविद्या ऐण्ड ड्रिन्क दी स्वीट निर्वाणिक ब्लिस,
ओ चिल्ड्रेन आफ लाइट...राम राम राम...।
फील दी डिवाइन प्रज़ेन्स एवरी ह्वैर,
सी दी डिवाइन ग्लोरी आल राउण्ड,
देन डाइव डीप इन्टू दी डिवाइन सोर्स,
रियलाइज़ दी इनफाइनाइट ब्लिस।
ओ चिल्ड्रेन आफ लाइट .....राम राम........।
टू आसन, कुम्भक, मुद्रा, शेक दी कुण्डलिनी
देन टेक इट टु सहस्रार थ्रू चक्रास इन दी सुषुम्ना
ओ चिल्ड्रेन आफ लाइट .....राम राम.......।

अर्थ

राम, राम, राम, राम, राम, राम, राम, राम।
जय सीताराम।

राम, राम, राम, राम, राम, राम, राम, राम ।
जय जय राधेश्याम ।।

दृष्टि को मोड़ो, इन्द्रिय समेटो, मन को करो शान्त,
बुद्धि को करो तीव्र, भावना-सहित करो ॐ जप और करो आत्मा पर ध्यान ।

भावयुक्त करो राम का जप, करो सीताराम पर ध्यान ।।
हे ज्योति सन्तान ! आओ, पीओ, आओ, पीओ, करो अमृत सुधा का पान । राम, राम, राम...... ।

सारे कर्म हुए विनष्ट, तुम हो चुके जीवन्मुक्त ।
वह परम धाम तुरीयातीत शब्द जिसका नहीं कर सकते वर्णन
हे ज्योति सन्तान ! राम राम...... ।

घास हरित है, गुलाब है लाल और गगन है नील
परन्तु आत्मा है रंग रहित, रूप रहित और गुणातीत
हे ज्योति सन्तान...... राम राम......

जीवन है स्वल्प, समय है गतिमान, जगत है दुःखों से पूर्ण,
अविद्या ग्रन्थि को करो विनष्ट, पीओ मधुर निर्वाणिक आनन्द
हे ज्योति सन्तान...... राम राम राम......
करो आसन, कुम्भक, मुद्रा, हिलादो कुण्डलिनी को
फिर ले जाओ उसे सहस्रार को, सुषुम्ना स्थित चक्रों से होकर
हे ज्योति सन्तान...... राम राम......

श्री राम स्तोत्रम्

२२

शुद्ध ब्रह्म परात्पर राम

श्लोक

मङ्गलं रामचन्द्राय, महनीय गुणाब्धये ।
चक्रवर्ति तनूजाय, सार्वभौमाय मङ्गलम् ॥
मङ्गलं सत्यपालाय, धर्मसंस्थिति हेतवे ।
सीता मनोभिरामाय, रामचन्द्राय मङ्गलम् ॥

अर्थ

भगवान् राम का मंगल हो, जो सद्गुणों के सागर हैं, जो चक्रवर्ती राजा के पुत्र हैं, जो स्वयं सम्राट् हैं ।

भगवान् राम का मंगल हो, जो सत्य की रक्षा करते हैं, जो धर्म के संस्थापक हैं और देवी सीता के मन को आनन्द देने वाले हैं ।

बालकाण्ड

श्री राम जय राम जय जय राम ।
श्री राम जय राम जय जय राम ॥
श्री राम जय राम जय जय राम ।
श्री राम जय राम जय जय राम ॥
श्री राम जय राम जय जय राम ।
श्री राम जय राम जय जय राम ॥
श्री राम जय राम जय जय राम ।
श्री राम जय राम जय जय राम ॥

शुद्ध ब्रह्म परात्पर राम
कालात्मक परमेश्वर राम
शेषतल्प सुख निद्रित राम
ब्रह्माद्यमर प्रार्थित राम
चण्ड किरण कुल मण्डन राम
श्रीमद्दशरथ नन्दन राम
कौसल्या सुख वर्धन राम
विश्वामित्र प्रियधन राम
घोर ताटका घातक राम
मारीचादि निपातक राम
कौशिक मख संरक्षक राम
श्रीमदहल्योद्धारक राम
गौतम मुनि संपूजित राम
सुर मुनिवरगण संस्तुत राम
नाविक धावित मृदुपद राम
मिथिलापुर जन मोदक राम
विदेह मानस रञ्जक राम
त्र्यंबक कार्मुक भञ्जक राम
सीतार्पित वरमालिक राम
कृत वैवाहिक कौतुक राम
भार्गव दर्प विनाशक राम
श्रीमदयोध्या पालक राम

रघुपति राघव राजाराम
पतित पावन सीताराम
ईश्वर अल्ला तेरे नाम
सबको सन्मति दे भगवान् ॥

२३

रामचन्द्र रघुवीर

रामचन्द्र रघुवीर, रामचन्द्र रणधीर,
रामचन्द्र रघुनाथ, रामचन्द्र जगन्नाथ।
रामचन्द्र रघुराम, रामचन्द्र परंधाम,
रामचन्द्र मम बन्धो, रामचन्द्र दयासिन्धो ॥

२४

खेलति मम हृदये

श्लोक

जयतु जयतु मन्त्रं जन्म साफल्य मन्त्रं,
जनन मरण भेद क्लेश विच्छेद मन्त्रम्।
सकल निगम मन्त्रं सर्व शास्त्रैक मन्त्रं,
रघुपति निज मन्त्रं राम रामेति मन्त्रम् ॥

अर्थ

उस मन्त्र की जय हो, जो मानव जन्म को सफल बनाता है, जन्म मृत्यु भेद तथा क्लेश का समूल नाश करता है, जो सभी वेदों का मन्त्र है, वह एक मन्त्र जो सभी शास्त्रों में पाया जाता है, उस राम मन्त्र की जय हो !

गीत

खेलति मम हृदये—रामः खेलति मम हृदये,
मोह महार्णव तारणकारी, राग द्वेष मुखासुर मारी।
खेलति ·····।
शान्ति विदेह सुता सहचारी, दहरायोध्या नगर विहारी।
खेलति······।
परमहंस साम्राज्योद्धारी, सत्य ज्ञानानन्द शरीरी।
खेलति·······।

अर्थ

वह राम मेरे हृदय में खेलता है, वह मेरे हृदय में खेलता है।

वह प्राणी को मोह (अज्ञान) के महान् सागर से पार उतारता है, वह राग-द्वेषादि असुरों का संहार करता है।

जिसकी सहचरी शान्ति है, सीता है तथा जो अयोध्या नगर (हृदयाकाश) में विहार करता है।

जो परमहंसों के साम्राज्य का उद्धारक है तथा जिसका शरीर सत्त्व, ज्ञान तथा आनन्द है। (वह राम मेरे हृदय में खेलता है।)

नामावली

राम राम राम राम राम नाम तारकम्,
राम कृष्ण वासुदेव भक्ति मुक्ति दायकम्।
जानकी मनोहरं सर्व-लोक नायकम्,
शङ्करादि सेव्यमान पुण्य नाम कीर्तनम्॥

२५

प्रेम मुदित मन से कहो

१—प्रेम मुदित मन से कहो

राम राम राम श्री राम राम राम,

राम राम राम श्री राम राम राम,

२—पाप कटे दुःख मिटे, लेत राम नाम,

भव समुद्र सुखद नाव, एक राम नाम ॥ श्री राम……

३—परम शान्ति सुख निधान, दिव्य राम नाम,

निराधार को अधार, एक राम नाम ॥ श्री राम……

४—परम गोप्य परम इष्ट मन्त्र राम नाम,

सन्त हृदय सदा बसत, एक राम नाम ॥ श्री राम……

५—महादेव सतत् जपत दिव्य राम नाम,

काशी मरत मुक्ति करत, कहत राम नाम ॥ श्री राम……

६—माता-पिता बन्धु सखा सब ही राम नाम,

भक्त जनन जीवन धन, एक राम नाम ॥ श्री राम……

२६

शान्तमु लेक सौख्यमु लेदु

(श्री त्यागराज कृत)

गीत

शान्तमु लेक सौख्यमु लेदु । सारस दलनयन श्री राम ॥

शान्तमु……।

अनुपल्लवी

दान्तुनिकैन वेदान्तुनिकैन शान्तमु......।

चरणम

दार सुतुलु धन धान्यमुलुंडिन।
सारेकु जप-तप संपद कलिगिन। शान्तमु......।

आगम शास्त्र मुलन्नियु चदविन।
बागुगा सकल हृद्‌भावमु तेलिसिन।। शान्तमु ....।

यागादि कर्ममुलंनियु जेसिन।
भागवतुलनुचु वागुग पेरैन। शान्तमु......।

राजाधिराज श्री राघव त्यागराज।
राज विनुत साधु रक्षक तनकु।। शान्तमु ....।

अर्थ

शान्ति के विना सुख नहीं, हे कमल-लोचन भगवान् राम ! चाहे वह संयमी हो अथवा वेदान्ती।

यद्यपि आप के पास स्त्री-पुत्र हो, धन-धान्य हो तथा जप-तप हो।

यद्यपि आपने समस्त वेदों का अध्ययन कर लिया हो तथा सबों के हृदय को जान लिया हो।

यद्यपि आपने सारे त्यागमय कार्यों को कर लिया हो तथा प्रख्यात भगवद्भक्त ही बन गये हों।

हे त्यागराज ! सुनो, भगवान् राम की महिमा को सुनो, जो अपने भक्तों के परिपालक हैं।

२७

पिव रे राम रसम्

(श्री सदाशिव ब्रह्मेन्द्र कृत)

श्लोक

वैदेही सहितं सुरद्रुमतले हैमे महा मण्डपे,
मध्येपुष्पकमासने मणिमये वीरासने संस्थितम्।
अग्रे वाचयति प्रभञ्जन सुते तत्त्वं मुनिभ्यः परं,
व्याख्यान्तं भरतादिभिः परिवृतं रामं भजे श्यामलम्॥

अर्थ

मैं श्यामल राम की पूजा करता हूँ जो सीता सहित रत्न-जटित आसन पर पुष्पों से आभूषित वीरासन में संस्थित हैं, स्वर्ण-मण्डप के बीच में कल्पवृक्ष के नीचे वे भगवती सीता के सहित बैठे हैं, उनके समक्ष हनुमान् जी व्यख्यान दे रहे हैं तथा ज्ञानियों को परम तत्त्व का उपदेश दे रहे हैं और जो भगवान् राम, भरत आदि से परिवृत्त हैं।

गीत

पिव रे राम रसम् रसने, पिवरे राम रसम्।
दूरीकृत पातक संसर्गं पूरित नानाविध फलवर्गम्।
पिव रे……।
जनन मरण भयशोक विदूरं सकल शास्त्र निगमागम सारम्॥
पिव रे……।
परिपालित सरसिज गर्भाण्डं परम पवित्री कृत पाषण्डं।
पिव रे……।

शुद्ध परम हंसाश्रम गीतं शुक शौनक कौशिक मुख पीतम् ॥
पिब रे······।

अर्थ

राम नाम के रस का पान करो, हे मेरी जिह्वा ! राम नाम सुधा का पान करो।

जो पाप कलुष को नष्ट करता है तथा जो नाना प्रकार के फलों को प्रदान करता है। जो भय तथा जन्म-मृत्यु के शोकों को दूर करता है। जो सारे शास्त्र, निगम तथा आगमों का सार है।

जो ब्रह्माद्वारा रचित सारे लोकों की रक्षा करता है तथा जो नास्तिकों को भी धार्मिक बना डालता है।

जो परमहंसों के आश्रम में परमहंसों द्वारा गाया जाता है, जो शुक्र शौनक, कौशिक आदि के द्वारा पीया जाता है।

हे जिह्वे ! उसी राम-नाम-रूपी सुधा का पान कर।

नामावली

श्री राम जय राम जय जय राम।

२८

भज रे रघुवीरम्

(श्री सदाशिवब्रह्मेन्द्र कृतं)

श्लोक

श्री रामचन्द्र चरणौ मनसा स्मरामि,
श्री रामचन्द्र चरणौ वचसा गृणामि।
श्री रामचन्द्र चरणौ शिरसा नमामि,
श्री रामचन्द्र चरणौ शरणं प्रपद्ये ॥

अर्थ

श्री रामचन्द्र के चरणों का मन से ध्यान करता हूँ, वाणी से उन चरणों का गुणगान करता हूँ, मस्तक से उन चरणों को प्रणाम करता हूँ, और उन्हीं चरणों की शरण जाता हूँ।

गीत

भज रे रघुवीरम् मनसा,
भज रे रघुवीरम्।

१—अम्बुदडिम्भविडम्बन गात्रम्
अम्बुदवाहननंदनदात्रम्। भज रे......

२—कुशिकसुतार्पितकार्मुकवेदम्
बशिहृदयांबुजभास्करपादम् भज रे......

३—कुण्डलमण्डनमण्डितकर्णम्
कुण्डलिसंजक मद्भुतवर्णम् भज रे .....

४—दण्डित सुंदसुतादिकवीरम्
मण्डितमनुकुलमाश्रय शौरिम् भज रे......

५=परमहंसमखिलागम वेद्यम्
परमवेदमकुटप्रतिपाद्यम् भज रे.......

६—कालाम्भोधरकान्त शरीरम्
कौशिकशुकशौनकपरिवारम भज रे.......

७—कौसल्यादशरथ सुकुमारम्
कलिकल्मष भयगहनकुठारम् भज रे......

८—परमहंसहृत्पद्मविहारम्
प्रतिहतदशमुखवलविस्तारम् भज रे......

अर्थ

रघुकुल वीर श्रीराम का भजन कर।
रे मन, उस रघुवीर का भजन कर॥

उसका शरीर मेघ के समान श्याम है और देवेन्द्र पुत्र बलि का उसने संहार किया है ॥१॥

कुशिक पुत्र श्री विश्वामित्र से उसने धनुर्विद्या सीखी है और योगीजनों के हृदय रूपी कमल के लिए सूर्य किरणों के समान आनन्द देने वाला है ।२।

उसके कानों में सुन्दर केयूर सुशोभित हैं और उसने अद्भुत वर्ण वाले आदिशेष को अपना पलंग बनाया है ।३।

वह स्वयं परमहंस योगी है, अखिल वेद-शास्त्र का ज्ञाता है और वेदान्त और उपनिषदों से उसका वर्णन किया जाता है ।४।

सुंद राक्षस के पुत्र मारीच आदि को उसने दण्ड दिया है और चक्रवर्ती मनु के कुल को सुशोभित किया है ।५।

उसका शरीर कृष्ण मेघ के समान है और उसके परिजन विश्वामित्र, शुक, शौनकादि हैं ।६।

वह कौसल्या और दशरथ का प्रिय पुत्र है और कलियुग का जो महागहन पाप-भय है, उसके लिए कुठार के समान है ।७।

परमहंस योगियों के हृदय-रूपी कमल में विहार करता है और रावण के अमित पराक्रम को भी उसने कुण्ठित कर दिया है ।८।

नामावली

राम राम श्री राम राम
राम राम सीताभिराम
राम राम शृङ्गार राम
राम राम कल्याण राम
राम राम कोदण्ड राम
राम राम पट्टाभि राम
राम राम आनन्द राम
राम राम श्री राम राम

२६

भज मन रामचरण सुखदाई

(श्री तुलसीदास कृत)

श्लोक

आदौ रामतपोवनादिगमनं हत्वा मृगं कांचनं,
वैदेहीहरणं जटायुमरणं सुग्रीव संभाषणम्।
वालीनिग्रहणं समुद्रतरणं लंकापुरीदाहनं,
पश्चाद्रावण कुंभकर्णमथनं एतद्धि रामायणम्॥

अर्थ

प्रारम्भ में राम का वनवास, फिर सुवर्ण मृग का हनन, सीता जी का अपरहण, जटायु का मरण, सुग्रीव के साथ वातचीत, बालि का संहार, समुद्र का तरण, लंकानगरी का दहन, फिर रावण, कुम्भकर्णादि का नाश—यह है रामायण।

गीत

भज मन रामचरण सुखदाई ।

१—जिन चरनन से निकसी सुरसरि शंकर जटा समाई ।
जटाशंकरी नाम पर्‌यो है त्रिभुवन तारन आई ॥
भज मन······

२—जिन चरनन की चरन पादुका भरत रह्यो लौ लाई ।
सोई चरन केवट धोई लीने तव हरि नाव चलाई ॥
भज मन······

३—सोई चरन संतन जन सेवत सदा रहत सुखदाई ।
सोई चरन गौतम ऋषि नारी परसि परम पद पाई ॥
भज मन······

४—दंडक वन प्रभु पावन कीन्हौ ऋषियन त्रास मिटाई ।
सोई प्रभु त्रिलोक के स्वामी कनक-मृग संग धाई ॥
भज मन······

५—कपि सुग्रीव बन्धु भय व्याकुल तिन जय छत्र फिराई ।
रिपु को अनुज विभीषन निसिचर परसत लंका पाई ॥
भज मन ····

६—शिव सनकादिक अरु ब्रह्मादिक सेष सहस मुख गाई ।
तुलसिदास मारुतसुत प्रभु की निज मुख करत बड़ाई ॥
भज मन ·····

अर्थ

हे मन, श्रीराम के उन सुखदायक चरणों का सेवन कर।

जिन चरणों से गंगा निकली और शिव जी की जटा में समाई है, जिस कारण से उसका नाम जटा शंकरी पड़ा है। वह तीनों लोकों का तारक है।१।

जिन चरणों की पादुका को श्री भरत जी ले गये थे और जिसकी भक्ति की थी। जिन चरणों को कैवट-राजा गुह् ने धोया था और तब नाव चलाई थी।२।

उन चरणों का सारे संत जन ध्यान करते हैं। वे चरण सदा सुख देने वाले हैं। उन्हीं चरणों के स्पर्श से गौतम ऋषि की पत्नी अहल्या जी शाप से मुक्त हुई।३।

प्रभु ने अपने चरणों से दण्डकारण्य को पवित्र किया और वहाँ के ऋषियों का दुःख दूर किया। वही त्रिलोक का उद्धार करने वाले चरण कांचनमृग के पीछे दौड़े थे।४।

वहाँ सुग्रीव को, जो अपने भाई से डरा हुआ था, राज्य दिलाया, वैसे ही शत्रु रावण के भाई विभीषण को भी स्पर्श-मात्र से लंका का राज्य दिलाया।५।

उन चरणों की स्तुति शिव जी, सनकादि ऋषि, ब्रह्मा आदि देवता, सहस्रमुख वाले शेष नाग आदि करते हैं। श्री हनुमान जी के स्वामी उन श्री रामचन्द्र का गुणगान तुलसीदास कर रहा है।६।

नामावली

श्री राम राम जय राम
सीताभिराम जय राम

कोदण्ड राम जय राम
कल्याण राम जय राम
पट्टाभिराम जय राम
लोकाभिराम जय राम
श्री राम राम जय राम

३०

चेतः श्रीरामं

(श्री सदाशिव ब्रह्मेन्द्र कृतं)

श्लोक

चिदाकारो धाता परमसुखदः पावनतनुः,
मुनीन्द्रैः योगीन्द्रैः यतिपतिसुरेन्द्रैः हनुमता।
सदा सेव्यः पूर्णो जनकतनयांकः सुरगुरू,
रमानाथो रामो रमतु मम चित्ते तु सततम्॥

अर्थ

वह श्रीराम ज्ञानस्वरूप है, विश्व का स्रष्टा है, परम सुख देने वाला है, उसका शरीर पवित्र है, मुनिश्रेष्ठों, देवताओं और हनुमान जी से सदा सेवा स्वीकार कर रहा है, पूर्ण पुरुष है, अपनी गोद में सीता जी को बैठाया है, देवताओं का भी गुरु है, श्री लक्ष्मी जी का स्वामी है। वह मेरे चित्त में सदा रमता रहे !

गीत

चेतः श्र रामं चिन्तय
जीमूतश्यामम्

१—अङ्गीकृततुंवुरुसंगीतम्
हनुमद्गवयगवाक्षसमेतम्। चेतः······

२—नवरत्नस्थापितकोटीरम्
नवतुलसीदलकल्पितहारम्। चेतः······

३—परमहंसहृद्गोपुरदीपम्
चरणदलितमुनितरुणीशापम्। चेतः······

अर्थ

१—हे मन, मेघश्याम श्रीराम का चिंतन कर, जिसने तुंबुरु मुनि का गायन स्वीकार किया और जो हनुमान, गवय, गवाक्ष आदि वानर श्रेष्ठों से युक्त हैं।१।

२—जिसने नवरत्नों से जड़ा हुआ मुकुट धारण किया है और नयी तुलसी दलों की माला पहनी है।२।

३—जो परमहंस योगियों के हृदय-रूपी गोपुर पर दीपक समान है और जिसने गौतम ऋषि की पत्नी अहल्या का शाप अपने चरणों के स्पर्श से दूर कर दिया है, उस राम का चिन्तन कर।३।

नामावली

राम राम नमोस्तुते जय
रामभद्र नमोस्तुते

रामचन्द्र नमोस्तुते जय
राघवेन्द्र नमोस्तुते

देवदेव नमोस्तुते जय
देवराज नमोस्तुते

वासुदेव नमोस्तुते जय
वीरराज नमोस्तुते
राम राम जय राजा राम
राम राम जय सीता राम

अर्थ

हे रामचन्द्र, रामभद्र, राघवेंद्र, देवों के देव, देवों के राजा, हे वासुदेव, पराक्रमी राजा, तेरी जय हो ! तुझे प्रणाम !

३१
राम रतन धन पायो
(श्री मीराबाई कृत)

श्लोक

चिदंशं विभुं निर्मलं निर्विकल्पं,
निरीहं निराकारमोंकारवेद्यम् ।
गुणातीतमव्यक्तमेकं तुरीयं,
परं ब्रह्म यो वेद तस्मै नमस्ते ॥

अर्थ

उस व्यक्ति को प्रणाम जो परब्रह्म को जानता है, जो परब्रह्म ज्ञान-रूप है, सर्वव्यापी है, स्वच्छ (पवित्र) है, विकल्पशून्य है, इच्छाहीन है, निराकार है, ओंकार के जानने योग्य है, गुणों से परे है, अव्यक्त और एक है, तुरीयावस्था स्वरूप है ।

गीत

राम रतन धन पायो
पायो जी मैं तो। राम रतन……
वस्तु अमोलक दी मेरे सद्गुरु
किरपा कर अपनायो। राम रतन……
जनम जनम की पूंजी पाई
जग में सभी खोवायो।
खरचे नहि कोई चोर न लेवे
दिन-दिन बढ़त सवायो। राम रतन……
सत की नाव खेवटिया सद्गुरु
भवसागर तर आयो
मीरा के प्रभु गिरिधर नागर
हरख हरख जस गायो। राम रतन……

अर्थ

मैंने राम-रूपी रत्न पा लिया है।

वह ऐसी वस्तु है जो अमूल्य है। गुरु ने बड़ी कृपापूर्वक वह मुझे दिया। मैंने उसे अपना लिया है।१।

(उसे पाकर) मैंने अनेकों जन्मों तक की पूंजी पा ली है। भले ही सारा जग मैं खो आई।

उसमें से न तो कुछ खर्च होता है, न वह कुछ घटता है। चोर भी उसे चुरा नहीं सकता। (इसके विपरीत) वह सवाया होकर नित्यप्रति चढ़ता ही जाता है।२।

सत्य रूपी नाव का केवट सद्गुरु है। (वह मिल गया तो) संसार-सागर पार करना आसान है।

गिरिधर श्रीकृष्ण की भक्त मीरा आनन्द विभोर होकर उसका यशोगान करती है।३।

नामावली

हरि हरि हरि हरि श्री हरि बोल।
राम हरि श्याम हरि हरि हरि बोल॥

३२

राम से कोई मिला दे

श्लोक

नमस्तस्मै सदेकस्मै कस्मैचिन्महसे नमः।
यदेतद्विश्वरूपेण राजते गुरुराज ते॥

अर्थ

हे गुरुराज ! तुझे प्रणाम करता हूँ जो एकमात्र सत् स्वरूप है, अनिर्वचनीय है, ज्ञानस्वरूप है, प्रकाशमय है और जो इस समस्त विश्व के रूप में प्रकट हा रहा है।

गीत

राम से कोई मिला दे मुझे
राम से कोई मिला दे।
बिन लाठी का निकला अन्धा
राह से कोई लगा दे। राम से……

कोई कहे वह वसे अवध में
कोई कहे वृन्दावन में
कोई कहे तीरथ मन्दिर में
कोई कहे मिलते ओ मन में
देख सकूं मैं अपने मन में
कोई ऐसी ज्योति जला दे।
श्रद्धा ज्योति जला दे
भक्ति ज्योति जला दे
ज्ञान ज्योति जला दे। राम से......

अर्थ

उस भगवान् राम से मिलने में मेरी कोई सहायता कर दो।

अन्धा लाठी विना जैसे चल पड़ता है, वैसे मैं विना सहारे के भटक रहा हूँ। हाथ पकड़ कर कोई मुझे उस देव-दर्शन के रास्ते लगा दो।

कोई कहता है कि वह राम के रूप में अयोध्या में है तो कोई कहता है कि कृष्ण के रूप में वृन्दावन में है। कोई कहता है कि वह तीर्थ-क्षेत्र में है तो कोई कहता है कि वह मंदिर में है। फिर कोई यह भी कहता है कि वह प्रत्येक के अपने-अपने मन में ही मिलता है।

कोई मेरे अन्दर ऐसा प्रकाश जला दे, जिससे मैं अपने मन में उसे देख सकूं, अनुभव कर सकूं।

मेरे अन्दर श्रद्धा, भक्ति और ज्ञान की ज्योति जला दो। उस राम से मिला दो।

नामावली

श्री राम जय राम।
श्री राम जय राम॥

श्री कृष्ण स्तोत्रम्

३३

यमुनातीर विहारी

श्लोक

गोपालरत्नं भुवनैकरत्नं गोपाङ्गना यौवन भाग्य रत्नम् ।
श्रीकृष्ण रत्नं सुरसेव्यरत्नं, भजामहे यादव वंश रत्नम् ॥

अर्थ

भगवान् कृष्ण गोपालों के रत्न हैं । वे समस्त लोकों के रत्न हैं । वे युवती गोपियों के भाग्य के रत्न हैं । वे सभी देवताओं से पूजित श्रीकृष्ण रत्न हैं । उस यादव वंश रत्न की हम पूजा करते हैं ।

गीत

यमुनातीर विहारी, वृन्दावन संचारी,
गोवर्धन गिरिधारी, गोपाल कृष्ण मुरारी ।
दशरथ नन्दन राम राम, दशमुख मर्दन राम राम,
पशुपति रंजन राम राम, पाप विमोचन राम राम,
जय श्री राधे जय नन्दनन्दन, जय जय गोपी जन मन रञ्जन ॥

अर्थ

जो यमुना के किनारे विहार करते हैं, श्री वृन्दावन में संचार या भ्रमण करते है, जो गोवर्द्धन गिरि को धारण करने वाले हैं वे गौओं को चराने वाले गोपाल कृष्ण मुरारी हैं ।

दशरथ के पुत्र राम हैं, दशमुख यानी रावण को मारने वाले राम हैं, शङ्कर भगवान् को प्रसन्न करने वाले राम हैं, पापों को दूर करने वाले राम हैं ।

श्रीराधा की जय हो, गोपीजनों के मन को हरने वाले नन्दनन्दन श्री कृष्ण की जय हो ।

३४

भज रे गोपालम्

(श्री सदाशिव ब्रह्मेन्द्र कृत)

श्लोक

बद्धेनांजलिना नतेन शिरसा गात्रैः सरोमोद्गमैः,
कण्ठेन स्वरगद्गदेन नयनेनोद्गीर्णबाष्पाम्बुना ।
नित्यं त्वच्चरणारविन्द युगलध्यानामृतास्वादिनां,
अस्माकं सरसीरुहाक्ष सततं संपद्यतां जीवितम् ।।

अर्थ

हम श्रद्धा पूर्वक हाथ जोड़कर, सिर को नतकर, रोमांचित होकर, प्रेम से रुद्ध कण्ठ होकर, आंखों से आनन्दाश्रु बहाते हुये आपके पाद-पद्मों पर नित्य-प्रति ध्यान करते हुये प्रार्थना करें। हे पद्मलोचन भगवान् ! हमारा जीवन सुसंपन्न हो ।

गीत

भज रे गोपालं मानस, भज रे गोपालम् ।।
१—भज गोपालं भजित कुचेलं,
त्रिजगन्मूलं दितिसुतकालं । भज रे······
२—आगमसारं योगविचारं,
भोगशरीरं भुवनाधारं । भज रे······

३—कदनकुठारं कलुष विदूरं,
मदनकुमारं मधुसंहारं। भज रे ···

४—नतमन्दारं नन्दकिशोरं,
हतचाणूरं हंसविहारं। भज रे······

अर्थ

हे मेरे मन ! गोपाल का भजन कर जो तीनों लोकों का मूल है, जो असुरों के लिए मृत्यु-स्वरूप है तथा कुचेल द्वारा पूजित था।१।

उसकी पूजा करो जो वेदों का सार है, जिसे योग के द्वारा पाया जाता है तथा जो भुवनों का आधार है।२।

उसकी पूजा करो जो पापों को दूर करता है, अज्ञान का निवारण करता है, जिसके पुत्र कामदेव थे तथा जिसने मधु का संहार किया था।३।

उस नन्द के पुत्र की पूजा करो, जो अपने भक्तों के लिये कल्प वृक्ष के समान है, जिसने चाणूर का संहार किया तथा जो परमहंसों के लिये सुख का स्रोत है।४।

नामावली

१—एहि मुदं देहि मे श्री कृष्णा कृष्णा,
पाहि मां गोपालबाल कृष्णा कृष्णा।

२—नन्द गोप नन्दन श्रीकृष्णा कृष्णा,
वृन्दावन चन्द्र „ „ ।

३—राधा मन मोहन „ „ ,
माधव दयानिधे „ „ ।

४—भक्त परिपालक „ „ ,
भक्ति मुक्ति दायक „ „ ।

५—गोपीजन वल्लभ श्रीकृष्णा कृष्णा,
गोपकुल पालक ,, ,, ।

६—सर्वलोक नायक ,, ,, ,
सर्वजगन्मोहन ,, ,, ।

सच्चिदानन्द (कृष्ण) सच्चिदानन्द,
सच्चिदानन्द (गुरु) सच्चिदानन्द ।

३५

गायति वनमाली

(श्री सदाशिव ब्रह्मेन्द्रकृत)

श्लोक

कस्तूरी तिलकं ललाटफलके वक्षःस्थले कौस्तुभं,
नासाग्रे नवमौक्तिकं करतले वेणुं करे कंकणम् ।
सर्वाङ्गे हरिचन्दनं च कलयन् कण्ठे च मुक्तामणिं,
गोपस्त्री परिवेष्टितो विजयते गोपालचूड़ामणिः ॥

अर्थ

गोपालों के चूडामणि भगवान् कृष्ण गोपाङ्गनाओं से परिवेष्टित होकर शोभित हो रहे हैं, उनके विशाल ललाट में कस्तूरी का तिलक है, उनके वक्षस्थल पर कौस्तुभमणि है, नासिका के अग्रभाग में नवमुक्ता सुशोभित हो रही है, करतल में बाँसुरी तथा हाथों में कङ्कन हैं। उनके सब अङ्ग चन्दन से लेपित हैं तथा उनकी ग्रीवा में मुक्तावली सुशोभित हो रही है।

गीत

गायति वनमाली मधुरं, गायति वनमाली,
पुष्प सुगन्धि सुमलय समीरे, मुनिजन सेवित यमुनातीरे।
गायति ·· ···

कूजित शुक पिक मुख खग कुञ्जे, कुटिलालक बहुनीरदपुंजे,
गायति ·····

तुलसीदाम विभूषण हारी, जलज भवस्तुत सद्गुण शौरी,
गायति······

परमहंस हृदयोत्सवकारी, परिपूरित मुरली रवधारी।
गायति······

अर्थ

वनमाला धारण किये हुये भगवान् कृष्ण गा रहे हैं, वे मधुर गान कर रहे हैं।

यमुना के तट पर जहाँ ऋषिगण मौन होकर ध्यान करते हैं, जहाँ मलय पर्वत से सुमधुर समीर बहता है, जो सुगन्धि से पूर्ण है, (वहाँ श्रीकृष्ण गा रहे हैं।)

(यमुना तट पर) कुञ्जों में जहाँ कोयल, तोता तथा अन्य गायक पक्षी गान कर रहे हैं तथा वारिद पुञ्ज घुंघराले बाल की तरह आकाश में दोलायमान हो रहे हैं, (वहाँ श्रीकृष्ण गा रहे हैं)।

वे श्रीकृष्ण जो परमहंसों के हृदय में अपार आनन्द भर देते हैं तथा जिनकी बाँसुरी से संगीत प्रवाह रूप में संचारित होता है, वे गा रहे हैं।

नामावली

गोविन्द जय जय गोपाल जय जय,
राधारमण हरि गोविन्द जय जय।

३६

ब्रूहि मुकुन्देति

(श्री सदाशिव ब्रह्मेन्द्रकृत)

श्लोक

वंशीविभूषितकरात् नवनीरदाभात्,
पीताम्बराद् अरुणबिम्बफलाधरोष्ठात्।
पूर्णेन्दुसुन्दरमुखाद् अरविन्दनेत्रात्,
कृष्णात्परं किमपि तत्त्वमहं न जाने॥

अर्थ

भगवान् कृष्ण से परे मैं किसी परम तत्त्व को नहीं जानता, जिसके हाथों में वंशी शोभायमान हो रही है, जो वारिद के समान श्यामल है, पीताम्बर से भूषित है, जिसके होंठ बिम्बफल के समान लाल हैं, जिसका मुख पूर्ण चन्द्रमा के समान है, तथा जिसकी आँखें कमल के समान हैं।

गीत

ब्रूहि मुकुन्देति रसने, ब्रूहि मुकुन्देति।
केशव माधव गोविन्देति कृष्णानन्द सदानन्देति (ब्रूहि)
राधारमण हरे रामेति राजीवाक्ष घनश्यामेति (ब्रूहि)
गरुड गमन नन्दक हस्तेति खण्डित दशकन्धर मस्तेति (ब्रूहि)
अक्रूर प्रिय चक्रधरेति हंस निरञ्जन कंस हरेति (ब्रूहि)

अर्थ

हे जिह्वा मुकुन्द बोल मुकुन्द बोल !
केशव ! माधव ! गोविन्द ! बोल !
कृष्ण आनन्द, सदानन्द बोल !
राधारमण ! हरि ! राम ! बोल !
पद्मलोचन ! घनश्याम ! बोल !

गरुड़ पर चलने वाले, दससिर रावण को मारने वाले बोल। अक्रूर प्रिय ! चक्रधर ! निरञ्जन-हंस ! कंश-विनाशन बोल !

नामावली

भजो राधे गोविन्द, गोपाल तेरा प्यारा नाम है।
गोपाल तेरा प्यारा नाम है, नन्दलाला तेरा प्यारा नाम है ॥

३७

क्रीडति वनमाली

गीत

क्रीडति वनमाली गोष्ठे (क्रीडति)
प्रह्लाद पराशर परिपाली पवनात्मज जाम्ववदनुकूली (क्रीडति)
पद्माकुच परिंभणशाली पटुतर शासित मालिसुमाली (क्रीडति)
परमहंस वर कुसुम सुमाली प्रणव पयोरुह गर्भ कपाली (क्रीडति)

अर्थ

वनमाला पहने हुए कृष्ण प्रह्लाद के रक्षक हैं, जो हनुमान् तथा जाम्ववान् के प्रति कृपा करने वाले हैं, वे ही क्रीडा कर रहे हैं। जो श्रीलक्ष्मी से आलिङ्गित हैं तथा जिनके बाणों ने माली तथा सुमाली

नामक राक्षसों को मार डाला था, वे ही क्रीड़ा कर रहे हैं। जिनकी माला में परमहंसजन ही पुष्प हैं तथा जो प्रणव पद्म के अन्दर छिपा है, वही कृष्ण क्रीड़ा कर रहे हैं।

नामावली

१—कमलावल्लभ गोविन्द माम्
पाहि कल्याण कृष्णा गोविन्दा।

२—कमनीयानन गोविन्द माम् (पाहि)
३—भक्तवत्सल गोविन्द माम् (पाहि)
४—भागवत प्रिय गोविन्द माम् (पाहि)
५—वेणुविलोल गोविन्द माम् (पाहि)
६—विजय गोपाल गोविन्द माम् (पाहि)
७—नन्द नन्दन गोविन्द माम् (पाहि)
८—नवनीतचोर गोविन्द माम् (पाहि)
९—अनाथरक्षक गोविन्द माम् (पाहि)
१०—सर्वेश्वर श्री गोविन्द माम् (पाहि)

३८

भज रे यदुनाथम्

(श्री सदाशिवब्रह्मेन्द्रकृतं)

श्लोक

वन्दे नवघनश्यामं पीतकौशेयवाससम्।
सानन्दं सुंदरं शुद्धं श्री कृष्णं प्रकृतेः परम्॥

अर्थ

श्री कृष्ण को नमस्कार, जो नये मेघ की तरह नील, पीले रेशमी वस्त्र को धारण किये है, जो आनन्दयुक्त है, सुन्दर है, शुद्ध है और प्रकृति से परे है।

गीत

भज रे यदुनाथं, मानस
भज रे यदुनाथम्।

१—गोपवधूपरिरंभणलोलम
गोपकिशोरकमद्भुतलीलम्। भज रे······

२—कपटांगीकृतमानुषवेषम
कपटनाट्यकृतकृत्स्नसुवेषम् । भज रे······

३—परमहंसहृत्तत्त्व स्वरूपम्
प्रणवपयोधरप्रणवस्वरूपम् । भज रे······

अर्थ

हे मन, यादवों के भगवान् श्रीकृष्ण की पूजा कर।

वह जो कृष्ण गोपियों के आलिंगन में मस्त है और अद्भुत क्रीडाओं में रत गोपबालक है, उसका भजन कर।

वह, जिसने कपट रूप से मानव रूप धारण किया है और जो कुछ उसके वेश रहे हैं, वे सारे नाटक के समान रहे। उस कृष्ण का भजन कर।

वह जो परमहंस योगियों के हृदय में निवास करने वाला परम तत्त्व है, ओंकार रूपी बादलों के बीच स्वयं ओंकार स्वरूप है। उस कृष्ण का भजन कर।

नामावली

कमलावल्लभ	राधेश्याम
कमनीयानन	राधेश्याम
कनकांबरधर	राधेश्याम
कौस्तुभ भूषण	राधेश्याम
अखण्ड स्वरूप	राधेश्याम
अमित पराक्रम	राधेश्याम
अपरिच्छिन्न	राधेश्याम
अमरजनप्रिय	राधेश्याम

अर्थ

श्री लक्ष्मी देवी के स्वामी	राधेश्याम
सुंदर मुखवाले	राधेश्याम
स्वर्णमय वस्त्रधारी	राधेश्याम
कौस्तुभ-मणि से विभूषित	राधेश्याम
नाशरहित स्वरूप वाले	राधेश्याम
प्रमाणातीत पराक्रम वाले	राधेश्याम
सीमातीत	राधेश्याम
देवताओं के प्रिय	राधेश्याम

३९

स्मर वारं वारं

(श्री सदाशिव ब्रह्मेन्द्रकृत)

श्लोक

चिदानंदाकारं श्रुतिसरस-सारं समरसं,
निराधाराधारं भवजलधिपारं परगुणम् ।

रमाग्रीवाहारं व्रजवनविहारं हरनुतं,
सदा तं गोविन्दं परमसुखकन्दं भजत रे ॥

अर्थ

आप सर्वदा उस भगवान् गोविन्द का भजन कीजिये जो चिदानन्द स्वरूप है, जो समस्त वेदों के सरस सार हैं, जो सबके लिये समान हैं, जो निराश्रयों के आश्रय हैं, जो जन्म-मृत्यु-रूपी संसार-सागर के तट है, जो सभी गुणों के परे हैं, जो लक्ष्मी जी का कण्ठ-हार हैं, जो व्रज के तपोवन में विहार करने वाले हैं, भगवान् शिव जी जिनका गुणगान करते रहते हैं और जो परमानन्द का मूल हैं।

गीत

स्मर वारं वारं चेतः स्मर नन्दकुमारम्।
घोषकुटीर पयोघृतचोरम्
गोकुलवृन्दावनसंचारम् । स्मर……
वेणुरवामृत पान किशोरम्
विश्वस्थितिलयहेतुविहारम्। स्मर……
परमहंस हृत्पंकज कीरम्
पटुतर धेनुक बकसंहारम्। स्मर……

अर्थ

रे मन, नन्द जी के उस कुमार को वारंवार याद कर।
वह जो ग्वालों की झोपड़ियों से दूध-घी चुराता है, जो गोकुल और वृंदावन में विहार करता है।

वह जो मुरली के स्वर रूपी अमृत को पान करता है और संसार की सृष्टि, स्थिति और विलय ही जिसका खेल है ।

वह जो परमहंसों के हृदय रूपी पिंजड़े का तोता है और जिसने धेनुक, बकासुर आदि चालाक असुरों का संहार किया है ।

नामावली

भक्तवत्सल गोविन्द
भागवतप्रिय गोविन्द
पतितपावन गोविन्द
परमदयालो गोविन्द
नन्दमुकुन्द गोविन्द
नवनीतचोर गोविन्द
वेणुविलोल गोविन्द
विजयगोपाल गोविन्द

४०

गोपाल गोकुल वल्लभिप्रिय

(श्री तुलसीदास कृतं)

श्लोक

वसुदेवसुतं देवं कंसचाणूरमर्दनम् ।
देवकीपरमानन्दं कृष्णं वन्दे जगद्गुरुम् ॥

अर्थ

मैं जगद्गुरु भगवान् श्री कृष्ण की वन्दना करता हूँ जो वसुदेव जी का पुत्र है, जो स्वयं भगवान् है, जिसने कंस और चाणूर राक्षसों का बध किया तथा जो माता देवकी को परम आनंद देने वाला है ।

गीत

गोपाल गोकुल वल्लभिप्रियं,
गोप गोसुत वल्लभम्।
चरणारविंदमहं भजे,
भजनीय सुर-मुनि-दुर्लभम् ॥१॥

घनश्याम काम अनेक छवि,
लोकाभिराम मनोहरम्।
किंजल्क वसन किशोर मूरति,
भूरि गुण करुणाकरम् ॥२॥

सिर केकिपिंच्छ विलोल कुण्डल,
अरुण वनरुह लोचनम्।
गुंच्छावतंस विचित्र सब अंग,
भक्त भव भय मोचनम् ॥३॥

कच कुटिल सुन्दर तिलकभ्रू,
राका मयंक समाननम्।
अपहरण तुलसीदास त्रास,
विहार वृन्दाकाननम् ॥४॥

अर्थ

हे गोपाल, गोकुलाङ्गनाओं के प्रियतम, गोपकुमारों, गौओं तथा गोवत्सों के स्वामी, परम आराधनीय तथा सुरमुनियों को भी दुष्प्राप्य भगवान् कृष्ण, मैं तेरे चरण-कमल की उपासना करता हूँ।१।

हे श्यामघन के समान श्याम वर्ण वाले भगवान् कृष्ण, तू अगणित कामदेव की शोभा को धारण करता है। तू संसार का रंजन करता है। तू मनोहर रूपवाला, पीताम्बरधारी, किशोर वदन, गुणों का आगार तथा करुणामय है। मैं तेरे चरण-कमल की उपासन करता हूँ।२।

तेरा सिर मोर-मुकुट से सुशोभित है। तू कानों में चपल कुण्डल धारण किये हुए है। तेरे नेत्र कमल-पुष्प के समान लाल हैं। तेरा संपूर्ण अंग भ्रमर के समान सुन्दर है। मैं तेरे चरण-कमल की उपासना करता हूँ।३।

तेरी अलकें घुँघराली हैं। तू ललाट में सुन्दर तिलक धारण किये हुए है। तेरी भौहें मनोहर हैं। तेरा मुख पूर्णचन्द्र के समान कमनीय है। तू तुलसीदास के भय को दूर करने वाला है तथा वृन्दावन में विहार करता है।४।

नामावली

गोविन्द जय गोपाल जय।
राधारमण गोविन्द जय ॥

४१

दर्शन दो घनश्याम नाथ

(श्री नरसी मेहता कृत)

श्लोक

ओ३म् इति ज्ञानवस्त्रेण, रागनिर्णेजनीकृतः।
कर्मनिद्रां प्रपन्नोस्मि, त्राहि मां मधुसूदन॥

अर्थ

ओ३म् रूप ज्ञान-वस्त्र से राग-रूप मल को दूर कर। हे मधुसूदन ! मैं कर्मनिद्रा में पड़ा हूँ। मेरी रक्षा कर।

गीत

दर्शन दो घनश्याम नाथ मोरी
अखियाँ प्यासी रे।

१—मन मन्दिर की ज्योति जगा दो
घट घट बासी रे। (दर्शन दो…)

२—मन्दिर मन्दिर मूरति तेरी
फिर भी न देखें सूरत तेरी
युग बीते न आई मिलन की—
पूरनमासी रे। (दर्शन दो…)

३—द्वार दया का जब तू खोले,
पंचम सुर में गूंगा बोले
अन्धा देखे, लँगड़ा चल कर
पहुँचे कासी रे। (दर्शन दो…)

४—पानी पीकर प्यास बुझाऊँ,
नैनन को कैसे समझाऊँ
आँखमिचौली छोड़ो अब तो
मन के बासी रे। (दर्शन दो…)

५—निर्बल के बल धन निर्धन के
तुम रखवारे भक्त जनन के
तेरे भजन में सब कुछ पाऊँ
मिटे उदासी रे। (दर्शन दो···)

६—नाम जपे पर तुझे न जाने,
उनको भी तू अपना माने।
तेरी दया का अन्त नहीं है,
हे दुखनाशी रे। (दर्शन दो···)

७—आज फैसला तेरे द्वार पर,
मेरी जीत है तेरी हार पर।
हार जीत है तेरी मैं तो,
चरन उपासी रे। (दर्शन दो···)

८—द्वार खड़ा कब से मतवाला,
माँगे तुमसे हार तुम्हारा।
नरसी की ये विनती सुन लो
भक्त विलासी रे। (दर्शन दो···)

९—लाज न लुट जाये प्रभु तेरी,
नाथ करो न दया में देरी।
तीनों लोक छोड़ कर आओ
गगन निवासी रे। (दर्शन दो···)

अर्थ

हे घनश्याम, हे नाथ, मुझे दर्शन दो। मेरे नेत्र तुम्हारे दर्शनों के लिए प्यासे हो रहे हैं।

हे सबके अन्तर्वासी, मेरे मन-मन्दिर की ज्योति जला दो।१।

तुम्हारी मूर्ति सभी मन्दिरों में विद्यमान हैं, फिर भी तुम्हारे दर्शन नहीं होते। (तुम्हारी प्रतीक्षा में) युग बीत चले, परन्तु तुम्हारे मिलन की पूर्णिमा की रात्रि अभी तक नहीं आई।२।

जब तू दया का द्वार खोलता है तो गूँगा पंचम स्वर में बोलने लगता है, अन्धा देखने लगता है और लँगड़ा पाँव-पाँव चल कर काशी पहुँच जाता है।३।

मैं (साधारण) तृषा को तो जल पीकर शान्त कर देता हूँ; परन्तु इन नेत्रों को (जो तुम्हारे दर्शन के लिए प्यासे हैं) भला मैं कैसे समझाऊँ? हे हृदयवासी, आँख मिचौनी का अब यह खेल छोड़ दो।४।

तुम निर्बलों के बल, निर्धनों के धन और भक्तजनों के रक्षक हो। तुम्हारे भजन से मैं सब कुछ प्राप्त कर लूँ और सब चिन्ता दूर हो जाय।५।

हे दुःख निवारक! जो तुम्हारा भजन तो करते हैं, परन्तु तुम्हें जानते तक नहीं, उन्हें भी तू अपना लेता है। तुम्हारी दया असीम है।६।

आज तुम्हारे दरवाजे पर ही हमारी हार-जीत का फैसला होने को है। मेरी जीत तुम्हारी हार पर ही निर्भर करती है; परन्तु हार और जीत ये दोनों ही तो तुम्हारे (हाथ) हैं। मैं तो तुम्हारे चरणों का उपासक हूँ।७।

मैं पागल कब से तुम्हारे द्वार पर खड़ा हुआ तुम्हारे हार की भिक्षा

तुम से ही माँग रहा हूँ। हे भक्तों के आनन्द देने वाले, 'नरसी' की प्रार्थना अब तो सुन लो।८।

हे नाथ, अब दया करने में विलम्ब न करो। नहीं तो कहीं ऐसा न हो कि तुम्हारी लाज ही लुट जाये। हे वैकुण्ठवासी, तीनों लोकों को छोड़ कर शीघ्र पधारो।६।

नामावली

दर्शन दो घनश्याम नाथ।
राधेश्याम जय राधेश्याम॥

४२

अधरं मधुरं

(श्री वल्लभाचार्य कृतं)

श्लोक

शान्ताकारं भुजगशयनं पद्मनाभं सुरेशं,
विश्वाधारं गगनसदृशं मेघवर्णं शुभाङ्गम्।
लक्ष्मीकान्तं कमलनयनं योगिहृध्यानगम्यं,
वन्दे विष्णुं भवभयहरं सर्वलोकैकनाथम्॥

अर्थ

मैं उस विष्णु को प्रणाम करता हूँ जिसकी आकृति शान्त है, जो आदि शेष पर लेटा है, जो पद्मनाभ है, देवताओं का स्वामी है, विश्व का आधार है, आकाश सदृश व्यापक है, मेघ जैसी कान्तिवाला है, जिसके अंग मंगलकर हैं, जो लक्ष्मी का पति है, जिसके नयन कमल के सदृश हैं, ध्यान द्वारा योगियों के हृदय से जो जाना जाता है, जो

संसार-भय को दूर करने वाला और समस्त लोकों का एकमात्र स्वामी है।

श्लोक

अधरं मधुरं वदनं मधुरं, नयनं मधुरं हसितं मधुरं,
हृदयं मधुरं गमनं मधुरं, मधुराधिपतेरखिलं मधुरम् ।१।
वचनं मधुरं चरितं मधुरं, वसनं मधुरं वलितं मधुरं,
चलितं मधुरं भ्रमितं मधुरं, मधुराधिपतेरखिलं मधुरम ।२।
वेणुर्मधुरो रेणुर्मधुरो, पाणिर्मधुरः पादौ मधुरः,
नृत्यं मधुरं सख्यं मधुरं, मधुराधिपतेरखिलं मधुरम् ।३।
गीतं मधुरं पीतं मधुरं, मुक्तं मधुरं सुप्तं मधुरं,
रूपं मधुरं तिलकं मधुरं, मधुराधिपतेरखिलं मधुरम् ।४।
करणं मधुरं तरणं मधुरं, हरणं मधुरं रमणं मधुरं,
वमितं मधुरं शमितं मधुरं, मधुराधिपतेरखिलं मधुरम् ।५।
गुंजा मधुरा माला मधुरा, यमुना मधुरा वीची मधुरा,
सलिलं मधुरं कमलं मधुरं, मधुराधिपतेरखिलं मधुरम् ।६।
गोपी मधुरा लीला मधुरा, युक्तं मधुरं, मुक्तं मधुरं,
दृष्टं मधुरं शिष्टं मधुरं, मधुराधिपतेरखिलं मधुरम् ।७।
गोपा मधुरा गावो मधुरा, यष्टिर्मधुरा सृष्टिर्मधुरा,
दलितं मधुरं फलितं मधुरं, मधुराधिपतेरखिलं मधुरम् ।८।

अर्थ

श्री मधुराधिपति का सब कुछ मधुर है। उनके अधर मधुर हैं, नेत्र मधुर हैं, हास्य मधुर है, हृदय मधुर है और गति भी मधुर है ।१।

उनके वचन मधुर हैं, चरित्र मधुर है, वस्त्र मधुर हैं, अङ्गभङ्गी मधुर है, चाल मधुर है और भ्रमण भी अति मधुर है; श्री मधुराधिपति का सभी कुछ मधुर है ।२।

उनकी वेणु मधुर है, चरण-रज मधुर है, कर-कमल मधुर हैं, चरण मधुर हैं, नृत्य मधुर है और सख्य भी मधुर है; श्री मधुराधिपति का सभी कुछ मधुर है ।३।

उनका गान मधुर है, पान मधुर है, उनका मोचन मधुर है, शयन मधुर है, रूप मधुर है और तिलक भी अति मधुर है; श्री मधुराधिपति का सभी कुछ मधुर है ।४।

उनका कार्य मधुर है, तैरना मधुर है, हरण मधुर है, रमण मधुर है, उद्‌गार मधुर है और शान्ति भी मधुर है; श्री मधुराधिपति का सभी कुछ मधुर है ।५।

उनकी गुंजा मधुर है, माला मधुर है, यमुना मधुर है, उसकी तरङ्गें मधुर हैं, उसका जल मधुर है और कमल भी अति मधुर है; श्री मधुराधिपति का सभी कुछ मधुर है ।६।

गोपियाँ मधुर हैं, उनकी लीला मधुर है, उनका संयोग मधुर है, वियोग मधुर है, निरीक्षण मधुर है और शिष्टाचार भी मधुर है; श्री मधुराधिपति का सभी कुछ मधुर है ।७।

गोप मधुर हैं, गायें मधुर हैं, लकुटी मधुर है, रचना मधुर है, दलन मधुर है और उसका फल भी अति मधुर है; श्री मधुराधिपति का सभी कुछ मधुर है ।८।

नामावली

विपिनविहारी राधेश्याम, कुञ्जविहारी राधेश्याम,
बांकेविहारी राधेश्याम, देवकीनन्दन राधेश्याम,
गोपिकावल्लभ राधेश्याम, राधावल्लभ राधेश्याम

कृष्णमुरारी राधेश्याम, करुणासागर राधेश्याम,
भक्तिदायक राधेश्याम, शक्तिदायक राधेश्याम,
भुक्तिदायक राधेश्याम, मुक्तिदायक राधेश्याम,
सच्चिदानन्द राधेश्याम, सद्‌गुरुरूप राधेश्याम,
सर्वरूप श्री राधेश्याम, सर्वनाम श्री राधेश्याम,
राधेश्याम राधेश्याम ।

४३

जयति तेऽधिकम्

(भागवत से)

श्लोक

वन्दे नन्दव्रजस्त्रीणां पादरेणुमभीक्ष्णशः ।
यासां हरिकथोद्‌गीतं पुनाति भुवनत्रयम् ॥

अर्थ

गोपियों के, नन्द के व्रज की स्त्रियों के, चरण-रज को सदा नमस्कार, भगवान् की लीलाओं को वर्णन करने वाले जिनके गीत तीनों लोक को पावन बनाते हैं ।

गीत

१. जयति तेऽधिकं जन्मना व्रजः श्रयत इन्दिरा शाश्वदत्र हि ।
दयित दृश्यतां दिक्षु तावकास्त्वयि धृतासवस्त्वां विचिन्वते ॥
२. शरदुदाशये साधुजातसत्सरसिजोदर श्रीमुषा दृशा ।
सुरतनाथ ते शुल्कदासिका वरद निघ्नतो नेह किं वधः ॥

३. विषजलाप्ययाद् व्यालराक्षसाद् वर्षमारुताद् वैद्युतानलात्।
वृषमयात्मजाद् विश्वतोभयादृषभ ते वयं रक्षिता मुहुः॥
४. न खलु गोपिकानन्दनो भवानखिलदेहिनामन्तरात्मदृक्।
विखनसार्थितो विश्वगुप्तये सख उदेयिवान् सात्वतां कुले॥
५. विरचिताभयं वृष्णिधुर्य ते चरणमीयुषां संसृतेर्भयात्।
करसरोरुहं कान्त कामदं शिरसि धेहि नः श्रीकरग्रहम्॥
६. व्रजजनार्तिहन् वीर योषितां निजजनस्मयध्वंसनस्मित।
भज सखे भवत्किंकरी स्म नो जलरुहाननं चारु दर्शय॥
७. प्रणतदेहिनां पापकर्शनं तृणचरानुगं श्रीनिकेतनम्।
फणिफणार्पितं ते पदाम्बुजं कृणु कुचेषु नः कृन्धि हृच्छयम्॥
८. मधुरया गिरा वल्गुवाक्यया बुध मनोज्ञया पुष्करेक्षण।
विधिकरीरिमा वीर मुह्यतीरधरसीधुनाऽऽप्याययस्व नः॥
९. तव कथामृतं तप्तजीवनं कविभिरीडितं कल्मषापहम्।
श्रवणमङ्गलं श्रीमदाततं भुवि गृणन्ति ते भूरिदा जनाः॥
१०. प्रहसितं प्रिय प्रेमवीक्षणं विहरणं च ते ध्यानमङ्गलम्।
रहसि संविदो या हृदिस्पृशः कुहक नो मनः क्षोभयन्ति हि॥
११. चलति यद् व्रजाच्चारयन् पशून् नलिनसुन्दरं नाथ ते पदम्।
शिलतृणांकुरैः सीदतीति नः कलिलतां मनः कान्त गच्छति॥
१२. दिनपरिक्षये नीलकुन्तलैर्वनरुहाननं बिभ्रदावृतम्।
घनरजस्वलं दर्शयन् मुहुर्मनसि नः स्मरं वीर यच्छसि॥
१३. प्रणतकामदं पद्मजार्चितं धरणिमण्डनं ध्येयमापदि।
चरणपंकजं शन्तमं च ते रमण नः स्तनेष्वर्पयाधिहन्॥

१४. सुरतवर्धनं शोकनाशनं स्वरितवेणुना सुष्ठुचुम्बितम्।
इतररागविस्मारणं नृणां वितर वीर नस्तेऽधरामृतम्॥
१५. अटति यद् भवानह्नि काननं त्रुटिर्युगायते त्वामपश्यताम्।
कुटिलकुन्तलं श्रीमुखं च ते जड़ उदीक्षतां पक्ष्मकृद् दृशाम्॥
१६. पतिसुतान्वयभ्रातृबान्धवानतिविलंघ्य तेऽन्त्यच्युतागताः।
गतिविदस्तवोद्गीतमोहिताः कितव योषितः कस्त्यजेन्निशि॥
१७. रहसि संविदं हृच्छयोदयं प्रहसिताननं प्रेमवीक्षणम्।
बृहदुरःश्रियो वीक्ष्य धाम ते मुहुरतिस्पृहा मुह्यते मनः॥
१८. व्रजजनौकसां व्यक्तिरङ्ग ते वृजिनहन्त्र्यलं विश्वमङ्गलम्।
त्यज मनाक् च नस्त्वत्स्पृहात्मनां स्वजनहृद्रुजां यन्निषूदनम्॥
१९. यते सुजातचरणाम्बुरुहं स्तनेषु
भीताः, शनैः प्रिय दधीमहि कर्कशेषु।
तेनाटवीमटसि तद् व्यथते न किंस्वित्,
कूर्पादिभिर्भ्रमति धीर्भवदायुषां नः॥
२०. इति गोप्यः प्रगायन्त्यः प्रलपन्त्यश्च चित्रधा,
रुरुदुः सुस्वरं राजन् कृष्णदर्शनलालसाः।
तासां आविरभूत् शौरिः स्मयमानमुखाम्बुजः,
पीताम्बरधरः स्रग्वी साक्षात् मन्मथमन्मथः॥

अर्थ

गोपियां विरहावेश में गाने लगीं—प्यारे! तुम्हारे जन्म के कारण वैकुण्ठ आदि लोकों में भी व्रज की महिमा बढ़ गई है। तभी तो सौन्दर्य और मृदुलता की देवी लक्ष्मी जी अपना निवास-स्थान वैकुण्ठ

छोड़ कर यहाँ नित्य निरन्तर निवास करने लगी हैं, इसकी सेवा करने लगी हैं। परन्तु प्रियतम ! देखो, तुम्हारी गोपियां, जिन्होंने तुम्हारे चरणों में ही अपने प्राण समर्पण कर रखे हैं, वन-वन में भटक कर तुम्हें खोज रही हैं।१।

हमारे प्रेमपूर्ण हृदय के स्वामी ! हम तुम्हारी विना मोल की दासी हैं। तुम शरत्कालीन जलाशय में सुन्दर सरसिज कर्णिका के सौन्दर्य को चुराने वाले नेत्रों से हमको घायल कर चुके हो। हमारे मनोरथ पूर्ण करने वाले प्राणेश्वर क्या नेत्रों से मारना वध नहीं है ? अस्त्रों से हत्या करना ही वध है।२।

पुरुष शिरोमणे ! यमुना जी के विषैले जल से होने वाली मृत्यु, साँप का रूप धारण कर खाने वाले अघासुर, इन्द्र की वर्षा, आँधी, विजली, दावानल, वृषभासुर और व्योमासुर आदि से एवं भिन्न-भिन्न अवसरों पर सब प्रकार के भयों से तुमने हमारी रक्षा की है।३।

तुम केवल यशोदानन्दन ही नहीं हो, समस्त शरीरधारियों के हृदय में रहने वाले साक्षी हो, अन्तर्यामी हो। सखे ! ब्रह्मा जी की प्रार्थना से विश्व की रक्षा करने के लिए तुम यदुवंश में उपत्न्न हुए हो।४।

अपने प्रेमियों की अभिलाषा पूर्ण करने वालों में अग्रगण्य यदुवंश शिरोमणे ! जो लोग जन्म-मृत्यु रूप संसार के चक्कर से डर कर तुम्हारे चरणों की शरण ग्रहण करते हैं, उन्हें तुम्हारे कर-कमल अपनी छत्रछाया में लेकर निर्भय कर देते हैं। हमारे प्रियतम ! सब की लालसा-अभिलाषाओं को पूर्ण करने वाला वही कर कमल, जिससे तुमने लक्ष्मी जी का हाथ पकड़ा है, हमारे सिर पर रख दो।५।

व्रजवासियों के दुःख दूर करने वाले वीरशिरोमणि श्यामसुन्दर ! तुम्हारी मन्द मुस्कान की एक उज्ज्वल रेखा ही तुम्हारे प्रेमीजनों के सारे मानमद को चूर-चूर कर देने के लिए पर्याप्त है। हमारे प्यारे

सखा ! हम से रूठो मत, प्रेम करो। हम तो तुम्हारी दासी हैं, तुम्हारे चरणों पर निछावर हैं। हम अबलाओं को अपना परम सुन्दर साँवला मुखकमल दिखाओ।६।

तुम्हारे चरण-कमल शरणागत प्राणियों के सारे पापों को नष्ट कर देते हैं। वे समस्त सौन्दर्य-माधुर्य की खान हैं और स्वयं लक्ष्मी जी उनकी सेवा करती हैं। तुम उन्हीं चरणों से हमारे बछड़ों के पीछे-पीछे चलते हो और हमारे लिए तुमने उन्हें साँप के फणों पर भी रखने में संकोच न किया। हमारा हृदय तुम्हारी विरह-व्यथा की आग से जल रहा है, तुम्हारे मिलन की आकांक्षा हमको सता रही है। तुम अपने वही चरण हमारे वक्षःस्थल पर रख कर हमारे हृदय की ज्वाला को शान्त कर दो।७।

कमलनयन ! तुम्हारी वाणी कितनी मधुर है ! उसका एक-एक शब्द, एक-एक अक्षर मधुरातीत मधुर हैं। बड़े-बड़े विद्वान् उसमें रम जाते हैं, उस पर अपना सर्वस्व निछावर कर देते हैं। तुम्हारी उस वाणी का रसास्वादन करके तुम्हारी आज्ञाकारिणी दासी गोपियाँ मोहित हो रही हैं। दानवीर ! अब तुम अपना दिव्य अमृत से भी मधुर अधर-रस पिलाकर हमें जीवन दान दो।८।

प्रभो तुम्हारी जीवन लीला-कथा भी अमृतस्वरूपा है। विरह से सताये हुए लोगों के लिए तो यह जीवनसर्वस्व ही है। बड़े-बड़े ज्ञानी महात्माओं, भक्त कवियों ने उसका गान किया है, वह सारे पाप-ताप को मिटाती तो है ही साथ ही श्रवण मात्र से परम मंगल, परम कल्याण का दान भी करती है। वह परम सुन्दर, परम मधुर और परम विस्तृत भी है। जो तुम्हारी उस लीला-कथा का गान करते हैं, वास्तव में भूलोक में वे ही सबसे बड़े दाता हैं।९।

प्यारे एक दिन वह था, जब तुम्हारी प्रेम भरी हँसी और चितवन

तथा तुम्हारी तरह-तरह की क्रीडाओं का ध्यान करके हम आनन्द में मग्न हो जाया करती थीं। उनका ध्यान भी परम मंगलदायक है, और उसके बाद तुम मिले। तुमने एकान्त में हृदयस्पर्शी ठठोलियां की, प्रेम की बातें कहीं। हमारे कपटी मित्र ! अब वे सब बातें याद आकर हमारे मन को क्षुब्ध किये देती हैं।१०।

हमारे प्यारे स्वामी ! तुम्हारे चरण कमल से भी अधिक सुकोमल और सुन्दर हैं। जब तुम गौओं को चराने के लिए व्रज से निकलते हो, यह सोचकर कि तुम्हारे वे युगल चरण कंकड़, तिनके और कुश-काँटे के गड़ जाने से कष्ट पाते होंगे, हमारा मन बेचैन हो जाता है। हमें बड़ा दुःख होता है।११।

प्रियतम ! एकमात्र तुम्हीं हमारे दुःखों को मिटाने वाले हो। तुम्हारे चरण-कमल शरणागत भक्तों की समस्त अभिलाषाओं को पूर्ण करने वाले हैं। स्वयं लक्ष्मी जी उनकी सेवा करती हैं और पृथ्वी के तो वे भूषण ही हैं। आपत्ति के समय एकमात्र उन्हीं का चिन्तन करना उचित है, जिससे सारी विपत्तियां कट जाती हैं। कुंजविहारी ! तुम अपने परम कल्याण स्वरूप चरण-कमल हमारे वक्षःस्थल पर रखकर हमारे हृदय की व्यथा को शान्त कर दो।१२।

वीर शिरोमणे ! तुम्हारा अधरामृत मिलन के सुख की आकांक्षा को बढ़ाने वाला है। वह विरहजन्य समस्त शोक-सन्ताप को नष्ट कर देता है। गाने वाली वह बाँसुरी उसको भली-भाँति चूमती रहती है। जिन्होंने एक बार उसको पी लिया, उन लोगों को फिर दूसरों तथा दूसरों की आसक्तियों का ध्यान भी नहीं होता। हमारे वीर ! अपना वही अधरामृत हमको वितरण करो, हमको पिलाओ।१३।

प्यारे ! दिन के समय जब तुम वन में विहार करने के लिए चले जाते हो, तब तुम्हें देखे बिना हमारे लिए एक-एक क्षण युग के समान

हो जाता है और जब तुम सन्ध्या के समय लौटते हो तथा घुँघराली अलकों से युक्त तुम्हारा परम सुन्दर मुखारविन्द हम देखती हैं, उस समय पलकों का गिरना हमारे लिए भार हो जाता है और ऐसा जान पड़ता है कि इन नेत्रों की पलकों को बनाने वाला विधाता मूर्ख ही है ।१४।

प्यारे श्यामसुन्दर ! हम अपने पति, पुत्र, भाई, बन्धु और कुल परिवार का त्याग कर, उनकी इच्छा और आज्ञाओं का उल्लंघन करके तुम्हारे पास आयी हैं । हम तुम्हारी एक-एक चाल जानती हैं और संकेत समझती हैं और तुम्हारे मधुर गान की गति समझ कर उसी से मोहित होकर यहाँ आयी हैं । कपटी ! इस प्रकार रात्रि के समय आयी हुई युवतियों को तुम्हारे सिवा और कौन त्याग सकता है ।१५।

प्यारे ! एकान्त में तुम मिलन की आकांक्षा, प्रेमभाव को जगाने वाली बातें किया करते थे । ठिठोली करके हमको छेड़ते थे । तुम प्रेमभरी चितवन से हमारी ओर देखकर मुस्कुरा दिया करते थे और हम देखती थीं तुम्हारा वह विशाल वक्षःस्थल जिस पर लक्ष्मी नित्य निवास करती हैं ! तब से अब तक हमारी लालसा निरन्तर बढ़ती जा रही है । हमारा मन अधिकाधिक मुग्ध होता जा रहा है ।१६।

प्यारे ! तुम्हारी यह अभिव्यक्ति व्रज-वनवासियों के सम्पूर्ण शोक-ताप को मिटाने वाली और विश्व का पूर्ण मंगल करने के लिए है। हमारा हृदय तुम्हारे प्रति लालसा से भरा हुआ है। कुछ थोड़ी सी ऐसी औषधि दो जो तुम्हारे निज जनों के हृदय-रोग को सर्वथा निर्मूल कर दे ।१७।

तुम्हारे चरण कमल से भी सुकुमार हैं। उन्हें हम अपने स्तनों पर भी डरते-डरते बहुत धीरे से रखती हैं कि कहीं उनको चोट न लग जाय । उन्हीं चरणों से तुम रात्रि के समय घोर जंगल में छिपे-छिपे

भटक रहे हो। क्या कंकड़-पत्थर आदि की चोट लगने से उनमें पीड़ा नहीं होती ? हमें तो उसकी सम्भावना मात्र से चक्कर आ रहा है; हम अचेत होती जा रही हैं। श्रीकृष्ण ! श्यामसुन्दर ! प्राणनाथ ! हमारा जीवन तुम्हारे लिए है; हम तुम्हारे लिए ही जी रही हैं, हम तुम्हारी हैं।१८।

इस भाँति गोपियां उच्च स्वर से श्रीकृष्ण का गुणगान करने लगीं। वे श्रीकृष्ण के दर्शन के लिए क्रन्दन करने लगीं और उनका वह रुदन ही गान के रूप में फूट निकला। ठीक उसी समय भगवान् श्रीकृष्ण पीताम्बर तथा वनमाला धारण किये हुए उनके बीच में प्रकट हो गये। उस समय उनका सस्मित मुख-कमल कामदेव को प्रलोभित करने वाला था।१९-२०।

४४

कालियमर्दनं—अथ वारिणि

(श्री मेप्पत्तूर नारायण भट्टपाद रचित श्रीमन्नारायणीयम् से)

श्लोक

वसुदेवसुतं देवं कंसचाणूरमर्दनं।
देवकीपरमानन्दं कृष्णं वन्दे जगद्गुरुम्॥

अर्थ

जगद्गुरु श्रीकृष्ण को नमस्कार जो वसुदेव का पुत्र है, स्वयं देव है, कंस और चाणूर का संहारक है तथा देवकी को परम आनन्द देने वाला है।

गीत

१—अथ वारिणि घोरतरं फणिनं
प्रतिवारयितुं कृतधीर्भगवन् ।
द्रुतमारिथ तीरगनीपतरुं
विषमारुतशोषितपर्णचयम् ॥

२—अधिरुह्य पदाम्बुरुहेण च तं
नवपल्लवतुल्यमनोज्ञरुचा ।
ह्रदवारिणि दूरतरं न्यपतः
परिघूर्णितघोरतरंगगणे ॥

३—भुवनत्रयभारभृतो भवतो
गुरुभारविकम्पिविजृम्भिजला ।
परिमज्जयति स्म धनुःशतकं
तटिनी झटिति स्फुटघोषवती ॥

४—अथ दिक्षु विदिक्षु परिक्षुभित-
भ्रमितोदरवारिनिनादभरैः ।
उदकादुदगादुरगाधिपतिः
त्वदुपान्तमशान्तरुषान्धमनाः ॥

५—फणशृंगसहस्रविनिःसृमर-
ज्वलदग्निकणोग्रविषाम्बुधरम् ।
पुरतः फणिनं समलोकयथा
बहुशृंगिणमंजनशैलमिव ॥

६—ज्वलदक्षिपरिक्षरदुग्रविष—

श्वसनोष्मभरः स महाभुजगः ।
परिदश्य भवन्तमनन्तबलं
समवेष्टयदस्फुटचेष्टमहो ॥

७—अविलोक्य भवन्तमथाकुलिते
तटगामिनि बालकधेनुगणे ।
व्रजगेहतलेऽप्यनिमित्तशतं
समुदीक्ष्य गता यमुनां पशुपाः ॥

८—अखिलेषु विभो भवदीयदशां
अवलोक्य जिहासुषु जीवभरम् ।
फणिबन्धनमाशु विमुच्य जवाद्
उदगम्यत हासजुषा भवता ॥

९—अधिरुह्य ततः फणिराजफणान्
ननृते भवता मृदुपादरुचा ।
कलशिंजितनूपुरमंजुमिलत्
करकंकणसंकुलसंक्वणितम ॥

१०—जहृषुः पशुपास्तुतुषुर्मुनयो
ववृषुः कुसुमानि सुरेन्द्रगणाः ।
त्वयि नृत्यति मारुतगेहपते
परिपाहि स मां त्वमदान्तगदात् ॥

अर्थ

हे भगवन् ! तूने यमुना के जल में निवास करने वाले उस महा

सर्प का विनाश करने का निश्चय कर लिया जो नदी के तट पर रहने वाले वृक्षों को नष्ट करने वाला और अपनी विष-वायु से उनके सारे पत्तों को सुखा डालने वाला था ।१।

तब उस कदम्ब वृक्ष पर तू चढ़ गया और नव पल्लवों के समान कान्ति युक्त अपने चरण-कमल से नदी का जल दूर तक हिलाने लगा जिससे नदी में जोर से लहरें उठने लगीं ।२।

चूंकि तू तीनों लोकों का भार वहन करता है, तेरे उस महान् भार से नदी का जल सौ-सौ धनुष की ऊँचाई तक उठने लगा और तटवर्ती प्रदेश में महान् कोलाहल मचने लगा ।३।

अब इस प्रकार चारों दिशाओं में उमड़ते, चक्कर लगाते पानी के कोलाहल के बीच सर्पराज पानी से बाहर निकल कर, बड़े क्रोध से अन्धा होकर तेरे पास आया ।४।

उसके हजारों फन पर्वत की चोटियों की तरह दीख रहे थे, उनमें जलते अङ्गारे के समान विष उमड़ रहा था जो बादलों के समान दीखता था । तू कई चोटियों वाले अंजन पर्वत के समान दीख रहा था ।५।

उस महासर्प की आँखें जल रही थीं, बड़ी गरम उसासों के साथ तीव्र विष उगल रहा था । अनन्त शक्ति से सम्पन्न तुमको कुछ भी विचलित न होते देख कर वह तुम पर लिपटने लगा ।६।

यमुना के तट पर सारे गोप बालक और पशु तुझे न देख पाने के कारण तथा घर में भी कई प्रकार के असगुन होते देख कर सब ग्वाल यमुना के पास चले आये ।७।

उन लोगों ने जब तेरी अवस्था देखी तब इतने दुःखी हुए कि सब

ने अपना प्राण त्याग करने का निश्चय कर लिया। यह देख कर तू सर्प के बन्धन को छुड़ा कर शीघ्र ही हँसन्मुख हो बाहर आ गया।८।

और तब सर्पराज के फनों पर तू चढ़ गया और अपने मृदुल पाद-कमलों से, नूपुर के सुमधुर निनाद तथा हाथों के कंकण की मनोहर ध्वनि के साथ तू वहाँ नाचने लगा।९।

हे गुरुवायूर, तुझे यों नृत्य करते देख कर गोपालक हर्षित हुए, मुनिजन सन्तुष्ट हुए, देवगण आकाश से पुष्पवर्षा करने लगे। तू मेरी रक्षा कर जो दुर्निवार रोग से पीड़ित हूँ।१०।

नामावली

ओ३म् नमो भगवते वासुदेवाय।

श्री विष्णु स्तोत्रम्

४५

अच्युतं केशवं

(श्री शंकराचार्यकृतं)

श्लोक

आदौ देवकिदेविगर्भजननं गोपीगृहे वर्धनं
मायापूतनजीवितापहरणं गोवर्धनोद्धारणम्।
कंसच्छेदनकौरवादिहननं कुन्तीसुतापालनं
एतद् भागवतं पुराणकथितं श्रीकृष्णलीलामृतम्॥

अर्थ

प्रारम्भ में देवकी देवी के गर्भ में जन्म ग्रहण करना, गोपी (यशोदा) के घर में लालन-पालन होना, मायाविनी पूतना का प्राण हरण, कंस तथा दूसरे असुरों का वध, कौरव तथा उनके साथियों का विनाश, कुन्ती के पुत्रों की रक्षा संक्षेप में भागवत की यही अमृतरूपी लीला कथा है।

गीत

अच्युतं केशवं रामनारायणं
कृष्णदामोदरं वासुदेवं हरिम् ।
श्रीधरं माधवं गोपिकावल्लभं,
जानकीनायकं रामचन्द्रं भजे ॥१॥

अच्युतं केशवं सत्यभामाधवं,
माधवं श्रीधरं राधिकाराधितम् ।
इन्दिरामन्दिरं चेतसा सुन्दरं,
देवकीनन्दनं नन्दजं सन्दधे ॥२॥

विष्णवे जिष्णवे शंखिने चक्रिणे,
रुक्मिणीरागिणे जानकीजानये ।
वल्लवीवल्लभायार्चितायात्मने,
कंसविध्वंसिने वंशिने ते नमः ॥३॥

कृष्ण गोविन्द हे राम नारायण,
श्रीपते वासुदेवाजित श्रीनिधे ।

अच्युतानन्द हे माधवाधोक्षज,
द्वारकानायक द्रौपदीरक्षक ॥४॥

राक्षसक्षोभितः सीतया शोभितो,
दण्डकारण्यभूपुण्यताकारण ।

लक्ष्मणेनान्वितो वानरैः सेवितोऽ
गस्त्यसम्पूजितो राघवः पातु माम् ॥५॥

धेनुकारिष्टकानिष्टकृद्द्वेषितः,
केशिहा कंसहृद्वंशिकावादकः ।

पूतनाकोपकः सूरजाखेलनो,
बालगोपालकः पातु मां सर्वदा ॥६॥

विद्युदुद्योतवत्प्रस्फुरद्वाससं,
प्रावृडम्भोदवत्प्रोल्लसद्विग्रहम् ।

वन्यया मालया शोभितोरःस्थलं,
लोहितांघ्रिद्वयं वारिजाक्षं भजे ॥७॥

कुंचितैः कुन्तलैर्भ्राजमानाननं,
रत्नमौलिं लसत्कुण्डलं गण्डयोः ।

हारकेयूरकं कंकणप्रोज्ज्वलं,
किंकिणीमंजुलं श्यामलं तं भजे ॥८॥

अच्युतस्याष्टकं यः पठेदिष्टदं,
प्रेमतः प्रत्यहं पूरुषः सस्पृहम् ।

वृत्ततः सुन्दरं कर्तृविश्वम्भर-
स्तस्य वश्यो हरिर्जायते सत्वरम् ॥६॥

अर्थ

अच्युत, केशव, राम, नारायण, कृष्ण, दामोदर, वासुदेव, हरि, श्रीधर, माधव, गोपिकावल्लभ तथा जानकीनायक रामचन्द्र को मैं भजता हूँ ।१।

अच्युत, केशव, सत्यभामापति, लक्ष्मीपति, श्रीधर, राधिका जी द्वारा आराधित, लक्ष्मीनिवास, परम सुन्दर, देवकीनन्दन, नन्दकुमार का चित्त से मैं ध्यान करता हूँ ।२।

जो विभु है, विजय है, शंखचक्रधारी है, रुक्मिणी जी का परम प्रेमी है, जानकी जी जिसकी धर्मपत्नी हैं तथा जो व्रजाङ्गनाओं का प्राणाधार है उस परम पूज्य, आत्मस्वरूप, कंसविनाशक, मुरलीमनोहर, तुझको नमस्कार करता हूँ ।३।

हे कृष्ण ! हे गोविन्द ! हे राम ! हे नारायण ! हे रमानाथ ! हे वासुदेव ! हे अजय ! हे शोभाधाम ! हे अच्युत ! हे अनन्त ! हे माधव ! हे अधोक्षज (इन्द्रियातीत) ! हे द्वारिकानाथ ! हे द्रौपदी-रक्षक ! मुझ पर कृपा कर ।४।

जो राक्षसों पर अति कुपित है, श्री सीता जी से शोभित है, दण्डकारण्य की भूमि की पवित्रता का कारण है, श्री लक्ष्मी जी द्वारा अनुगत है, वानरों से शोभित है, श्री अगस्त्य जी से पूजित है, वह रघुवंशी श्री रामचन्द्र मेरी रक्षा करें ।५।

धेनुक और अरिष्टासुर आदि का अनिष्ट करने वाला, शत्रुओं का ध्वंस करने वाला, केशी और कंस का वध करने वाला, पूतना पर

कोप करने वाला, यमुना-तट विहारी बाल-गोपाल सदा मेरी रक्षा करें ।६।

विद्युत् प्रकाश सदृश जिसका पीताम्बर विभासित हो रहा है, वर्षाकालीन मेघ के समान जिसका अति शोभायमान शरीर है, जिसका वक्षःस्थल वनमाला से विभूषित है और चरण-युगल अरुण वर्ण है, उस कमल-नयन श्री हरि को मैं भजता हूँ ।७।

जिसका मुख घुँघराले अलकों से सुशोभित है, मस्तक पर मणिमय मुकुट शोभा दे रहा है तथा कपोलों पर कुण्डल सुशोभित हैं, उज्ज्वल हार, केयूर, बाजूबन्द, कंकण और किंकिणीकलाप से सुशोभित मनोहर मूर्ति श्री श्यामसुन्दर को भजता हूँ ।८।

जो पुरुष इस अति सुन्दर छन्दों वाले और अभीष्ट फलदायक अच्युताष्टक को प्रेम और श्रद्धा से नित्य पढ़ता है, विश्वम्भर, विश्व-कर्ता श्री हरि शीघ्र ही उसके वशीभूत हो जाता है ।६।

४६

जय विट्ठल विट्ठल

श्लोक

दृष्ट्वेदं मानुषं रूपं तव सौम्यं जनार्दन ।
इदानीमस्मि संवृत्तः सचेताः प्रकृतिं गतः ।।

अर्थ

हे जनार्दन, अब तेरा यह मानवीय सौम्य रूप देखकर मैंने समाधान प्राप्त किया है और मैं स्वस्थचित्त हुआ हूँ ।

गीत

जय विट्ठल विट्ठल विट्ठल
जय विटठल पाण्डुरंग
जय विट्ठल विट्ठल विट्ठल
ओ विट्ठल विट्ठल विट्ठल
जय विट्ठल विट्ठल विट्ठल
जय विट्ठल पाण्डुरंग जय विट्ठल पाण्डुरंग

नामावली

जय जय विट्ठल पाण्डुरंग विट्ठल

४७

पंचै मामले पोल पेनि

(श्री तोंडारातिपति अजवार कृतं)

गीत

पंचै मामलै पोल मेनि
पविलवाय कमलच्चंगन्
अच्युता अमररेरे
आयर कुलवकोलुन्दे यनुम्
इच्चुवै तविर यान पोय्
इन्दिरालोकमालुं

अच्चुवै पेरिनुं वेरण्डेन्
अरंगमानगरुलाने ।

अर्थ

हे अच्युत (अविनाशी) देवाधिदेव, गोपालों के रक्षक, तेरा शरीर बड़े हरे पर्वत की तरह चमकता है। तेरा मुख मोती के समान है और तेरे नेत्र कमल के समान अरुण हैं। इस रस को छोड़ कर यदि स्वर्ग-सुख का भी उपभोग करने को मिले तो हे श्री रङ्गनायक, मैं वह नहीं चाहूँगा।

नामावली

अच्युत केशव राम नारायण
कृष्ण दामोदर पाहि मां सर्वदा।

अर्थ

हे अविनाशी, केशी असुर के संहारक, योगिजनों के हृदय-ज्योति, अन्तर्यामिन्, हे चित्ताकर्षक, संसार के अधिपति, तू मेरी रक्षा कर।

४८

हरि तुम हरो जन की भीर

(श्री मीराबाई कृतं)

श्लोक

भजे व्रजैकमण्डनं समस्तपापखण्डनं
स्वभक्तचित्तरंजनं सदैव नन्दनन्दनम् ।

सुपिंछगुच्छमस्तकं सुनादवेणुहस्तकं
अनंगरंगसागरं नमामि कृष्णनागरम् ॥

अर्थ

मैं सदा उस नन्दकुमार भगवान् कृष्ण की वन्दना करता हूँ तथा उसी को भजता हूँ जो व्रज का भूषण है, जो सम्पूर्ण पापों को नाश करता है, जो अपने भक्तों के हृदय को आनन्दित करता है, जिसके सिर पर मोर मुकुट तथा हाथ में मधुर वंशी है तथा जो सौंदर्यों का सागर है।

गीत

हरि तुम हरो जन की भीर।
द्रौपदी की लाज राखी तुम बढ़ायो चीर॥ हरि ··
भक्त कारन रूप नरहरि धर्‌यो आप शरीर।
हिरण्यकशिपु मार लीन्हों धर्‌यो नाहीं धीर॥ हरि···
बूड़ते गजराज राख्यो कियो बाहर नीर।
दासी मीरा लाल गिरिधर चरन कमल पर सीर॥ हरि···

अर्थ

हे हरि, तू अपने भक्तों की पीड़ा का निवारण कर।

तूने द्रौपदी की साड़ी को बढ़ा कर उसकी लज्जा की रक्षा की।

तूने अपने भक्त प्रह्लाद को बचाने के लिए नृसिंह रूप धारण किया तथा हिरण्यकश्यप का संहार किया। प्रह्लाद को बचाने के लिए तू इतना उतावला हो रहा था।

तूने डूबते हुए गजेन्द्र को बचाया और उसे जल से बाहर निकाला। हे गिरिधर ! तेरी दासी 'मीरा' तेरे चरण-कमल पर अपना मस्तक रखती है।

नामावली

हरि तुम हरो जन की भीर
हरि हरि हरि बोल
हरि हरि हरि ओ३म्

४६

महायोग-पीठे

(श्री शंकराचार्य कृतं)

श्लोक

समचरणसरोजं सान्द्रनीलाम्बुदाभं
जघननिहितपाणिं मण्डनं मण्डनानाम्।
तरुणतुलसिमालाकन्धरं कंजनेत्रं
सदयधवलहासं विट्ठलं चिन्तयामि ॥

अर्थ

मैं उस भगवान् विट्ठल का ध्यान करता हूँ जिसके कमल सदृश दोनों चरण जुड़े हुए हैं, जिसकी कान्ति नवमेघ के समान है, जिसने अपने दोनों हाथ कटि-प्रदेश में रखे हैं, संसार के सब आभूषणों का जो आभूषण है, जिसने गले में ताजा तुलसीमाला पहनी है, जिसके नेत्र कमल-सदृश हैं तथा जिसके चेहरे पर दयापूर्ण और उज्ज्वल स्मित है।

गीत

महायोगपीठे तटे भीमरथ्यां,
वरं पुण्डरीकाय दातुं मुनीन्द्रैः ।
समागत्य तिष्ठन्तमानन्दकन्दं,
परब्रह्मलिंगं भजे पाण्डुरंगम् ॥१॥

तडिद्वाससं नीलमेघावभासं,
रमामन्दिरं सुन्दरं चित्प्रकाशम् ।
वरं त्विष्टकायं समन्यस्तपादं,
परब्रह्मलिंगं भजे पाण्डुरंगम् ॥२॥

प्रमाणं भवाब्धेरिदं मामकानां,
नितम्बः कराभ्यां धृतो येन तस्मात् ।
विधातुर्वसत्यै धृतो नाभिकोशं,
परब्रह्मलिंगं भजे पाण्डुरंगम् ॥३॥

स्फुरत्कौस्तुभालंकृतं कण्ठदेशे,
श्रिया जुष्टकेयूरकं श्रीनिवासम् ।
शिवं शान्तमीड्यं वरं लोकपालं,
परब्रह्मलिंगं भजे पाण्डुरंगम् ॥४॥

शरच्चन्द्रबिम्बाननं चारुहासं,
लसत्कुण्डलाक्रान्तगण्डस्थलांगम् ।
जपारागबिम्बाधरं कंजनेत्रं,
परब्रह्मलिंगं भजे पाण्डुरंगम् ॥५॥

किरीटोज्ज्वलत्सर्वदिक्प्रान्तभागं,
सुरैरर्चितं दिव्यरत्नैरनर्घैः ।
त्रिभंगाकृतिं बर्हमाल्यावतंसं,
परब्रह्मलिंगं भजे पाण्डुरंगम् ॥६॥

विभुं वेणुनादं चरन्तं दुरन्तं,
स्वयं लीलया गोपवेषं दधानम् ।
गवां वृन्दकानन्ददं चारुहासं,
परब्रह्मलिंगं भजे पाण्डुरंगम् ॥७॥

अजं रुक्मिणीप्राणसंजीवनं तं,
परं धाम कैवल्यमेकं तुरीयम् ।
प्रसन्नं प्रपन्नार्तिहं देवदेवं,
परब्रह्मलिंगं भजे पाण्डुरंगम् ॥८॥

स्तवं पाण्डुरंगस्य वै पुण्यदं ये,
पठन्त्येकचित्तेन भक्त्या च नित्यम् ।
भवाम्भोनिधिं तेऽपि तीर्त्वान्तकाले,
हरेरालयं शाश्वतं प्राप्नुवन्ति ॥९॥

अर्थ

परब्रह्म के प्रतीकरूप पाण्डुरंग का मैं भजन करता हूँ जो भीमरथी नदी के तट पर, पुण्डरीक को वर प्रदान करने के लिए आकर महायोग मुद्रा में खड़ा है, मुनिजनों का स्वामी है तथा आनन्द देने वाला है ।१।

परब्रह्म के प्रतीकरूप उस पाण्डुरंग का मैं भजन करता हूँ जो नीलमेघ श्याम है, जिसके वस्त्र विद्युत् के समान कान्तिमान हैं. जो श्री लक्ष्मी का मन्दिर है, सुन्दर है, ज्ञान के प्रकाश से भरा है, श्रेष्ठ है, सुन्दर शरीर वाला है और दोनों पैर जोड़ कर खड़ा है ।२।

कटि प्रदेश में जिसने दोनों हाथ यह बताने के लिए रख रखे हैं कि मेरे भक्तों के लिए भवसागर की गहराई इतनी ही है तथा ब्रह्मा का निवास स्थान दर्शाने के लिए नाभि प्रदेश पकड़ रखा है, उस परब्रह्म प्रतीक पाण्डुरंग का मैं भजन करता हूँ ।३।

परब्रह्म प्रतीक पाण्डुरंग का मैं भजन करता हूँ जो प्रकाशयुक्त कौस्तुभमणि को गले में पहनता है, केयूरक हार के साथ, साक्षात् लक्ष्मी का भी आवास है, जो मंगलकारी है, शान्त है, स्तुत्य है, श्रेष्ठ है तथा लोकरक्षक है ।४।

परब्रह्म प्रतीक पाण्डुरंग का मैं भजन करता हूँ जिसका मुख शरत्कालीन चन्द्रमण्डल के समान है, जिसकी मुसकान मीठी है, गण्डप्रदेश में कुण्डल आकर लटक रहे हैं, जपापुष्प के समान लाल-लाल ओठ हैं, कमल सदृश नेत्र हैं ।५।

परब्रह्मप्रतीक पाण्डुरंग का मैं भजन करता हूँ जिसके मुकुट के प्रकाश से सारी दिशाएँ प्रकाशित हैं, जो देवताओं से दिव्य और अनमोल रत्नों द्वारा पूजित है, त्रिभंगी आकार में खड़ा है, जो मोर के पंखों से समलंकृत है ।६।

परब्रह्म प्रतीक पाण्डुरंग का मैं भजन करता हूँ जो सर्वव्यापी है, मुरली बजाता है, घूमता रहता है और जो अन्तरहित है, स्वयं लीला से ग्वालवेष धारण करने वाला है, गो समूह को आनन्द देने वाला और सुन्दर वेषधारी है ।७।

जो अजन्मा है, रुक्मिणी के लिए संजीवन है, जो स्वयं परमधाम है, कैवल्य है और तुरीय अवस्था है, जो सदा प्रसन्न रहता है, शरणागतों की पीड़ा मिटाता है, देवों का देव है उस परब्रह्म प्रतीक पाण्डुरंग का मैं भजन करता हूँ ।८।

जो लोग पाण्डुरंग के इस पुण्यप्रद स्तोत्र का नित्य भक्ति पूर्वक एकाग्रता के साथ पाठ करते हैं, वे अन्तकाल में संसार-सागर को पार कर के श्री हरि का शाश्वत स्थान प्राप्त करते हैं ।९।

नामावली

परब्रह्म रूपं भजे पाण्डुरंगम् ।

५०

प्रलयपयोधिजले
(दशावतार स्तोत्रम्)
(श्री जयदेव कृतं)

श्लोक

वेदानुद्धरते जगन्ति वहते भूगोलमुद्बिभ्रते,
दैत्यं दारयते बलिं छलयते क्षत्रक्षयं कुर्वते ।
पौलस्त्यं जयते हलं कलयते कारुण्यमातन्वते,
म्लेच्छान् मूर्च्छयते दशाकृतिकृते कृष्णाय तुभ्यं नमः ।।

अर्थ

उस कृष्ण को नमस्कार है जिसने वेदों का उद्धार किया, जगत् को धारण किया, दैत्य का संहार किया, बलि को छला, क्षत्रियों का

संहार किया, रावण को मारा, हलधर बना, करुणा का प्रसार किया, म्लेच्छों को मूर्च्छित किया, उस एक प्रभु ने ही इन दस अवतारों से अनेक लीलाएं कीं।

गीत

प्रलयपयोधिजले धृतवानसि वेदम्।
विहितवहित्रचरित्रमखेदम् ॥
केशव धृतमीनशरीर जय जगदीश हरे।
गोपालकृष्ण जय जगदीश हरे ॥१॥

क्षितिरतिविपुलतरे तव तिष्ठति पृष्ठे।
धरणीधरणकिणचक्रगरिष्ठे ॥
केशव धृतकच्छपरूप जय जगदीश हरे।
गोपालकृष्ण जय जगदीश हरे ॥२॥

वसति दशनशिखरे धरणी तव लग्न।
शशिनि कलंककलेव निमग्ना ॥
केशव धृतसूकररूप जय जगदीश हरे।
गोपालकृष्ण जय जगदीश हरे ॥३॥

तव करकमलवरे नखमद्भुतश्रृङ्गम्।
दलितहिरण्यकशिपुतनुभृङ्गम् ॥
केशव धृतनरहरिरूप जय जगदीश हरे।
गोपालकृष्ण जय जगदीश हरे ॥४॥

छलयसि विक्रमणे बलिमद्भुतवामन ।
पदनखनीरजनितजनपावन ॥
केशव धृतवामनरूप जय जगदीश हरे ।
गोपालकृष्ण जय जगदीश हरे ॥५॥

क्षत्रियरुधिरमये जगदपगतपापम् ।
स्नपयसि पयसि शमितभवतापम् ॥
केशव धृतभृगुपतिरूप जय जगदीश हरे ।
गोपालकृष्ण जय जगदीश हरे ॥६॥

वितरसि दिक्षु रणे दिक्पतिकमनीयम् ।
दशमुखमौलिबलिं रमणीयम् ॥
केशव धृतरघुपतिरूप जय जगदीश हरे ।
गोपालकृष्ण जय जगदीश हरे ॥७॥

वहसि वपुषि विशदे वसनं जलदाभम् ।
हलहतिभीतिमिलितयमुनाभम् ॥
केशव धृतहलधररूप जय जगदीश हरे ।
गोपालकृष्ण जय जगदीश हरे ॥८॥

निन्दसि यज्ञविधेरहह श्रुतिजातम् ।
सदयहृदयदर्शितपशुघातम् ॥
केशव धृतबुद्धशरीर जय जगदीश हरे ।
गोपालकृष्ण जय जगदीश हरे ॥९॥

म्लेच्छनिवहनिधने कलयति करवालम् ।
धूमकेतुमिव किमपि करालम् ॥
केशव धृतकल्किशरीर जय जगदीश हरे ।
गोपालकृष्ण जय जगदीश हरे ॥१०॥

श्री जयदेवकवेरिदमुदितमुदारम् ।
शृणु सुखदं शुभदं भवसारम् ॥
केशव धृतदशविधरूप जय जगदीश हरे ।
गोपालकृष्ण जय जगदीश हरे ॥११॥

अर्थ

हे मीन अवतारधारी केशव ! हे जगदीश्वर ! हे हरे ! प्रलय-काल में बढ़ते रहते हुए समुद्रजल में बिना क्लेश नौका चलाने की लीला करते हुए तूने वेदों की रक्षा की थी, तेरी जय हो ।१।

हे केशव ! पृथ्वी को धारण करने के चिह्न से कठोर और अत्यन्त दृढ़ तेरी पीठ पर पृथ्वी स्थित है, ऐसे कच्छपरूपधारी जगत्पति हरि, तेरी जय हो ।२।

चन्द्रमा में निमग्न हुई कलंकरेखा के समान यह पृथ्वी तेरे दाँत की नोक पर अटकी हुई सुशोभित हो रही है, ऐसे शूकररूपधारी जगत्पति हरि केशव तेरी जय हो ।३।

हिरण्यकशिपुरूपी तुच्छ मृग को चीर डालने वाले विचित्र नुकीले तेरे नख करकमल में हैं, ऐसे नृसिंहरूपधारी जगत्पति हरि केशव तेरी जय हो ।४।

हे अद्‌भुत वामरूपधारी केशव तूने पैर बढ़ा कर राजा बलि को छला तथा अपने चरण-नखों के जल से लोगों को पवित्र किया, ऐसे हे जगत्पति हरि, तेरी जय हो ।५।

हे केशव ! तू जगत् के पाप और तापों का नाश करते हुए उसे क्षत्रियों के रुधिर-रूप जल से स्नान कराता है, ऐसे हे परशुरामरूपी जगत्पति भगवान् केशव, तेरी जय हो ।६।

जो युद्ध में सब दिशाओं में लोकपालों को प्रसन्न करने वाले रावण के सिर की सुन्दर बलि देता है, ऐसे हे श्री रामावतारधारी जगत्पति भगवान् केशव, तेरी जय हो ।७।

जो अपने गौर वर्ण में हल के भय से आकर मिली हुई यमुना मेघ के सदृश नीलाम्बर धारण किये रहता है, ऐसे बलरामरूपधारी जगत्पति भगवान् केशव, तेरी जय हो ।८।

सदय हृदय से पशुहत्या की कठोरता दिखाते हुए यज्ञ-विधान सम्बन्धी श्रुतियों की निन्दा करने वाले बुद्धरूपधारी जगत्पति भगवान् केशव, तेरी जय हो ।९।

जो म्लेच्छ समूह का नाश करने के लिए धूमकेतु के समान अत्यन्त भयंकर तलवार चलाता है, ऐसे कल्किरूपधारी जगत्पति भगवान् केशव, तेरी जय हो ।१०।

(हे भक्तो) जयदेव कवि की कही हुई इस मनोहर, आनन्ददायक, कल्याणमय तत्त्वरूपी स्तुति को सुनो । हे दशावतारधारी ! जगत्पति, हरि, केशव, तेरी जय हो ।११।

नामावली

केशव माधव गोविन्द जय ।
राधेकृष्ण मुकुन्द जय जय ॥

श्री देवी स्तोत्रम्

५१

न तातो न माता

(भवान्यष्टकम्)

(श्रीशङ्कराचार्यकृतं)

श्लोक

अम्बा शाम्भवि चन्द्रमौलिरबलाऽपर्णा उमा पार्वती,
काली हैमवती शिवा त्रिनयना कात्यायनी भैरवी.
सावित्री नवयौवना शुभकरी साम्राज्यलक्ष्मीप्रदा,
चिद्रूपी परदेवता भगवती श्रीराजराजेश्वरी ।

स्तोत्र

न तातो न माता न बन्धुर्न दाता,
न पुत्रो न पुत्री न भृत्यो न भर्ता ।
न जाया न विद्या न वृत्तिर्ममैव,
गतिस्त्वं गतिस्त्वं त्वमेका भवानि ।१।

भवाब्धावपारे महादुःखभीरुः,
पपात प्रकामी प्रलोभी प्रमत्तः ।
कुसंसारपाशप्रबद्धः सदाहं,
गतिस्त्वं गतिस्त्वं त्वमेका भवानि ।२।

न जानामि दानं न च ध्यानयोगं,
न जानामि तन्त्रं न च स्तोत्रमन्त्रम्।
न जानामि पूजां न च न्यासयोगं,
गतिस्त्वं गतिस्त्वं त्वमेका भवानि।३।

न जानामि पुण्यं न जानामि तीर्थं,
न जानामि मुक्तिं लयं वा कदाचित्।
न जानामि भक्तिं व्रतं वापि मातः,
गतिस्त्वं गतिस्त्वं त्वमेका भवानि।४।

कुकर्मी कुसंगी कुबुद्धिः कुदासः,
कुलाचारहीनः। कदाचारलीनः।
कुदृष्टिः कुवाक्यप्रबन्धः सदाहं,
गतिस्त्वं गतिस्त्वं त्वमेका भवानि।५।

प्रजेशं रमेशं महेशं सुरेशं,
दिनेशं निशीथेश्वरं वा कदाचित्।
न जानामि चान्यत् सदाहं शरण्ये,
गतिस्त्वं गतिस्त्वं त्वमेका भवानि।६।

विवादे विषादे प्रमादे प्रवासे,
जले चानले पर्वते शत्रुमध्ये।
अरण्ये शरण्ये सदा मां प्रपाहि,
गतिस्त्वं गतिस्त्वं त्वमेका भवानि।७।

अनाथो दरिद्रो जरारोगयुक्तो,
महाक्षीणदीनः सदा जाड्यवक्त्रः ।
विपत्तौ प्रविष्टः प्रणष्टः सदाहं,
गतिस्त्वं गतिस्त्वं त्वमेका भवानि ।८।

अर्थ

हे भवानी, मेरे न कोई पिता है, न माता है, कोई सम्बन्धी नहीं, न कोई देने वाला है, न तो पुत्र है, न पुत्री है, नौकर नहीं, न मालिक ही है। पत्नी नहीं। न तो मुझमें ज्ञान है और कुछ भी मेरा व नहीं है। तू ही एक मेरा सहारा है।१।

मैं वड़ा कामी, लोभी और प्रमादी हूँ। महादुःखों से भरे हुए इस अपार संसार-सागर में गिर गया हूँ तथा हमेशा इसी संसार-पाश में वंधा हुआ हूँ। अतः हे देवि ! तू ही एक मेरा सहारा है।२।

न तो मैं दान करना जानता हूँ, न ध्यान-योग से मेरा परिचय है। मैं किसी तन्त्र को नहीं जानता हूँ न किसी स्तोत्र-मन्त्र का ही मुझे ज्ञान है। मैं यह भी नहीं जानता कि पूजा कैसे की जाती है और न योग-विद्या की ही मुझे जानकारी है। हे देवि, मेरे लिए तू ही एक सहारा है।३।

पुण्य क्या है यह मुझे मालूम नहीं है और न किसी तीर्थ-क्षेत्र को मैं जानता हूँ। मोक्ष या लय योग को भी मैंने कभी नहीं जाना। न मैं भक्ति को जानता हूँ और न व्रत आदि को पहचानता हूँ। अतः हे माता ! तू ही एक मेरा सहारा है।४।

हे देवी ! वड़ा कुकर्मी हूँ, कुसंगी हूँ, कुवुद्धि हूँ और बुराई का गुलाम हूँ। कुल के आचारों से विहीन और बुरे आचरणों में लीन हूँ।

मेरी दृष्टि कुत्सित है और हमेशा बुरे वाक्यों का ही उच्चारण करता हूँ। पर हे माता ! तू ही एक मेरा सहारा है ।५।

हे शरण्ये देवी ! ब्रह्मा, विष्णु, महेश, देवेन्द्र, सूर्य या चन्द्र किसी को मैं नहीं जानता हूँ। कभी भी तेरे सिवा मैं किसी और को पहचानता नहीं हूँ। अतः हे माता ! तू ही मेरा सहारा है ।६।

देवी ! जब कभी मैं विवाद में हूँ, दुःख में हूँ, असावधान रहूँ, प्रवास में रहूँ या कहीं पानी में, अग्नि में, पर्वत या शत्रुओं के बीच में रहूँ तथा जङ्गल में रहूँ, पर हर समय हे माता, तू मेरी रक्षा कर। तू ही एक मेरा सहारा है ।७।

मैं अनाथ हूँ, गरीब हूँ, बुढ़ापा और रोगों से भरा हुआ हूँ, बहुत खिन्न हूँ, दीन हूँ, हमेशा चेहरे पर जड़ता छाई रहती है, संकट में पड़ गया हूँ और सर्वदा विनाश की ओर जा रहा हूँ। हे देवी, तू ही मेरा सहारा है ।८।

नामावली

ओ३म् शक्ति ओ३म् शक्ति ओ३म् शक्ति पाहि माम् ।
ओ३म् शक्ति ओ३म् शक्ति ओ३म् शक्ति रक्ष माम् ।।

५२

अम्ब ललिते

श्लोक

सर्वमंगलमांगल्ये शिवे सर्वार्थसाधिके ।
शरण्ये त्र्यम्बके गौरि नारायणि नमोस्तुते ।।

अर्थ

हे पार्वती, हे शिवपत्नी, सम्पूर्ण पुरुषार्थों को सिद्ध करने वाली, मंगल प्रदान करने वाली, भक्तों की रक्षा करने वाली, तीन नेत्रों वाली, माँ दुर्गा ! तुम्हें नमस्कार है।

गीत

अम्ब ललिते मां पालय परशिववनिते
सौभाग्यजननि (ललिते...)

१. अम्ब सीते परमानन्दविलसिते
गुरुभक्तजनौघवृते परतत्त्वसुधारसमिलिते
अम्ब शासिनि दुरितविनाशिनि निगमनिवासिनि
विजयविलासिनि (भगवति) (ललिते)

२. अम्ब बाले कुंकुमरेखांकितफाले
परिपालितसुरमुनिजाले भवपाशविमोचनमूले
अम्ब हिमगिरितनये कमलसुनिलये
सुमहित सदये (देवि) सुन्दरहृदये (ललिते ···)

३. अम्ब रामे घनसुन्दरमेघश्यामे
निलयीकृतहरतनुवामे सकलागमविदितोद्धामे
अम्ब वामचारिणि कामविहारिणि
सामविनोदिनि (देवि) सोमशेखरि (ललिते)

४. अम्ब तुंगे भृंगालकपरिलसदंगे
परिपूरितकरुणापांगे सुरशात्रवगर्वविभंगे
अम्ब संगरहितमुनिपुंगवनुतपदे
मंगलशुभकरि (देवि) सर्वमंगले (ललिते)

५. अम्ब कुन्दे परिवन्दितसनकसनन्दे
वन्दारुमहीसुरवृन्दे मृगराजस्कन्धे स्पन्दे
अम्ब इन्दिरमन्दिरे विन्दुसमाकुल
सुन्दरचरणे (देवि) त्रिपुरसुन्दरि (ललिते)

अर्थ

हे ललिते ! हे शिवपत्नी ! हे अम्बे ! सौभाग्य की जननी मेरा पालन कर ।

हे अम्बे ! हे सीते ! तू परमानन्द में विलास करने वाली है; तू उनका पालन करती है जिनमें गुरुभक्ति की भावना भरी हुई है तथा जो परम तत्त्व के रस से मिले हुए हैं। हे अम्बे ! तू शासन करती है; सारे दुर्भाग्यों का विनाश करने वाली है। तू वेदों में निवास करती है; विजय में विलास करती है ।१।

हे अम्बे ! हे बाले ! तुम्हारे ललाट पर कुंकुमरेखा है, तुमसे ही देवता तथा मुनिजन परिपालित हैं। तू भवपाश का उन्मूलन करती है; हे अम्बे! तू हिमालय की पुत्री है. तेरी आंखें कमल के समान हैं, तू करुणा तथा कृपा की आगार है; हे देवी तेरा हृदय सुन्दर है।२।

हे अम्बे ! रामे ! तू शिव के वाम पार्श्व को सुशोभित करती है, जो शिव श्यामल मेघ के समान सुनील तथा सुन्दर हैं तथा जो

सारे वेदों के धाम हैं। हे अम्बे ! तू वाम भाग में लीला करने वाली है, अपनी कामना के अनुसार चलने वाली है, सामगान में आनन्द लेती है तथा तू सोमेश्वर भगवान् शिव की पत्नी है।३।

हे अम्बे ! तेरी भौंहें ऊँची हैं, कपाल पर अलकें शोभायमान हैं। तू करुणासागर है तथा देवशत्रुओं का विनाशक है। हे अम्बे ! मुनिजन जो संगरहित हैं, वे तेरे चरणों का नमन करते हैं। हे देवी ! तू मंगलमूर्ति है। तू शुभ करने वाली है।४।

अम्बे ! तेरा अंग कमल के समान है; तू सनक, सनन्दन, देवताओं तथा ब्राह्मणों द्वारा परिपूजित है। तू मृगराज सिंह के कन्धे पर आसीन है। हे अम्बे ! तू शिव की पत्नी है जिसके सिर पर चन्द्रमा शोभायमान है। हे माते ! तू तीनों लोकों में सर्वसुन्दरी है। तेरे चरण सुन्दर हैं। तू मेरी रक्षा कर।५।

नामावली

सर्वशक्तिदायिनी माता पाहि माम्।
सर्वशक्तिदायिनी माता रक्ष माम्॥

५३

भाग्यद लक्ष्मि बारम्म

(श्री महालक्ष्मी स्तोत्रम्)

(श्रीपुरन्दरदासकृतं)

श्लोक

अंगं हरेः पुलकभूषणमाश्रयन्ती
भृंगांगनेव मुकुलाभरणं तमालम्।

अंगीकृताखिलविभूतिरपांगलीला
मांगल्यदास्तु मम मंगलदेवतायाः ॥

अर्थ

हे लक्ष्मी ! आप भगवान् हरि के पुलकित अङ्गों को सुशोभित करती हुई विराजमान् होती हैं मानो कि भ्रमर युवतियाँ पुष्पित तमाल वृक्ष को सुशोभित कर रही हों । आपकी जो विलासपूर्ण दृष्टि सम्पूर्ण ऐश्वर्यों को प्रदान करती है, वह मेरा मंगल करे !

गीत

भाग्यद लक्ष्मि बारम्म
नम्मम्म नी सौ
भाग्यद लक्ष्मि बारम्म

१. हेज्जेय मेले हेज्जेय निक्कुत
गज्जे काल्गल ध्वनिय तोरुत
सज्जन साधु पूजये वेलिगे
मज्जिगे योलगिन वेण्णेयन्ते । (भाग्यद…)

२. कनकवृष्टिय करेयुत बारे
मनके मानव सिद्धिय तोरे
दिनकरकोटि तेजदि होलेव
जनकरायन कुमारि वेग । (भाग्यद…)

३. अत्तित्तगलदे भक्तरमनेयलि
नित्यमहोत्सव नित्यसुमंगल
सत्यवतोरुव साधुसज्जनर
चित्तदि होलेवा पुत्तलि वोम्बे। (भाग्यद…)

४. संख्येयिल्लद भाग्यवकोट्ट्
कंकण कैय तिरुवुत वारे
कुंकुमांकित पंकजलोचने
वेंकटरमणन विंकदराणि। (भाग्यद…)

५. सक्करे तुप्प कालिवे हरिसि
शुक्रवारद पूजयवेलेगे
अक्करवुल अलगिरिरंगन
चोक्कपुरन्दर विठलन राणि। (भाग्यद…)

अर्थ

हे भाग्यलक्ष्मी, आइए। हे माँ सौभाग्यलक्ष्मी, दर्शन दीजिए।

जब पुण्यशाली पवित्रात्मा जन आपकी अराधना करते हैं, उस समय पग पर पग निक्षेप करती हुई तथा नूपुरों से अलंकृत चरणों से मन्द-मन्द ध्वनि करती हुई आप प्रकट हों, जैसे छाछ से नवनीत प्रकट होता है।१।

हे जनकात्मजा, सहस्रों सूर्यों की आभा के समान विभासित आप स्वर्णवृष्टि करती हुई और मेरे मन को सिद्धि प्रदान करती हुई शीघ्र ही पधारें।२।

हे देवी, आप असंदिग्ध रूप से अपने भक्तों के घरों में नित्य ही महोत्सव तथा सुमंगल लाती हैं और सत्यदर्शी महात्माओं के सूक्ष्म मन में प्रकाशित होती हैं ।३।

हे वेंकटरमण की अर्द्धांगिनी, हे कमलनेत्रों वाली, कुंकुमार्चि देवी ! आप अतुल सम्पत्ति प्रदान करने वाली हैं। कंकणों से अलंकृत अपनी भुजाओं को फैलाए हुए मेरे सन्निकट आइए ।४।

हे पुरन्दर विट्ठल की रानी ! हे अलगिरिरंग की प्रेयसी ! शुक्रवार को आपकी पूजा करते समय जब शक्कर तथा घृत की धारा प्रवाहित हो, तो उस समय आप पधारें ।५।

नामावली

ओ३म् शक्ति ओ३म् शक्ति ओ३म् शक्ति पाहि माम् ।
ओ३म् शक्ति ओ३म् शक्ति ओ३म् शक्ति रक्ष माम् ॥

५४

नमस्ते जगद्धात्रि

(श्री महालक्ष्मी स्तोत्रं)

(देवकृतं)

श्लोक

या सा पद्मासनस्था विपुलकटितटी पद्मपत्रायताक्षी
गम्भीरावर्त्तनाभिः स्तनभरनमिता शुभ्रवस्त्रोत्तरीया
लक्ष्मीर्दिव्यैर्गजेन्द्रैर्मणिगणखचितैः स्नापिता हेमकुम्भै-
र्नित्यं सा पद्महस्ता मम वसतु गृहे सर्वमांगल्ययुक्ता ॥

अर्थ

जो लक्ष्मी कमलासन पर बैठी है, जिसका कटि-प्रदेश विशाल है, जिसकी आँखें कमलदलों के समान दीर्घ हैं, जिसकी नाभि जल के भँवर के समान गहरी है, जो स्तन-भार से कुछ झुकी हुई है, जिसका परिधान वस्त्र स्वच्छ है, जिसके दोनों तरफ श्रेष्ठ हाथी हीरे-मोतियों से जड़े हुए स्वर्ण-कुम्भों से स्नान करा रहे हैं, जिसके हाथ में कमल है और जो सकल मंगलों से परिपूर्ण है, वह लक्ष्मी मेरे घर में सदा निवास करे !

गीत

नमस्ते जगद्धात्रि सद्ब्रह्मरूपे
नमस्ते हरोपेन्द्रधात्रादिवन्द्ये ।
नमस्ते प्रपन्नेष्टदानैकदक्षे
नमस्ते महालक्ष्मि कोलापुरेशि ॥१॥

विधिः कृत्तिवासा हरिर्विश्वमेतत्
सृजत्यत्ति पातीति यत्तत् प्रसिद्धम् ।
कृपालोकनादेव ते शक्तिरूपे
नमस्ते महालक्ष्मि कोलापुरेशि ॥२॥

त्वया मायया व्याप्तमेतत् समस्तं
धृतं लीलया देवि कुक्षौ हि विश्वम् ।
स्थितं बुद्धिरूपेण सर्वत्र जन्तौ-
नमस्ते महालक्ष्मि कोलापुरेशि ॥३॥

यया भक्तवर्गा हि लक्ष्यन्त एते
त्वयाऽत्र प्रकामं कृपापूर्णदृष्ट्या ।
अतो गीयसे देवि लक्ष्मीरिति त्वं
नमस्ते महालक्ष्मि कोलापुरेशि ॥४॥

पुनर्वाक्पटुत्वादिहीना हि मूका
नरैस्तैर्निकामं खलु प्रार्थ्यसे यत् ।
निजेष्टाप्तये तच्च मूकाम्बिका त्वं
नमस्ते महालक्ष्मि कोलापुरेशि ॥५॥

यदद्वैतरूपात् परब्रह्मणस्त्वं
समुत्था पुनर्विश्वलीलोद्यमस्था ।
तदाहुर्जनास्त्वां हि गौरीं कुमारीं
नमस्ते महालक्ष्मि कोलापुरेशि ॥६॥

हरीशादिदेहोत्थतेजोमयप्र-
स्फुरच्चक्रराजाख्यलिंगस्वरूपे ।
महायोगिकोलर्षिहृत्पद्मगेहे
नमस्ते महालक्ष्मि कोलापुरेशि ॥७॥

नमः शंखचक्राभयाभीष्टहस्ते
नमस्त्र्यम्बके गौरि पद्मासनस्थे ।
नमः स्वर्णवर्णे प्रसन्ने शरण्ये
नमस्ते महालक्ष्मि कोलापुरेशि ॥८॥

इदं स्तोत्ररत्नं कृतं सर्वदेवै-
हृदि त्वां समाधाय लक्ष्म्यष्टकंयः ।
पठेन्नित्यमेष व्रजत्याशु लक्ष्मीं
सुविद्यां च सत्यं भवत्याः प्रसादात् ॥९॥

अर्थ

हे माता, विश्वधारिणी, सद्ब्रह्मस्वरूपिणी तुझे प्रणाम। हे ईश्वर, विष्णु, ब्रह्मा आदि से पूज्य, तू शरणागतों को वांछित फल देने में समर्थ है। हे कोलापुरेशि महालक्ष्मी ! तुझे प्रणाम।१।

ब्रह्मा विश्व का सृजन करते हैं, विष्णु पालन करते हैं और शिव संहार करते हैं—ऐसी जो प्रसिद्ध हुई है, वस्तुत: यह सबकुछ तेरी कृपा भरी निगाहों के बल पर होता है। हे शक्तिरूपिणी महालक्ष्मी ! तुझे प्रणाम।२।

हे महालक्ष्मी, इस समस्त विश्व को अपनी माया से तूने व्याप्त कर लिया है और तूने इसे अपने पेट में खेल में ही रख लिया है। प्रत्येक प्राणीमात्र के अन्दर बुद्धि के रूप में तू स्थित है। हे कोलापुरेशि, तुझे प्रणाम है।३।

हे माते, चूंकि सभी भक्तजनों की ओर तू अत्यन्त कृपापूर्ण दृष्टि से देखा करती है, इसलिए लक्ष्मी के नाम से तू गायी जाती है। हे कोलापुरेशि, तुझे प्रणाम।४।

जिन लोगों में बोलने की शक्ति नहीं है, ऐसे मूकजन तुझसे वर माँगते रहते हैं, जिससे कि उनकी इच्छापूर्ति हो। इसी लिए तेरा नाम मूकाम्बिका पड़ा है। हे कोलापुरेशि, तुझे प्रणाम।५।

हे महालक्ष्मी ! तूने अद्वैतस्वरूप परब्रह्म के साथ विश्व-सृष्टि आदि के काम में योग देना शुरू कर दिया है। इसी लिए लोग तुझे गौरी कुमारी कहते हैं। ऐसी हे कोलापुरेशि, तुझे प्रणाम।६।

हे कोलापुरेशि ! विष्णु, शिव आदि के शरीर की कान्ति से हुए चक्र राजा के लिंग के स्वरूप वाली और कोल ऋषि के हृदय रूपी पद्म में बसने वाली हे महायोगिनी, महालक्ष्मी, तुझे प्रणाम।७।

हे देवी! तूने अपने चारों हाथों में—एक में शङ्ख और दूसरे में चक्र धारण किया है, तीसरे से अभय दान और चौथे से वांछित फल दे रही है। हे पद्मासन में स्थित गौरी, तीन नयनों वाली, सुवर्ण सम कान्ति-युते, प्रसन्ने, एकमात्र शरण्ये, तुझे प्रणाम।८।

सभी देवों ने जिन शब्दों से तेरी स्तुति की है, उसी लक्ष्मी-अष्टक नामक स्तोत्र-रत्न का पाठ जो व्यक्ति अपने हृदय में तेरी स्थापना करके रोज करता है, वह तेरी कृपा से सम्पत्ति और आत्मज्ञान को निश्चय ही प्राप्त कर लेता है।९।

५५

जय तुङ्गतरंगे गंगे

श्री गङ्गादेवी स्तोत्रम्

(श्रीसदाशिवब्रह्मेन्द्रकृतं)

श्लोक

भगवति तव तीरे नीरमात्राशनोऽहं
विगतविषयतृष्णः कृष्णमाराधयामि ।
सकलकलुषभंगे स्वर्गसोपानसंगे
तरलतरतरंगे देवि गंगे प्रसीद ॥

अर्थ

हे देवी ! भगवती गंगे, तेरा किनारे ऐसा है जो मनुष्य सारे दोषों और पापों को मिटा देता है, जो स्वर्ग की सीढ़ी के समान है और जिसकी लहरें कलकल करती रहती हैं, ऐसे किनारे पर मैं केवल जलहारी रहकर, सभी प्रकार के विषयों की तृष्णा को छोड़ कर कृष्ण की अराधना करता हूँ । तू मुझ पर प्रसन्न हो !

गीत

जय तुंगतरंगे गंगे, जय तुंगतरंगे ।

कमलभवाण्डकरण्डपवित्रे,
वहुविधबन्धच्छेदलवित्रे ।   (जय ‥)

दूरीकृतजनपापसमूहे,
पूरितकच्छपगुच्छग्राहे ।   (जय…)

परमहंसगुरुभणितचरित्रे,
ब्रह्मविष्णुशंकरनुतिपात्रे ।   (जय…)

अर्थ

उन्नत तरङ्गों वाली हे गंगे, तेरी जय हो । तेरी ऊँची लहरों की जय हो ।

तू सारे ब्रह्माण्ड को पावन करने वाली है और अनेक प्रकार के वन्धनों को काटने वाली दराँती है ।

मनुष्यों के सकलविध पापों को दूर करने वाली तथा तेरे अन्दर मगर-मच्छ आदि भरे पड़े हैं।

तेरा गुणगान परमहंस गुरुजन करते हैं और ब्रह्मा, विष्णु तथा महेश के द्वारा तू स्तुत्य है। तेरी जय हो !

नामावली

जय तुंगतरंगे गंगे
जय तुंगतरंगे।

५६

नमस्ते शरण्ये

(श्री दुर्गास्तोत्रम्)

श्लोक

सर्वस्वरूपे सर्वेशे सर्वशक्तिसमन्विते।
भयेभ्यस्त्राहि नो देवि, दुर्गे देवि नमोऽस्तुते॥

अर्थ

हे सर्वस्वरूपमयी, सर्वेश्वरी, सम्पूर्ण शक्तियों से सम्पन्न माँ दुर्गा देवी, आपको नमस्कार है। हे देवी, (जन्म-मृत्यु के) भय से मेरी रक्षा करो।

स्तोत्रम्

१. नमस्ते शरण्ये शिवे सानुकम्पे
नमस्ते जगद्व्यापिके विश्वरूपे

नमस्ते जगद्वन्द्यपादारविन्दे
नमस्ते जगत्तारिणि त्राहि दुर्गे ।

२. नमस्ते जगच्चिन्त्यमानस्वरूपे
नमस्ते महायोगिनि ज्ञानरूपे
नमस्ते नमस्ते सदानन्दरूपे
नमस्ते जगत्तारिणि त्राहि दुर्गे ।

३. अनाथस्य दीनस्य तृष्णातुरस्य
भयार्तस्य भीतस्य बद्धस्य जन्तोः
त्वमेका गतिर्देवि निस्तारकर्त्री
नमस्ते जगत्तारिणि त्राहि दुर्गे ।

४. अरण्ये रणे दारुणे शत्रुमध्येऽ
नले सागरे प्रान्तरे राजगेहे
त्वमेका गतिर्देवि निस्तारनौका
नमस्ते जगत्तारिणि त्राहि दुर्गे ।

५. अपारे महादुस्तरेऽत्यन्तघोरे
विपत्सागरे मज्जतां देहभाजाम्
त्वमेका गतिर्देवि निस्तारहेतु-
र्नमस्ते जगत्तारिणि त्राहि दुर्गे ।

६. नमश्चण्डिके चण्डदोर्दण्डलीला-
समुत्खण्डिताखण्डलाशेषशत्रो

त्वमेका गतिर्देवि निस्तारबीजे
नमस्ते जगत्तारिणि त्राहि दुर्गे ।

७. त्वमेवाघभावाधृतासत्यवादी-
र्न जाताजिताक्रोधनात्क्रोधनिष्ठा
इडा पिङ्गला त्वं सुषुम्ना च नाडी
नमस्ते जगत्तारिणि त्राहि दुर्गे ।

८. नमो देवि दुर्गे शिवे भीमनादे
सरस्वत्यरुन्धत्यमोघस्वरूपे
विभूतिःशची कालरात्रिः सती त्वं
नमस्ते जगत्तारिणि त्राहि दुर्गे ।

९. शरणमसि सुराणां सिद्धविद्याधराणां
मुनिमनुजपशूनां दस्युभिस्त्रासितानाम्
नृपतिगृहगतानां व्याधिभिः पीडितानां
त्वमसि शरणमेका देवि दुर्गे प्रसीद ।

१०. सर्वं वा श्लोकमेकं वा यः पठेद्भक्तिमान् सदा ।
स सर्वं दुष्कृतं त्यक्त्वा प्राप्नोति परमं पदम् ॥

अर्थ

हे देवी, तू शुभकारिणी है। लोगों की तू ही एकमात्र शरण है। तू परम दयालु है, तीनों लोकों में व्याप्त है। अखिल विश्व ही तेरा रूप है। तेरे चरण-कमल समस्त संसार के लिए पूज्य हैं। तू जन्म-मृत्यु

रूपी सागर को पार करने के लिए सबों की नौका है। तुझको नमस्कार है, नमस्कार है ! हे जगत् का उद्धार करने वाली माँ दुर्गा, तू मेरी रक्षा कर ।१।

तेरा रूप सबों की ध्येय-वस्तु है। तू महान् योगिनी तथा ज्ञान और आनन्द-स्वरूपिणी है। तुझको नमस्कार है, नमस्कार है ! हे जगत् का उद्धार करने वाली माँ दुर्गा, तू मेरी रक्षा कर ।२।

अनाथ, दीन, तृष्णातुर, भयार्त, शोकाकुल तथा संसार-चक्र में आवद्ध प्राणियों के उद्धार के लिए तू ही एकमात्र मेरी गति है। तुझको नमस्कार है, नमस्कार है ! हे जगत् का उद्धार करने वाली माँ दुर्गा, तू मेरी रक्षा कर ।३।

वन में, घोर संग्राम में, शत्रुओं के मध्य में, अग्नि, सागर और विजन पथ में, राजदरबार में पड़ जाने पर तू ही एकमात्र गति है। तुझको नमस्कार है, नमस्कार है ! हे जगत् का उद्धार करने वाली माँ दुर्गा, तू मेरी रक्षा कर ।४।

अपार महादुस्तर अत्यन्त घोर विपत्सागर में निमज्जित प्राणियों के उद्धार के लिए तू ही एक मात्र मेरी गति है। तुझको नमस्कार है, नमस्कार है ! हे जगत् का उद्धार करने वाली माँ दुर्गा, तू मेरी रक्षा कर ।५।

हे चण्डिके, अपने अदम्य बल और शौर्य से तूने इन्द्र के सभी शत्रुओं का निपात कर डाला। तुझको नमस्कार है, नमस्कार है ! हे जगत् का उद्धार करने वाली माँ दुर्गा, तू मेरी रक्षा कर ।६।

हे देवी दुर्गे, तुझमें पाप का स्पर्श नहीं है। तू सत्यवादी तथा अनादि है। तू इडा, पिंगला तथा सुषुम्ना है। तूने क्रोध को जीत लिया है। तुझे नमस्कार है, नमस्कार है। हे जगत् का उद्धार करने वाली माँ दुर्गा, तू मेरी रक्षा कर ।७।

हे देवी दुर्गे, तू ही शिवा, भीमनादिनी, सरस्वती, अरुन्धती, अमोघ-रूपिणी, विभूति, शची, कालरात्रि तथा सती है। तुझको नमस्कार है, नमस्कार है ! हे जगत् का उद्धार करने वाली माँ दुर्गा, तू मेरी रक्षा कर ।८।

देवता, सिद्ध, विद्याधर, मुनि, मनुष्य, पशु, चोरों से पीड़ित, राजअपराधी तथा व्याधिग्रस्त लोगों को एकमात्र शरण देने वाली तू है। हे देवी दुर्गा, तू प्रसन्न हो ।९।

जो इन स्तोत्रों का पूरा अथवा एक श्लोक भी नित्य भक्तिपूर्वक पाठ करता है, वह सम्पूर्ण पापों से मुक्त होकर परमपद को प्राप्त कर लेता है ।१०।

नामावली

ओ३म् दुर्गे ओ३म् दुर्गे ओ३म् दुर्गे पाहि माम् ।
ओ३म् दुर्गे ओ३म् दुर्गे ओ३म् दुर्गे रक्ष माम् ॥

५७

नमस्तेऽस्तु गंगे
श्री गङ्गास्तोत्र
(श्रीकालिदासकृतं)

श्लोक

गंगे त्रैलोक्यसारे सकलसुरवधूधौतविस्तीर्णतोये
पूर्णब्रह्मस्वरूपे हरिचरणरजोहारिणि स्वर्गमार्गे ।
प्रायश्चित्तं यदि स्यात्तव जलकणिका ब्रह्महत्यादिपापे
कस्त्वां स्तोतुं समर्थस्त्रिजगदघहरे देवि गंगे प्रसीद ॥

अर्थ

हे देवी गंगे, तू तीनों लोकों का सार है, तेरा विस्तार इतना है कि सारी देवांगनाएं उसमें नहा सकती हैं, तू पूर्ण ब्रह्मस्वरूप है, विष्णु के चरण-रज को धोने वाली है, स्वर्ग का मार्ग है, ब्रह्महत्यादि पाप का भी प्रायश्चित्त यदि तेरे जल की एक बूँद से हो सकता है, तब हे तीनों लोकों का पाप हरण करने वाली गंगे, तेरी स्तुति करने की शक्ति किसमें है ? तू प्रसन्न हो !

गीत

१. नमस्तेऽस्तु गंगे त्वदंगप्रसंगात्
भुजंगास्तुरंगाः कुरंगाः प्लवंगाः ।
अनंगारिरंगाः ससंगाः शिवांगाः
भुजंगाधिपांगीकृतांगा भवन्ति ॥

२. नमो जह्नुकन्ये न मन्ये त्वदन्यैः
निसर्गेन्दुचिह्नादिभिर्लोकभर्तुः ।
अतोऽहं नतोऽहं सदा गौरतोये
वसिष्ठादिभिर्गीयमानाभिधेये ॥

३. त्वदामज्जनात् सज्जनो दुर्जनो वा
विमानैः समानः समानैर्हि मानैः ।
समायाति तस्मिन् पुरारातिलोके
पुरद्वारसंरुद्धदिक्पाललोके ॥

४. स्वरावासदम्भोलि दम्भोऽपि रम्भा
परीरम्भसम्भावनाधीरचेता: ।
समाकांक्षते त्वत्तटे वृक्षवाटी
कुटीरे वसन्नेतुमायुर्दिनानि ॥

५. त्रिलोकस्य भर्तुर्जटाजूटबन्धात्
स्वसीमन्तभागे मनाक् प्रस्खलन्त: ।
भवान्या रुषा प्रौढसापत्न्यभावात्
करेणाहतास्त्वत्तरंगा जयन्ति ॥

६. जलोन्मज्जदैरावतोद्दामकुम्भ
स्फुरत्प्रस्खलत्सान्द्रसिन्दूररागे ।
क्वचित् पद्मिनीरेणुभंगप्रसंगे
मन: खेलतां जह्नुकन्यातरंगे ॥

७. भवत्तीरवानीरवातोत्थधूली-
लवस्पर्शतस्तत्क्षणं क्षीणपाप: ।
जनोऽयं जगत्पावने त्वत्प्रसादात्
पदे पौरुहूतेऽपि धत्तेऽवहेलाम् ॥

८. त्रिसन्ध्यानमल्लेखकोटीरनाना-
विधानेकरत्नांशुविम्बप्रभाभि: ।
स्फुरत्पादपीठे हठेनाष्टमूर्ते:
जटाजूटवासे नता: स्म: पदं ते ॥

६. इदं यः पठेदष्टकं जह्नुपुत्र्याः
त्रिकालं कृतं कालिदासेन रम्यम् ।
समायास्यतीन्द्रादिभिर्गीयमानं
पदं कैशवं शैशवं नो भजेत् सः ॥

अर्थ

हे गंगे, तुझे प्रणाम। तेरा स्पर्श मात्र करने से भी सर्प, घोड़ा, हिरन, बन्दर आदि सब भगवान् शंकर के साथ एक रूप हो जाते हैं।१।

हे जह्नुपुत्री, जगत्पति शिव का चन्द्र आदि चिह्नों के अतिरिक्त तेरे सिवा और कोई चिह्न मैं नहीं जानता। अतः हे स्वच्छ जल वाली गंगे, तुझे नमस्कार करता हूँ। तेरा नाम वसिष्ठ आदि से भी गाया जाता है।२।

चाहे सज्जन हो या दुर्जन, जो तुझमें नहाता है, अत्यन्त पवित्र विमानों द्वारा वह शिव जी के लोक में पहुँच जाता है जहाँ दिक्पालकों से अन्य जनों के लिए प्रवेश निषिद्ध रहता है।३।

इन्द्र आदि देवता भी, जो स्वर्ग में निवास करते हैं, रम्भा आदि अप्सराओं के आलिंगन के लिए अधीर रहते हैं, वे भी तुम्हारे तट पर वृक्षों के नीचे कुटिया बना कर अपना जीवन व्यतीत करने का अकांक्षा रखते हैं।४।

तेरी लहरों की जय हो जो त्रिलोकीनाथ शिव की जटा में आबद्ध होने के कारण छलकने लगती हैं और सौतेली डाह के कारण पार्वती द्वारा हाथ से हिलायी जाती हैं।५।

हे जह्नुकन्ये, तेरे जल में मेरा मन रमता रहे जो ऐरावत के स्नान

करने से उसके कुम्भ-प्रदेश से निकल कर गिरे सिन्दूर के कारण से लाल हुआ है और कहीं-कहीं कमल-पुष्प के पराग घुले हुए हैं ।६।

तेरे किनारे जो वानीर वृक्ष हैं, उनकी हवा से उठी धूलि का अल्प स्पर्श होने से मेरे पाप धुल गए हैं और अब मैं, हे जग को पालन करने वाली गंगे, तेरी कृपा से इन्द्र का भी तिरस्कार कर सकता हूँ ।७।

जिस शिव के चरणों में सारे देवता दिन में तीन बार सिर नवाते हैं और जिनके मुकुट में जड़ी मणियों के प्रकाश से उसका पादपीठ प्रकाशित होता है, ऐसे शिव के जटाजूट में तू निवास करने वाली है, तेरे चरणों में हम नमस्कार करते हैं ।८।

कालिदास विरचित यह गंगाष्टक जो लोग नित्य तीन वार पाठ करते हैं, वे श्री विष्णु का रम्य स्थान प्राप्त करते हैं, जिनका गुणगान इन्द्रादि करते हैं । वे कभी शैशव (पुनर्जन्म) प्राप्त नहीं करेंगे ।९।

नामावली

नमस्तेऽस्तु गंगे नमस्ते नमस्ते ।

५८

जय भगवति देवि नमो वरदे

(श्री भवानी स्तोत्र)

(श्री व्यासकृतं)

श्लोक

न मन्त्रं नो तन्त्रं तदपि च न जाने स्तुतिमहो
न चाह्वानं ध्यानं तदपि च न जाने स्तुतिकथाः ।

न जाने मुद्रास्ते तदपि च न जाने विलपनं
परं जाने मातस्त्वदनुसरणं क्लेशहरणम् ॥

अर्थ

हे माता ! मैं तेरा मन्त्र, यन्त्र, स्तुति, आवाहन, ध्यान, स्तुतिकथा, मुद्रा तथा विलाप कुछ भी नहीं जानता, परन्तु तेरा अनुसरण करना जानता हूँ जो सब प्रकार के क्लेशों को दूर करने वाली है।

स्तोत्र

१. जय भगवति देवि नमो वरदे,
जय पापविनाशिनि बहुफलदे।
जय शुम्भनिशुम्भकपालधरे,
प्रणमामि तु देवि नरार्तिहरे ॥

२. जय चन्द्रदिवाकरनेत्रधरे,
जय पावकभूषितवक्त्रवरे।
जय भैरवदेहनिलीनपरे,
जय अन्धकदैत्यविशोषकरे ॥

३. जय महिषविमर्दिनि शूलकरे,
जय लोकसमस्तकपापहरे।
जय देवि पितामहविष्णुनुते,
जय भास्करशक्रशिरोऽवनते ॥

४ जय षण्मुखसायुधईशनुते,
जय सागरगामिनि शम्भुनुते।
जय दुःखदरिद्रविनाशकरे,
जय पुत्रकलत्रविवृद्धिकरे॥

५. जय देवि समस्तशरीरधरे,
जय नाकविदर्शिनि दुःखहरे।
जय व्याधिविनाशिनि मोक्षकरे,
जय वांछितदायिनि सिद्धिवरे॥

६. एतद्व्यासकृतं स्तोत्रं यः पठेन्नियतः शुचिः।
गृहे वा शुद्धभावेन प्रीता भगवती सदा॥

अर्थ

हे वरदायिनी देवि! हे भगवति! तेरी जय हो! हे पापों को नष्ट करने वाली और अनन्त फल देने वाली देवि! तेरी जय हो! हे शुम्भ-निशुम्भ के मुण्डों को धारण करने वाली देवि! तेरी जय हो! हे मनुष्यों की पीड़ा हरने वाली देवि! मैं तुझे प्रणाम करता हूँ।१।

हे सूर्यचन्द्रमारूप नेत्रों को धारण करने वाली! तेरी जय हो! हे अग्नि के समान देदीप्यमान मुख से शोभित होने वाली देवि! तेरी जय हो! हे भैरवशरीर में लीन रहने वाली और अन्धकासुर का शोषण करने वाली देवि! तेरी जय हो।२।

हे महिषासुर का मर्दन करने वाली, शूलधारिणी और लोक के समस्त पापों को दूर करने वाली भगवति, तेरी जय हो! ब्रह्मा, विष्णु, सूर्य और इन्द्र से नमस्कृत होने वाली हे देवि! तेरी जय हो! जय हो।३।

सशस्त्र शंकर और कार्तिकेय जी के द्वारा वन्दित होने वाली देवि ! तेरी जय हो ! शिव के द्वारा प्रशंसित एवं सागर में मिलने वाली गंगारूपिणी देवि ! तेरी जय हो ! दुःख और दरिद्रता का नाश तथा पुत्र-कलत्र की वृद्धि करने वाली हे देवि ! तेरी जय हो ! जय हो ।४।

हे देवि ! तेरी जय हो । तू समस्त शरीर को धारण करने वाली, स्वर्ग लोक का दर्शन कराने वाली और दुःखहारिणी है । हे व्याधिनाशिनी देवि ! तेरी जय हो ! मोक्ष तेरे करतलगत हैं, हे मनोवांछित फल देने वाली, अष्टसिद्धियों से सम्पन्न परा देवि, तेरी जय हो ।५।

जो कहीं भी रह कर पवित्र भाव से नियमपूर्वक इस व्यास-कृत स्तोत्र का पाठ करता है अथवा शुद्ध भाव से घर पर ही पाठ करता है, उसके ऊपर भगवती सदा ही प्रसन्न रहती है ।६।

नामावली

जय देवि नमामि जगज्जननि ।

अर्थ

हे देवि ! तेरी जय हो ! हे जगत् माता ! मैं तुझको प्रणाम करता हूँ ।

५६

नवरत्नमालिका

श्लोक

नमो नमस्ते जगदेकमात्रे,
नमो नमस्ते जगदेकपित्रे ।
नमो नमस्तेऽखिलरूपतन्त्रे,
नमो नमस्तेऽखिलयज्ञरूपे ॥

मूलमन्त्र जिसका मुखमण्डल है, नादविन्दु जिसका यौवन है, उस दिव्य माता त्रिपुरसुन्दरी को मैं नमस्कार करता हूँ।८।

जिसके भृंग के समान काले घने सुन्दर बाल वेणी में गुँथे हुए पुष्पों से सुगन्धित हो रहे हैं, जिसके सुन्दर कपोल दर्पण की भाँति चमकते हैं, जिसका वर्ण श्याम है तथा जो सम्पूर्ण विश्व पर शासन करती है, उस परात्पर देवी को मैं नमस्कार करता हूँ।९।

हे मानव ! श्री शङ्कराचार्य द्वारा रचित इस नवरत्नमालिका का नित्य पाठ करो। यह सम्पूर्ण मनोकामनाओं को देने वाली है तथा अन्त में जन्म-मृत्यु से मुक्त करती है।१०।

श्री शिवस्तोत्रम्

६०

तोडुडैय शेवियन्

(श्री ज्ञानसम्बन्ध स्वामीकृत)

गीत

१. तोडुडैय शेवियन् विडै येरियोर्
तूवेन् मदि चूडि
काडुडैय शुडलै पोडि पूशि येन
उल्लम् कवर् कल्वन
येडुडैय मलरान् मुनैनाट् पाणि-
देत्त अरुल् शेयिद
पीडुडैय पिरमा पुरमेविय पेम्मानिवनन्ड्रे

२. मुट्रलामै इल नागमोडेन मुलैक्कोंववै पून्डु
वट्रलोडु कलनापप्पलि तेरुंदेनतुल्लं कवर कल्वन्
कट्रल् केट्टल् उडैवार पेरियार कलल्
कैयाल तोलुदेत्त
पेट्रं उरुंद पेरिमापुरमेविय पेम्मानिवनन्ड्रे ।

अर्थ

मैं उस भगवान् शिव की पूजा करता हूँ, जिसके कानों में कुण्डल हैं, जो श्वेत नन्दी पर सवार है, जिसके ललाट पर धवल चन्द्रमा शोभायमान है, जो अपने समस्त शरीर में धवल भस्म को लगाए हुए है तथा जिसने अनजानते ही मेरे हृदय को चुरा लिया है ।१।

मैं उसकी सुगन्धित पुष्पों द्वारा नित्यप्रति पूजा करता हूँ, जिसने अपनी कृपा के द्वारा मुझे आशीर्वाद का वरदान प्रदान किया है। वही ईश्वर परम पुर के मन्दिर में, जिसके गुम्बज तथा दीवाल विशाल हैं, निवास कर रहा है ।२।

नामावली

ओ३म् नमः शिवाय ओ३म् नमः शिवाय ॥

६१

ब्रह्ममुरारि सुरार्चित लिङ्गम्

श्लोक

तस्मै नमः परमकारणकारणाय
दीप्तोज्ज्वल ज्ज्वलितपिंगललोचनाय ।

नागेन्द्रहारकृतकुण्डलभूषणाय
ब्रह्मेन्द्रविष्णुवरदाय नमः शिवाय ॥

अर्थ

मैं उस भगवान् शिव को नमस्कार करता हूँ, जो सारे कारणों का परम कारण है, जिसकी आँखें पिंगल वर्ण सी दीप्त तथा प्रज्वलित हैं, जिसके कुण्डल तथा हार आदि आभूषण नागेन्द्रों द्वारा निर्मित हैं, जो भगवान् ब्रह्मा तथा विष्णु को भी वर देता है, उस शिव को नमस्कार है।

गीत

(लिङ्गाष्टकम्)

ब्रह्ममुरारिसुरार्चितलिंगं,
निर्मलभासितशोभितलिंगम् ।
जन्मजदुःखविनाशकलिंगं,
तत्प्रणमामि सदाशिवलिंगम् ।१।

देवमुनिप्रवरार्चितलिंगं,
कामदहं करुणाकरलिंगम् ।
रावणदर्पविनाशनलिंगं,
तत्प्रणमामि सदाशिवलिंगम् ।२।

सर्वसुगन्धिसुलेपितलिंगं,
बुद्धिविवर्धनकारणलिंगम् ।

सिद्धसुरासुरवन्दितलिंगं,
तत्प्रणमामि सदाशिवलिंगम् ।३।

कनकमहामणिभूषितलिंगं,
फणिपतिवेष्टितशोभितलिंगम् ।
दक्षसुयज्ञविनाशनलिंगं,
तत्प्रणमामि सदाशिवलिंगम् ।४।

कुंकुमचन्दनलेपितलिंगं,
पंकजहारसुशोभितलिंगम् ।
संचितपापविनाशनलिंगं,
तत्प्रणमामि सदाशिवलिंगम् ।५।

देवगणार्चितसेवितलिंगं,
भावैर्भक्तिभिरेव च लिंगम् ।
दिनकरकोटिप्रभाकरलिंगं,
तत्प्रणमामि सदाशिवलिंगम् ।६।

अष्टदलोपरिवेष्टितलिंगं,
सर्वसमुद्भवकारणलिंगम् ।
अष्टदरिद्रविनाशनलिंगं,
तत्प्रणमामि सदाशिवलिंगम् ।७।

सुरगुरुसुरवरपूजितलिंगं,
सुरवनपुष्पसदार्चितलिंगम् ।

अर्थ

इस अखिल विश्व की एकमात्र माता तू ही है, तुझको मेरा नमस्कार है। इस अखिल विश्व का तू ही एकमात्र पिता है, तुझको मेरा नमस्कार है। हे सम्पूर्ण रूपों वाली, तुझको मेरा नमस्कार है। हे सम्पूर्ण यज्ञरूपिणी, तुझको मेरा नमस्कार है।

स्तोत्र

१. हारनूपुरकिरीटकुण्डलविभूषितावयवशोभिनीं,
कारणेशवरमौलिकोटिपरिकल्प्यमानपदपीठिकाम् ।
कालकालफणिपाशबाणधनुरंकुशां अरुणमेखलां,
फालभूतिलकलोचनां मनसि भावयामि परदेवताम् ॥

२. गन्धसारघनसारचारुनवनागवल्लिरसवासिनीं,
सान्ध्यरागमधुराधराभरणसुन्दराननशुचिस्मिताम् ।
मन्थरायतविलोचनां अमलबालचन्द्रकृतशेखरीं,
इन्दिरारमणसोदरीं मनसि भावयामि परदेवताम् ॥

३. स्मेरचारुमुखमण्डलां विमलगण्डलम्बिमणिमण्डलां,
हारदामपरिशोभमानकुचभारभीरुतनुमध्यमाम् ।
वीरगर्वहरनूपुरां विविधकारणेशवरपीठिकां,
मारवैरिसहचारिणीं मनसि भावयामि परदेवताम् ॥

४. भूरिभारधरकुण्डलीन्द्रमणिबद्धभूवलयपीठिकां,
वारिराशिमणिमेखलावलयवह्निमण्डलशरीरिणीम् ।

वारिसारवहकुण्डलां गगनशेखरीं च परमात्मिकां,
चारुचन्द्ररविलोचनां मनसि भावयामि परदेवताम् ॥

५. कुण्डलत्रिविधकोणमण्डलविहारषड्दलसमुल्लसत्-
पुण्डरीकमुखभेदिनीं प्रकटचण्डभानुतडिदुज्ज्वलाम् ।
मण्डलेन्दुपरिवाहितामृततरंगिणीमरुणारूपिणीं,
मण्डलान्तमणिदीपिकां मनसि भावयामि परदेवताम् ॥

६. वारणाननमयूरवाहमुखदाहवारणपयोधरां,
चारणादिसुरसुन्दरीचिकुरशेखरीकृतपदाम्बुजाम् ।
कारणाधिपतिपंचकप्रकृतिकारणप्रथममातृकां,
वारणास्यमुखपारणां मनसि भावयामि परदेवताम् ॥

७. पद्मकान्तिपदपाणिपल्लवपयोधराननसरोरुहां,
पद्मरागमणिमेखलावलयनीविशोभितनितम्बिनीम् ।
पद्मसम्भवसदाशिवान्तमयपंचरत्नपदपीठिकां,
पद्मिनीं प्रणवरूपिणीं मनसि भावयामि परदेवताम् ॥

८. आगमप्रणवपीठिकाममलवर्णमंगलशरीरिणीं,
आगमावयवशोभिनीं अखिलवेदसारकृतशेखरीम् ।
मूलमन्त्रमुखमण्डलां मुदितनादबिन्दुनवयौवनां,
मातृकां त्रिपुरसुन्दरीं मनसि भावयामि परदेवताम् ॥

९. कालिकातिमिरकुन्तलान्तघनभृङ्गमंगलविराजिनीं,
चूलिकाशिखरमालिकावलयमल्लिकासुरभिसौरभाम ।

वालिकामधुरगण्डमण्डलमनोहराननसरोरुहां,
कालिकामखिलनायिकां मनसि भावयामि परदेवताम् ॥

१०. नित्यमेव नियमेन जल्पतां
भुक्तिमुक्तिफलदामभीष्टदाम् ।
शंकरेण रचितां सदा जपेत्
नामरत्ननवरत्नमालिकाम् ॥

अर्थ

जिसके अङ्ग हार, नूपुर, किरीट, कुण्डल आदि अलंकारों से सुशोभित हैं, जिसकी भगवान् शिव जी सदा आराधना करते हैं, जो अपने हाथों में सर्प, पाश, धनुष, वाण और अंकुश धारण करती है, जिसकी कटि में अरुण रंग की मेखला है तथा जिसके मस्तक में तिलक की भाँति तृतीय नेत्र है, मैं उस परात्पर देवी का ध्यान करता हूँ ।१।

जिसके शरीर में चन्दन, कर्पूर और ताम्बूल के रस के समान मधुर सुगन्धि निकलती है, जिसका सुन्दर और मन्दस्मित मुख ऊषःकालीन लालिमा से रंजित मधुर ओष्ठों से सुशोभित है, जिसके सुन्दर विशाल नेत्र हैं, जो अपने मस्तक में निर्मल वालचन्द्र धारण करती है, जो भगवान् कृष्ण की वहन है, मैं उस परात्पर देवी को नमस्कार करता हूँ ।२।

जिसका सुन्दर मुख मुसकान से युक्त है, जिसके कपोलों पर मणिमय कुण्डल की आभा है, जिसकी पतली कमर मोती के हारों से अलंकृत कुचभार से भयभीत-सी हो रही है, जिसके नूपुरों की ध्वनि वड़े-वड़े शूरवीरों के गर्व को विदूरित कर देती है, जो भगवान् शिव की प्रिया है, उस परात्पर देवी को मैं नमस्कार करता हूँ ।३।

का भार वहन करने वाले भगवान् आदिशेष के फणि
पृथ्वी जिसका आसन है, सागर में प्रज्वलित अग्नि
शरीर है, मेघ जिसके कुण्डल हैं, आकाश जिसका
और सूर्य जिसके नेत्र हैं, उस परात्पर देवी को मैं
।४।

त के वृक्ष के अन्दर त्रिकोण (मूलाधार) में निवास
दल कमल (स्वाधिष्ठान) का भेदन करती है, जो
ा चपला के समान जाज्वल्यमान है (सूर्य से तात्पर्य
और चपला से मणिपूर चक्र है।), जिसका रस
होने वाली अमृत-धारा के समान है (आज्ञा चक्र),
है तथा जो क्षितिज को प्रकाशित करने वाली मणि-
र देवी को मैं नमस्कार करता हूँ।५।

का दुग्ध गणेश जी तथा षडानन की तृष्णा को तृप्त
चरण-कमल को देवांगनाएं नमस्कार करती हैं, जो
इस मिथ्या जगत् का कारण है और जो भगवान्
न करती है, उस परात्पर देवी को मैं नमस्कार

रण तथा मुख पद्मपुष्प की भाँति सुन्दर हैं, जिसके
कली की भाँति सुशोभित हैं, जिसकी कमर लाल
था सुन्दर परिधान से दीप्तमान है, जिसकी पाद-
ु, रुद्र, ईश्वर और सदाशिव हैं और प्रणव जिसका
र देवी को मैं नमस्कार करता हूँ।७।

जिसका आसन है, वर्ण (अक्षर) जिसका मंगलमय
त अर्थात् शिक्षा, कल्प, व्याकरण, निरुक्त, ज्योतिष
ुशोभित है, सम्पूर्ण वेदों का सार जिसका सिर है,

जराजन्मदुःखौघतातप्यमानं,
प्रभो पाहि शापान्नमामीश शम्भो ॥

६. रुद्राष्टकमिदं प्रोक्तं. विप्रेण हरतुष्टये।
ये पठन्ति नरा भक्त्या, तेषां शम्भुः प्रसीदति ॥

अर्थ

हे ईशान! मैं मुक्तिस्वरूप, समर्थ, सर्वव्यापक, ब्रह्मदेवस्वरूप, जन्म-रहित, निर्गुण, निर्विकल्प, निरीह, अनन्त ज्ञानमय और आकाश के समान सर्वत्र व्याप्त प्रभु को प्रणाम करता हूँ।१।

जो निराकार है, ओंकाररूप आदिकारण है, वाणी और बुद्धि के पथ से परे है, कैलाशनाथ है, पापियों के लिए कराल और भक्तों के हेतु दयालु है, महाकाल का भी काल है, गुणों का आगार और संसार से तारने वाला है, उस भगवान् को मैं नमस्कार करता हूँ।२।

जो हिमालय के समान श्वेतवर्ण, गम्भीर और करोड़ों कामदेव के समान कान्तिमान शरीर वाला है, जिसके मस्तक पर मनोहर गंगा जी लहरा रही हैं, भालदेश में बालचन्द्रमा सुशोभित है और गले में सर्पों की माला शोभा देती है।३।

जिसके कानों में कुण्डल हिल रहे हैं, जिसके नेत्र सुन्दर और विशाल हैं, जिसका मुख प्रसन्न और कण्ठ नील है, जो बड़ा ही दयालु है, जो बाघ की खाल का वस्त्र और मुण्डों की माला पहनता है, उस सर्वाधीश्वर प्रियतम शिव का मैं भजन करता हूँ।४।

जो प्रचण्ड, सर्वश्रेष्ठ, प्रगल्भ, परमेश्वर, पूर्ण, कोटि सूर्य के समान प्रकाशमान, त्रिभुवन के शूलनाशक और हाथ में त्रिशूल धारण करने वाला है, उस भावगम्य भवानीपति का मैं भजन करता हूँ।५।

सम्पूर्ण विश्व का भार वहन करने वाले भगवान् आदिशेष के फणि के मणियों से खचित पृथ्वी जिसका आसन है, सागर में प्रज्वलित अग्नि (वडवाग्नि) जिसका शरीर है, मेघ जिसके कुण्डल हैं, आकाश जिसका सिर है तथा चन्द्र और सूर्य जिसके नेत्र हैं, उस परात्पर देवी को मैं नमस्कार करता हूँ ।४।

जो शुभ्र ज्योति के वृक्ष के अन्दर त्रिकोण (मूलाधार) में निवास करती है, जो षट्दल कमल (स्वाधिष्ठान) का भेदन करती है, जो मध्याह्न के सूर्य तथा चपला के समान जाज्वल्यमान है (सूर्य से तात्पर्य यहाँ अनाहत चक्र और चपला से मणिपूर चक्र है।), जिसका रस पूर्ण चद्र से निःसृत होने वाली अमृत-धारा के समान है (आज्ञा चक्र), जिसका वर्ण अरुण है तथा जो क्षितिज को प्रकाशित करने वाली मणि-दीप है, उस परात्पर देवी को मैं नमस्कार करता हूँ ।५।

जिसके पयोधर का दुग्ध गणेश जी तथा षडानन की तृष्णा को तृप्त करता है, जिसके चरण-कमल को देवांगनाएं नमस्कार करती हैं, जो आदि माया अथवा इस मिथ्या जगत् का कारण है और जो भगवान् गणेश का मुख चुम्बन करती है, उस परात्पर देवी को मैं नमस्कार करता हूँ ।६।

जिसके कर, चरण तथा मुख पद्मपुष्प की भाँति सुन्दर हैं, जिसके उरोज कमल की कली की भाँति सुशोभित हैं, जिसकी कमर लाल मणि की मेखला तथा सुन्दर परिधान से दीप्तमान है, जिसकी पाद-पीठिका ब्रह्मा, विष्णु, रुद्र, ईश्वर और सदाशिव हैं और प्रणव जिसका रूप है, उस परात्पर देवी को मैं नमस्कार करता हूँ ।७।

वेदों का प्रणव जिसका आसन है, वर्ण (अक्षर) जिसका मंगलमय शरीर है, जो वेदान्त अर्थात् शिक्षा, कल्प, व्याकरण, निरुक्त, ज्योतिष और छन्दशास्त्र से सुशोभित है, सम्पूर्ण वेदों का सार जिसका सिर है,

जराजन्मदुःखौघतातप्यमानं,
प्रभो पाहि शापान्नमामीश शम्भो ॥

९. रुद्राष्टकमिदं प्रोक्तं, विप्रेण हरतुष्टये।
ये पठन्ति नरा भक्त्या, तेषां शम्भुः प्रसीदति ॥

अर्थ

हे ईशान! मैं मुक्तिस्वरूप, समर्थ, सर्वव्यापक, ब्रह्मदेवस्वरूप, जन्म-रहित, निर्गुण, निर्विकल्प, निरीह, अनन्त ज्ञानमय और आकाश के समान सर्वत्र व्याप्त प्रभु को प्रणाम करता हूँ।१।

जो निराकार है, ओंकाररूप आदिकारण है, वाणी और बुद्धि के पथ से परे है, कैलाशनाथ है, पापियों के लिए कराल और भक्तों के हेतु दयालु है, महाकाल का भी काल है, गुणों का आगार और संसार से तारने वाला है, उस भगवान् को मैं नमस्कार करता हूँ।२।

जो हिमालय के समान श्वेतवर्ण, गम्भीर और करोड़ों कामदेव के समान कान्तिमान शरीर वाला है, जिसके मस्तक पर मनोहर गंगा जी लहरा रही हैं, भालदेश में बालचन्द्रमा सुशोभित है और गले में सर्पों की माला शोभा देती है।३।

जिसके कानों में कुण्डल हिल रहे हैं, जिसके नेत्र सुन्दर और विशाल हैं, जिसका मुख प्रसन्न और कण्ठ नील है, जो बड़ा ही दयालु है, जो बाघ की खाल का वस्त्र और मुण्डों की माला पहनता है, उस सर्वाधीश्वर प्रियतम शिव का मैं भजन करता हूँ।४।

जो प्रचण्ड, सर्वश्रेष्ठ, प्रगल्भ, परमेश्वर, पूर्ण, कोटि सूर्य के समान प्रकाशमान, त्रिभुवन के शूलनाशक और हाथ में त्रिशूल धारण करने वाला है, उस भावगम्य भवानीपति का मैं भजन करता हूँ।५।

हे प्रभो ! तू कालरहित, कल्याणकारी और कल्प का अन्त करने वाला है, तू सर्वदा सत्पुरुषों को आनन्द देता है, तूने त्रिपुरासुर का नाश किया था, तू मोहनाशक और ज्ञानानन्दघन परमेश्वर है। तू मुझ पर प्रसन्न हो ! प्रसन्न हो ।६।

मनुष्य जब तक उमाकान्त महादेव के चरणारविन्दों का भजन नहीं करते, उन्हें इहलोक में कभी सुख और शान्ति की प्राप्ति नहीं होती और न उनका सन्ताप ही दूर होता है। हे समस्त भूतों के निवास-स्थान भगवान् शिव ! तू मुझपर प्रसन्न हो ।७।

हे प्रभो ! हे शम्भो ! हे ईश ! मैं योग, जप और पूजा कुछ भी नहीं जानता। हे देव ! मैं सदा तुझे नमस्कार करता हूँ। जरा, जन्म और दुःख समूह से सन्तप्त होते हुए मुझ दीन की तू शाप से रक्षा कर ।८।

जो मनुष्य भगवान् शंकर की तुष्टि के लिए ब्रह्मा द्वारा कहे हुए इस रुद्राष्टक का भक्तिपूर्वक पाठ करते हैं, उन पर शंकर जी प्रसन्न होते हैं ।९।

नामावली

साम्ब सदाशिव साम्ब सदाशिव, साम्ब सदाशिव साम्ब शिवोम् ।

६३

जटाटवी गलज्जल प्रवाहपावितस्थले

(रावणकृत शिवताण्डवस्तोत्रम्)

श्लोक

शान्तं पद्मासनस्थं शशधरमुकुटं पंचवक्त्रं त्रिनेत्रं,
शूलं वज्रं च खड्गं परशुमभयदं दक्षिणांगे वहन्तम्।

नागं पाशं च घण्टां डमरुकसहितं चांकुशं वामभागे,
नानालंकारदीप्तं स्फटिकमणिनिभं पार्वतीशं नमामि ॥

अर्थ

शान्त, पद्मासनस्थित (पद्मासन पर बैठे हुए), चन्द्रमुकुट वाले, त्रिलोचन, दाहिने भाग में शूल, वज्र, तलवार, अभय देने वाला परशु को धारण करने वाले और वाम भाग में नाग, पाश, घण्टा और डमरू के साथ अंकुश धारण करने वाले, तरह-तरह के अलंकारों से शोभायमान, स्फटिकमणि की तरह कान्ति वाले, ऐसे पार्वतीपति शिव जी को मैं प्रणाम करता हूँ।

गीत

१. जटाटवीगलज्जलप्रवाहपावितस्थले,
गलेऽवलम्ब्य लम्बितां भुजंगतुंगमालिकाम् ।
डमड्डमड्डमड्डमन्निनादवड्डमर्वयं,
चकार चण्डताण्डवं तनोतु नः शिवः शिवम् ॥

२. जटाकटाहसंभ्रमभ्रमन्निलिम्पनिर्झरी-
विलोलवीचिवल्लरीविराजमानमूर्द्धनि ।
धगद्धगद्धगज्ज्वलल्ललाटपट्टपावके,
किशोरचन्द्रशेखरे रतिः प्रतिक्षणं मम ॥

३. धराधरेन्द्रनन्दिनीविलासबन्धुबन्धुर-
स्फुरद्दिगन्तसन्ततिप्रमोदमानमानसे ।

कृपाकटाक्षधोरणीनिरुद्धदुर्धरापदि,
क्वचिद्दिगम्बरे मनो विनोदमेतु वस्तुनि ॥

४. जटाभुजंगपिंगलस्फुरत्फणामणिप्रभा,
कदम्बकुंकुमद्रवप्रलिप्तदिग्वधूमुखे ।
मदान्धसिन्धुरस्फुरत्त्वगुत्तरीयमेदुरे,
मनो विनोदमद्भुतं बिभर्तु भूतभर्तरि ॥

५. सहस्रलोचनप्रभृत्यशेषलेखशेखर-
प्रसूनधूलिधोरणीविधूसरांघ्रिपीठभूः ।
भुजंगराजमालया निबद्धजाटजूटकः
श्रियै चिराय जायतां चकोरबन्धुशेखरः ॥

६. ललाटचत्वरज्वलद्धनंजयस्फुलिंगभा-
निपीतपंचसायकं नमन्निलिम्पनायकम् ।
सुधामयूखलेखया विराजमानशेखरं,
महाकपालिसम्पदे शिरोजटालमस्तु नः ॥

७. करालफालपट्टिकाधगद्धगद्धगज्ज्वल-
द्धनंजयाहुतीकृतप्रचण्डपंचसायके ।
धराधरेन्द्रनन्दिनीकुचाग्रचित्रपत्रक-
प्रकल्पनैकशिल्पिनि त्रिलोचने रतिर्मम ॥

८. नवीनमेघमण्डलीनिरुद्धदुर्धरस्फुर-
त्कुहूनिशीथिनीतमःप्रबन्धबन्धकन्धरः ।

परात्परं परमात्मकलिंगं,
तत्प्रणमामि सदाशिवलिंगम् ।८।

लिंगाष्टकमिदं पुण्यं यः पठेत् शिवसन्निधौ ।
शिवलोकमवाप्नोति शिवेन सह मोदते ।।६।।

अर्थ

लिंग जो भगवान् शिव का प्रतीक है ब्रह्मा, विष्णु तथा देवगणों द्वारा पूजित है। वह निर्मल, प्रकाशमान तथा शोभित है। वह जन्म के दुःखों को नष्ट करने वाला है। मैं उस सदाशिव के लिंग को नमस्कार करता हूँ ।१।

वह लिंग देवता तथा मुनियों द्वारा पूजित है, वह काम का विनाशक है तथा करुणा-सागर है। उसने रावण के दर्प को विनष्ट किया। मैं उस सदाशिव के लिंग को नमस्कार करता हूँ ।२।

वह लिंग सारे प्रकार की सुगन्धियों से लेपित है, वह बुद्धि की वृद्धि का कारण है। वह सिद्धों, देवताओं तथा असुरों द्वारा वन्दित है। मैं उस सदाशिव के लिंग को नमस्कार करता हूँ ।३।

वह लिंग स्वर्ण तथा महामणि से विभूषित है। वह शेषनाग से वेष्टित होकर शोभायमान हो रहा है। उसने दक्ष के यज्ञ का विध्वंस किया। मैं उस सदाशिव के लिंग को नमस्कार करता हूँ ।४।

वह लिंग कुंकुम तथा चन्दन से लेपित है। वह पंकज-हार से सुशोभित है। वह सारे संचित पापों का विनाशक है। मैं उस सदा-शिव के लिंग को नमस्कार करता हूँ ।५।

उस लिंग की सेवा देवता तथा भूतगण करते हैं। वह भावपूर्ण भक्ति के द्वारा प्रसन्न होता है। उसमें करोड़ों सूर्य के समान प्रकाश है। मैं उस सदाशिव के लिंग को नमस्कार करता हूँ।६।

वह अष्टदल कमल पर आसीन है। वह सर्वों की उत्पत्ति और वृद्धि का कारण है। वह आठ प्रकार की दरिद्रता को नष्ट करता है। मैं उस सदाशिव के लिंग को नमस्कार करता हूँ।७।

वह लिंग देवताओं के गुरु बृहस्पति तथा श्रेष्ठ देवों द्वारा पूजित है। वह देवताओं के वनों से लाये हुए पुष्पों द्वारा पूजित है। वह परात्पर तथा परमात्मा है। मैं उस सदाशिव के लिंग को नमस्कार करता हूँ।८।

जो कोई भी इस लिंगाष्टक का शिवलिंग के समीप पाठ करता है, वह शिवलोक को प्राप्त करता है तथा भगवान् शिव के साथ आनन्द को प्राप्त करता है।९।

नामावली

ओ३म् नमः शिवाय ओ३म् नमः शिवायः।

६२

नमामीशमीशाननिर्वाणरूपम्

(श्री तुलसीदासकृतं)

श्लोक

स्थानं न यानं न च बिन्दुनादं
रूपं न रेखा न च धातुवर्गम्।

दृश्यं न दृष्टं श्रवणं न श्राव्यं
तस्मै नमो ब्रह्म निरंजनाय ॥

अर्थ

मैं उस निरंजन ब्रह्म को नमस्कार करता हूँ, जिसका न कोई स्थान है, न वाहन है, न जिसके कोई विन्दुनाद है, न रूप है, न रेखा है, न वह धातुसमूह है। वह न तो दृश्य है, न दृष्ट है, न श्रवण है, न श्राव्य है।

गीत

(श्री रुद्राष्टकम्)

१. नमामीशमीशाननिर्वाणरूपं,
विभुं व्यापकं ब्रह्म वेदस्वरूपम् ।
अजं निर्गुणं निर्विकल्पं निरीहं,
चिदाकारमाकाशवासं भजेऽहम् ॥

२. निराकारमोंकारमूलं तुरीयं,
गिराज्ञानगोतीतमीशं गिरीशम् ।
करालं महाकालकालं कृपालं,
गुणाकारसंसारपारं नतोऽहम् ॥

३. तुषाराद्रिसंकाशगौरं गभीरं,
मनोभूतकोटिप्रभास्वच्छरीरम् ।

स्फुरन्मौलिकल्लोलिनी चारुगंगा,
लसत्फालबालेन्दु कण्ठेभुजंगम् ॥

४. चलत्कुण्डलं शुभ्रनेत्रं विशालं,
प्रसन्नाननं नीलकण्ठं दयालम् ।
मृगाधीशचर्माम्बरं मुण्डमालं,
प्रियं शंकरं सर्वनाथं भजामि ॥

५. प्रचण्डं प्रकृष्टं प्रगल्भं परेशं,
अखण्डं भजे भानुकोटिप्रकाशम् ।
त्रयीशूलनिर्मूलनं शूलपाणिं,
भजेहं भवानीपतिं भावगम्यम् ॥

६. कलातीतकल्याणकल्पान्तकारी,
सदा सज्जनानन्ददाता पुरारिः ।
चिदानन्दसन्दोहमोहापहारी,
प्रसीद प्रसीद प्रभो मन्मथारिः ॥

७. न यावदुमानाथपादारविन्दं,
भजन्तीह लोके परे वा नराणाम् ।
न तावत्सुखं शान्तिसन्तापनाशं,
प्रसीद प्रभो सर्वभूताधिवास ॥

८. न जानामि योगं जपं नैव पूजां,
नतोऽहं सदा सर्वदा देव तुभ्यम् ।

निलिम्पनिर्भरीधरस्तनोतु कृत्तिसिन्धुरः,
कलानिधानबन्धुरः श्रियं जगद्धुरन्धरः ॥

९. प्रफुल्लनीलपंकजप्रपंचकालिमप्रभा-
वलम्बिकण्ठकन्दलीरुचिप्रबन्धकन्धरम् ।
स्मरच्छिदं पुरच्छिदं भवच्छिदं मखच्छिदं,
गजच्छिदान्धकच्छिदं तमन्तकच्छिदं भजे ॥

१०. अखर्वसर्वमंगलाकलाकदम्बमंजरी,
रसप्रवाहमाधुरीविजृम्भणामधुव्रतम् ।
स्मरान्तकं पुरान्तकं भवान्तकं मखान्तकं,
गजान्तकान्धकान्तकं तमन्तकान्तकं भजे ॥

११. जयत्वदभ्रविभ्रमभ्रमद्भुजंगमश्वस-
द्विनिर्गमक्रमस्फुरत्करालफालहव्यवाट् ।
धिमिद्धिमिद्धिमिद्ध्वनन्मृदंगतुंगमंगल-
ध्वनिक्रमप्रवर्तितप्रचण्डताण्डवः शिवः ॥

१२. दृषद्विचित्रतल्पयोर्भुजंगमौक्तिकस्रजो-
र्गरिष्ठरत्नलोष्ठयोस्सुहृद्विपक्षपक्षयोः ।
तृणारविन्दचक्षुषोः प्रजामहीमहेन्द्रयोः,
समप्रवृत्तिकः कदा सदाशिवं भजाम्यहम ॥

१३. कदा निलिम्पनिर्भरीनिकुंजकोटरे वसन्,
विमुक्तदुर्मतिः सदा शिरःस्थमंजलिं वहन् ।

विलोललोललोचनो ललामफाललग्नकः,
शिवेति मन्त्रमुच्चरन् कदा सुखी भवाम्यहम् ॥

१४. इमं हि नित्यमेवमुक्तमुत्तमोत्तमं स्तवं,
पठन् स्मरन् ब्रुवन्नरो विशुद्धिमेति सन्ततम् ।
हरे गुरौ सुभक्तिमाशु याति नान्यथा गतिं,
विमोचनं हि देहिनां सुशंकरस्य चिन्तनम् ॥

१५. पूजावसानसमये दशवक्त्रगीतं,
यः शम्भुपूजनपरं पठति प्रदोषे ।
तस्य स्थिरां रथगजेन्द्रतुरंगयुक्तां,
लक्ष्मीं सदैव सुमुखीं प्रददाति शम्भुः ॥

अर्थ

जिसने जटारूपी अटवी (वन) से निकली हुई गंगा जी के गिरते हुए प्रवाहों से पवित्र किये गये गले में सर्पों की लटकती हुई विशाल माला को धारण कर डमरू के डमडम शब्दों से मण्डित प्रचण्ड ताण्डव (नृत्य) किया; वह शिव हमारे कल्याण का विस्तार करे ।१।

जिसका मस्तक जटारूपी कड़ाह में वेग से घूमती हुई गंगा की चंचल तरंग-लताओं से सुशोभित हो रहा है, ललाट की अग्नि धक्-धक् जल रही है, सिर पर बालचन्द्रमा विराजमान है, उस (भगवान् शिव) में मेरा निरन्तर अनुराग हो ।२।

गिरिराजकिशोरी पार्वती के विलासकालोपयोगी शिरोभूषण से समस्त दिशाओं को प्रकाशित होते देख जिसका मन आनन्दित हो रहा

है, जिसकी निरन्तर कृपादृष्टि से कठिन आपत्ति का भी निवारण हो जाता है, ऐसे किसी दिगम्बर तत्त्व में मेरा मन विनोद करे ।३।

जिसके जटाजूटवर्ती सर्पों के फणों की मणियों का फैलता हुआ पिंगल प्रभापुंज दिशारूपिणी अंगनाओं के मुख पर के कुंकुमराग का अनुलेपन कर रहा है, मतवाले हाथी के हिलते हुए चमड़े का उत्तरीय वस्त्र (चादर) धारण करने से स्निग्ध वर्ण हुए उस भूतनाथ में मेरा चित्त अद्भुत विनोद करे ।४।

जिसकी चरणपादुकाएं इन्द्र आदि समस्त देवताओं के (प्रणाम करते समय) मस्तकवर्ती कुसुमों की धूलि से धूसरित हो रही हैं, नागराज (शेष) के हार से बँधी हुई जटा वाला वह भगवान् चन्द्रशेखर मेरे लिए चिरस्थायिनी सम्पत्ति का साधक हो ।५।

जिसने ललाटवेदी पर प्रज्वलित हुई अग्नि की चिनगारियों के तेज से कामदेव को नष्ट कर डाला था, जिसे इन्द्र नमस्कार किया करते हैं, चन्द्रमा की कला से सुशोभित मुकुट वाला वह (श्री महादेव का) उन्नत विशाल ललाट वाला जटा-जटित मस्तक हमारी सम्पत्ति का साधक हो ।६।

जिसने अपने विकराल भालपट्ट पर धक्-धक् जलती हुई अग्नि में प्रचण्ड कामदेव को हवन कर दिया था, गिरिराजकिशोरी के स्तनों पर पत्र-भंग रचना करने वाले एकमात्र कारीगर, उस भगवान् त्रिलोचन में मेरी धारणा लगी रहे ।७।

जिसके कण्ठ में नवीन मेघमाला से घिरी हुई अमावस्या की आधी रात के समय फैलते हुए दुरूह अन्धकार के समय श्यामता अंकित है जो गजचर्म लपेटे हुए है, संसार-भार को धारण करने वाला, चन्द्रमा (के सम्पर्क) से मनोहर कान्तिवाला भगवान् गंगाधर मेरी सम्पत्ति का विस्तार करे ।८।

जिसका कण्ठदेश खिले हुए नीलकमल समूह की श्यामप्रभा का अनुकरण करने वाली हरिणी की सी छविवाले चिह्न से सुशोभित है तथा जो कामदेव, त्रिपुर, भव (संसार), दक्षयज्ञ, हाथी, अन्धकासुर और यमराज का भी उच्छेदन करने वाला है, उसे मैं भजता हूँ ।६।

जो अभिमान रहित पार्वती की कलारूप कादम्वरी के मकरन्दस्रोत की वढ़ती हुई माधुरी का पान करने वाला मधुप है, तथा कामदेव, त्रिपुर, भव, दक्षयज्ञ, हाथी, अन्धकासुर और यमराज का भी उच्छेदन करने वाला है, उसे मैं भजता हूँ ।१०।

जिसके मस्तक पर बड़े वेग के साथ घूमते हुए भुजंग के फुफकारने से ललाट की भयंकर अग्नि क्रमशः धधकती हुई फैल रही है, धिमि-धिमि वजते हुए मृदग के गंभीर मंगल घोष के क्रमानुसार जिसका प्रचण्ड ताण्डव हो रहा है, उस भगवान् शंकर की जय हो ।११।

पत्थर और सुन्दर विछौनों में, साँप और मुक्ता की माला में, वहुमूल्य रत्न तथा मिट्टी के ढेले में, मित्र या शत्रु पक्ष में, तृण अथवा कमललोचना तरुणी में, प्रजा और पृथ्वी के महाराज में समान भाव रखता हुआ मैं कव सदाशिव को भजूँगा ।१२।

सुन्दर ललाट वाले चन्द्रशेखर में दत्तचित्त हो अपने कुविचारों को त्याग कर गंगा जी के तटवर्ती निकुंज के भीतर रहता हुआ, सिर पर हाथ जोड़, डवडवाई हुई विह्वल आँखों से शिव-मन्त्र का उच्चारण करता हुआ मैं कव सुखी होऊँगा ।१३।

जो मनुष्य इस प्रकार से उक्त इस उत्तमोत्तम स्तोत्र का नित्य पाठ, स्मरण और वर्णन करता रहता है, वह सदा शुद्ध रहता है, और शीघ्र ही सुरगुरु श्रीशंकर जी की अच्छी भक्ति प्राप्त कर लेता है, वह

विरुद्ध गति को प्राप्त नहीं होता है; क्योंकि श्रीशिव जी का अच्छी प्रकार का चिन्तन प्राणिवर्ग के मोह का नाश करने वाला है।१४।

सायंकाल में पूजा समाप्त होने पर रावण के गाये हुए इस शम्भु-पूजन सम्बन्धी स्तोत्र का जो पाठ करता है, शंकर उस मनुष्य को रथ, हाथी, घोड़ों से युक्त सदा स्थिर रहने वाली सम्पत्ति देते हैं।१५।

नामावली

साम्ब सदाशिव, साम्ब सदाशिव,
साम्ब सदाशिव, साम्ब शिवोम्।

६४

शम्भो महादेव

(श्रीत्यागराजकृतं)

श्लोक

आत्मा त्वं गिरिजा मतिः परिजनाः प्राणाः शरीरं गृहं,
पूजा ते विषयोपभोगरचना निद्रा समाधिस्थितिः।
संचारः पदयोः प्रदक्षिणविधिः स्तोत्राणि सर्वा गिरो,
यद्यत्कर्म करोमि तत्तदखिलं शम्भो तवाराधनम्॥

अर्थ

हे भगवान् शिव, तू आत्मा है, मेरी बुद्धि पार्वती है, मेरे प्राण तेरे परिचारक हैं, यह शरीर तेरा घर है, प्रापंचिक विषयों के उप-भोग का आयोजन तेरी पूजा है, निद्रा समाधि-अवस्था है। जो कुछ

मैं चलता हूँ, वह सारा तेरी ही परिक्रमा है। जो कुछ बोलता हूँ, सब तेरी स्तुति है। इस प्रकार मैं जो कुछ भी करता हूँ, वह सारा तेरी ही पूजा है।

गीत

१. शम्भो महादेव,
शंकर गिरिजारमण। (शम्भो…)

२. शम्भो महादेव, शरणागतजनरक्षक,
अम्भोरुहलोचन, पदाम्बुजभक्ति देहि। (शम्भो…)

३. परमदयाकर मृगधर, हर गंगाधर
धरणीसुरभूषण त्यागराजवरहृदय निवास
सुरवृन्दकिरीटमणिवरनीराजितपद
गोपुरवास, सुन्दरेश, गिरीश, परात्पर, भव, हर।
(शम्भो…)

अर्थ

हे शम्भो, महादेव, शंकर, पार्वतीरमण,

हे शम्भो, महादेव, शरणागत लोगों के रक्षक, कमल-लोचन, मुझे अपने कमलचरणों की भक्ति दान दे।

परम दया के आधार, मृग को धारण करने वाले, हर (महाप्रलय में सब को समाप्त करने वाले), गंगाधर, त्यागराज के पवित्र हृदय में वास करने वाले, ब्राह्मणों के हे आभूषण, तेरे चरणों में सारे देव

अपने मुकुट के अनमोल रत्नों से आरती करते हैं। तू वाणासुर के गोपुर में निवास करता है (परम करुणा तथा भक्तों के प्रति प्रेम के कारण तू उसके घर की रक्षा करता है)। हे कैलाशवासी, परमपुरुष, संसारकष्ट को दूर करने वाले।

नामावली

ओ३म् नमः शिवाय ओ३म् नमः शिवाय।

६५

अति भीषण कटुभाषण

श्लोक

कृपासमुद्रं सुमुखं त्रिनेत्रं, जटाधरं पार्वतीवामभागम्।
सदाशिवं रुद्रमनन्तरूपं, चिदम्बरेशं हृदि भावयामि॥

अर्थ

मन में उस चिदम्बरेश का स्मरण करता हूँ जो दयासागर है, सुन्दर है, त्रिनयन है, जटाधारी है, जिसके पार्श्व में पार्वती है, जो सदाशिव है, रुद्र है तथा अनेकरूप है।

गीत

१. अतिभीषणकटुभाषणयमकिंकरपटली-
कृतताडनपरिपीडनमरणागमसमये ।
उमया सह मम चेतसि यमशासन निवसन्,
हर शंकर शिव शंकर हर मे हर दुरितम्॥

२. असदिन्द्रियविषयोदयसुखसत्कृतसुकृतेः,
परदूषणपरिमोक्षणकृतपातकविकृतेः ।
शमनान्तक भवकाननिरतेर्भव शरणं,
हर शंकर शिव शंकर हर मे हर दुरितम् ॥

३. विषयाभिधवलिशायुधपिशितायितसुखतो,
मकरायितगतिसंस्मृतिकृतसाहसविपदम् ।
परिमालय परिपालय परितापितमनिशं,
हर शंकर शिव शंकर हर मे हर दुरितम् ॥

४. दयिता मम दुहिता मम जननी मम जनको,
मम कल्पितमतिसन्ततिमरुभूमिषु निरतम् ।
गिरिजासख जनितासुखवसतिं कुरु सुखिनं,
हर शंकर शिव शंकर हर मे हर दुरितम् ॥

५. जनिनाशन मृतिमोचन शिवपूजननिरते,
अभितादृशमिदमीदृशमहमावह इति ह ।
गजगच्छपजनिताश्रम विमलीकुरु सुमतिं,
हर शंकर शिव शंकर हर मे हर दुरितम् ॥

६. त्वयि तिष्ठति सकलस्थितिकरुणात्मनि हृदये,
वसुमार्गणकृपणेक्षणमनसा शिवविमुखम् ।
अकृताह्निकमसुपोषक भवतात् गिरिसुतया,
हर शंकर शिव शंकर हर मे हर दुरितम् ॥

७. पितरावतिसुखदाविति शिशुना कृतहृदयौ,
शिवया हृतभयके हृदि जनितं तव सुकृतम् ।
इति मे शिव हृदयं भव भवतात्तव दयया,
हर शंकर शिव शंकर हर मे हर दुरितम् ॥

८. शरणागतभरणाश्रितकरुणामृतजलधे,
शरणं तव चरणौ शिव मम संसृतिवसतेः ।
परचिन्मय जगदामयभिषजे नतिरवतात्,
हर शंकर शिव शंकर हर मे हर दुरितम् ॥

९. विविधाधिभिरतिभीतिभिरकृताधिकसुकृतं,
शतकोटिषु नरकादिषु हृतपातकविवशम् ।
मृड मामव सुकृतीभव शिवया सह कृपया,
हर शंकर शिव शंकर हर मे हर दुरितम् ॥

१०. कलिनाशन गरलाशन कमलासनविनुत,
कमलापतिनयनार्चितकरुणाकृतिचरण ।
करुणाकर मुनिसेवित भवसागरहरण,
हर शंकर शिव शंकर हर मे हर दुरितम् ॥

अर्थ

मरण-समय में जब यमदूत आकर अत्यन्त भीषण और कठोर वचन से मुझे पीड़ा देंगे, तब हे यम का शासन करने वाले शिव, शंकर तू माता पार्वती सहित मेरे चित्त में विराजमान रह। हे हर, मेरे पाप दूर कर।१।

मैंने अपने जीवन में दुष्ट इन्द्रिय विषय-भोग को ही पुण्य समझा, दूसरों की निन्दा की, इस प्रकार के कई पाप किये हैं। संसाररूपी कानन में ही रमता रहा हूँ। मुझे हे शंकर, अपनी शरण दे। हे शिव, मेरे पाप दूर कर।२।

जिस प्रकार मछुआरे के काँटे में लगे मांस के टुकड़े को खाने की इच्छा से मछली खुद काँटे में फँस जाती है, उसी प्रकार इन्द्रियों के अनुसार मैं जन्म-मरण के चक्कर में फँस गया हूँ। हे शंकर, सदा सन्तप्त रहने वाले मुझको सहारा दे। हे हर मेरे पाप दूर कर।३।

मैंने अपनी बुद्धि की कल्पना से मान लिया कि यह मेरी पत्नी है, बेटी है, मेरी माँ है, मेरा पिता है। उसी में फँस गया हूँ। हे पार्वतीरमण, मुझे सच्चा सुख प्रदान कर। हे हर, मेरे पाप दूर कर।४।

जन्म-मरण का नाश करने वाले, गजासुर और कछुए को आराम देने वाले, शिव, चारों ओर भटकने वाले, संसार के युद्ध में पड़े हुए मुझे सन्मति दे, शिवपूजन में लगने की बुद्धि दे। हे शिवशंकर मेरे पाप दूर कर।५।

सब का रक्षण अत्यन्त करुणापूर्वक करने वाले तेरे रहते हुए मैं धन कमाने और कृपण दृष्टि से जीने में तुझसे ही विमुख हो गया हूँ। कभी सत्कार्य नहीं किया। हे शंकर, पार्वती सहित तू मेरे पाप दूर कर।६।

बच्चों को यह विश्वास रहता है कि माता-पिता उसका भला करना चाहते हैं, करते हैं। अतः हे शिव, मैं भी यह आशा रख रहा हूँ कि तू और माँ गौरी दोनों सदा मेरे चित्त में निवास करेंगे और जन्म-मृत्यु के भय से मुझे मुक्त करेंगे। हे शिव मेरे पाप दूर कर।७।

हे शरणागतरक्षक, आश्रितों के लिए करुणामृत का सागर, संसार में फँसे हुए मेरे लिए तेरे चरण ही शरण हैं। तुझे प्रणाम। तू चिन्मय है, जगद्रूपी रोग का औषध है। हे शिव मेरे पाप दूर कर।८।

कई प्रकार के भयों के कारण मैं अधिक पुण्यकर्म नहीं कर सका। भयंकर पातकों के कारण करोड़ों वर्ष तक नरक भोगता रहा हूँ। हे शिव, पार्वती सहित तू मेरी रक्षा कर, मुझे पुण्यवान् बना। हे हर, मेरे पाप दूर कर।९।

हे कलि का नाश करने वाले, विष निगलने वाले, ब्रह्मा से प्रशंसित, तेरे करुणामय चरणों की पूजा विष्णु के नयन करते रहते हैं। तू करुणासागर है, मुनियों से सेवित है, भवसागर को दूर करने वाला है। हे शिव, तू मेरे पाप को दूर कर।१०।

नामावली

हर हर शंकर शिव शिव शंकर।
हर हर हर हर मे दुरितम्॥

वेदान्तिक गीत

६६

वसुदेवसुतं देवम्

(गीता भजन)

गीत

१. वसुदेवसुतं देवं कंसचाणूरमर्दनम्।
देवकीपरमानन्दं कृष्णं वन्दे जगद्गुरुम्॥

२. अन्यथा शरणं नास्ति त्वमेव शरणं मम।
तस्मात्कारुण्यभावेन रक्ष रक्ष महेश्वर॥

३. अनन्याश्चिन्तयन्तो मां ये जनाः पर्युपासते।
तेषां नित्याभियुक्तानां योगक्षेमं वहाम्यहम्॥

४. मन्मना भव मद्भक्तो मद्याजी मां नमस्कुरु।
मामेवैष्यसि सत्यं ते प्रतिजाने प्रियोऽसि मे

५. सर्वधर्मान्परित्यज्य मामेकं शरणं व्रज।
अहं त्वा सर्वपापेभ्यो मोक्षयिष्यासि मा शुचः॥

६. यत्र योगेश्वरः कृष्णो यत्र पार्थो धनुर्धरः।
तत्र श्रीर्विजयो भूतिर्ध्रुवा नीतिर्मतिर्मम॥

७. कृष्णाय वासुदेवाय देवकीनन्दनाय च।
नन्दगोपकुमाराय गोविन्दाय नमो नमः॥

अर्थ

मैं जगद्गुरु श्रीकृष्ण को प्रणाम करता हूँ जो वसुदेव जी का पुत्र है, देव है, कंस, चाणूर आदि राक्षसों का संहार करने वाला है, देवकी को परम आनन्द देने वाला है।१।

हे परमेश्वर, मुझे कोई दूसरी शरण नहीं है, तू ही एकमात्र शरण है। इसलिए कृपापूर्वक मेरी रक्षा कर।२।

जो अनन्य भाव से मेरे में स्थित हुए भक्तजन मुझे (परमेश्वर को) निरन्तर चिन्तन करते हुए निष्काम भाव से भजते हैं, उन नित्य

एकरूप होकर मुझमें स्थित पुरुषों का योगक्षेम मैं स्वयं प्राप्त करा देता हूँ ।३।

तू मुझ (परमेश्वर) में अपना मन लगा दे, मेरा भक्त बन जा, मेरे लिए ही यज्ञ कर और मुझे ही प्रणाम कर । तू मुझे ही पायेगा । तू मेरा प्रिय है, अतः तुझे मैं यह वचन दे रहा हूँ ।४।

ऐहिक सर्व धर्मों का त्याग कर तू एकमात्र मेरी (परमेश्वर की) शरण आ । मैं तुझे सारे पापों से मुक्त कर दूँगा । दुःखी होने की आवश्यकता नहीं ।५।

जहाँ योगिराज श्रीकृष्ण और धनुर्धारी अर्जुन हों वहाँ सम्पत्ति, विजय, समृद्धि और नीति निश्चित रूप से होंगी, यह मेरा (संजय का) विचार है ।६।

मैं श्रीकृष्ण को, वासुदेव को, देवकी पुत्र को, नन्द गोप के कुमार को, गोविन्द को वार-वार प्रणाम करता हूँ ।७।

६७

खेलति पिण्डाण्डे

(श्रीसदाशिवब्रह्मेन्द्रकृतं)

गीत

खेलति पिण्डाण्डे; भगवान् खेलति पिण्डाण्डे ।

१. हंसः सोहं हंसः सोहं, हंसः सोहं सोहमिति ।

(खेलति···)

२. परमात्माहं परिपूर्णोहं, ब्रह्मैवाहं ब्रह्मेति ।

(खेलति···)

३. त्वक्चक्षुश्रुतिजिह्वाघ्राणे, पंचविधप्राणोपस्थाने ।
(खेलति···)

४. शब्दस्पर्शरसादिकमात्रे, सात्त्विकराजसतामसमित्रे ।
(खेलति···)

५. बुद्धिमनश्चित्ताहंकारे, भूजलतेजोगगनसमीरे ।
(खेलति···)

६. परमहंसरूपेण विहर्ता ब्रह्माविष्णुरुद्रादिककर्ता ।
(खेलति···)

अर्थ

भगवान् पिण्डाण्ड में (इस व्यष्टि जगत् में) खेलता है, वह इस जीव शरीर में खेलता है ।

यह कहते हुए, 'मैं हंस हूँ, मैं (परमात्मा) हंस हूँ, मैं हंस हूँ, मैं वही हूँ', वह खेलता है ।१।

यह कहते हुए खेलता है, 'मैं परमात्मा हूँ, मैं परिपूर्ण हूँ, मैं ब्रह्म ही हूँ, ब्रह्म ही हूँ।' ।२।

वह पाँच प्रकार के प्राणों के धाम में, चर्म, चक्षु, श्रोत्र, जिह्वा तथा नासिका इन्द्रियों के स्थान में खेलता है ।३।

वह सात्त्विक, राजस, तामस गुणों से युक्त शब्द, स्पर्श, रस आदि तन्मात्राओं से निर्मित जगत् में खेलता है ।४।

वह बुद्धि, मन, चित्त, अहंकार से निर्मित जगत् में, पृथ्वी, जल, अग्नि, वायु तथा आकाश तत्त्वों से निर्मित जगत् में खेलता है ।५।

वह परमहंसों के रूप में खेलता है, उसने ही आदि में ब्रह्मा, विष्णु तथा रुद्र का सृजन किया था ।६।

६८

चिन्ता नास्ति किल

(श्रीसदाशिवब्रह्मेन्द्रकृतं)

श्लोक

आकाशवल्लेपविदूरगोऽहं
आदित्यवत्भास्यविलक्षणोऽहम् ।
अहार्यवन्नित्यविनिश्चलोऽहं
अम्भोधिवत्पारविवर्जितोऽहम् ॥

अर्थ

मैं आकाश के समान प्रत्येक वस्तु से अलिप्त हूँ, आदित्य के समान स्वयंप्रकाश हूँ, मुझे किसी दूसरे के प्रकाश की अपेक्षा नहीं है। पर्वत के समान निश्चल, अटल हूँ और सागर के समान असीम हूँ, मेरा कोई कूल-किनारा नहीं है।

गीत

चिन्ता नास्ति किल तेषां, चिन्ता नास्ति किल

१, शमदमकरुणासम्पूर्णानाम् ।
साधुसमागमसंकीर्णानाम । (चिन्ता नास्ति…)

२. कालत्रयजितकन्दर्पानाम् ।
खण्डितसर्वेन्द्रियदर्पानाम् । (चिन्ता नास्ति…)

३. परमहंसगुरुपदचित्तानाम् ।
ब्रह्मानन्दामृतमत्तानाम् । (चिन्ता नास्ति …)

अर्थ

उनको कोई चिन्ता नहीं, बिलकुल चिन्ता नहीं है।

जो शम, दम और करुणा आदि गुणों से परिपूर्ण हैं और जो साधु-सन्तों के समाज से घिरे हुए होते हैं।१।

जिन्होंने भूत, भविष्य और वर्तमान तीनों कालों में वासनाओं पर विजय पा ली है तथा इन्द्रियों के हर प्रकार के गर्व को चूर कर दिया है।२।

जिनको हमेशा परमहंस गुरुचरणों की चिन्ता लगी रहती है और ब्रह्मानन्दरूपी अमृत से मस्त रहते हैं।३।

उनके लिए चिन्ता नहीं है, बिलकुल चिन्ता नहीं है।

नामावली

सत्यं ज्ञानं अनन्तं ब्रह्म। नित्यानन्द स्वरूपं ब्रह्म।

अर्थ

ब्रह्म सत्य, ज्ञान तथा अनन्त है। ब्रह्म का स्वरूप नित्यानन्द है।

६९

मानस सञ्चर रे ब्रह्मणि

(श्रीसदाशिवब्रह्मेन्द्रकृतं)

श्लोक

एषः स्वयंज्योतिरनन्तशक्तिः
आत्माऽप्रमेयः सकलानुभूतिः ।
यमेव विज्ञाय विमुक्तबन्धो
जयत्ययं ब्रह्मविदुत्तमोत्तमः ॥

अर्थ

यह सर्वोत्तम आत्मा स्वयंप्रकाश और अनन्तशक्तिशाली है, किसी भी प्रमाण से नापा नहीं जा सकता है; परन्तु सब की अनुभूति का विषय है; जिस एक को जान लेने से यह ब्रह्मज्ञानी पुरुष सारे बन्धनों से मुक्त हो कर जन्म-मरण के चक्कर से छूट जाता है।

गीत

मानस सञ्चर रे ब्रह्मणि, मानस सञ्चर रे।

१. श्री रमणीकुचदुर्ग विहारे
सेवकजनमन्दिरमन्दारे । (मानस···)

२. मदशिखिपिंछालंकृतचिकुरे
महनीयकपोलविजितमुकुरे । (मानस···)

३. परमहंसमुखचन्द्रचकोरे
परिपूरितमुरलीरवाधरे । (मानस ...)

अर्थ

हे मन उस ब्रह्म में विचरण कर, विचरण कर।

जो श्री लक्ष्मी जी का प्रिय है, भक्तजनों की इच्छाओं को पूरा करने में मन्दार वृक्ष के समान है।१।

जिसके कुन्तल मत्त मयूर के पंखों से सुशोभित हैं और जिसके मनोहर कपोलों के आगे दर्पण भी हार जाता है।२।

परमहंस-रूपी चकोर पक्षियों को चन्द्र के समान जो जीवन प्रदान करता है तथा जिसके हाथ में अनन्त स्वर लहरियों से भरी हुई मुरली है।३।

उस ब्रह्म में हे मन, सदा विचरण कर।

नामावली

भक्तवत्सल गोविन्द
भागवतप्रिय गोविन्द
पतितपावन गोविन्द
परमदयालो गोविन्द
नन्दमुकुन्द गोविन्द
नवनीतचोर गोविन्द
वेणुविलोल गोविन्द
विजयगोपाल गोविन्द

७०

तद्वज्जीवत्वं ब्रह्मणि

(श्रीसदाशिवब्रह्मेन्द्रकृतं)

श्लोक

अन्तर्ज्योतिर्बहिर्ज्योतिः प्रत्यग्ज्योतिः परात्परः।
ज्योतिर्ज्योतिः स्वयंज्योतिः आत्मज्योतिः शिवोऽस्म्यहम्॥

अर्थ

मैं वह शिव हूँ जो कि आन्तरिक-ज्योति, वाह्य-ज्योति, आद्य-ज्योति तथा परात्पर-ज्योति है, जो कि ज्योतियों की ज्योति, स्वयं-ज्योति तथा आत्म-ज्योति है।

गीत

तद्वत् जीवत्वं ब्रह्मणि, तद्वत् जीवत्वं।

१. यद्वत् तोये चन्द्रद्वित्वम्
यद्वन्मुकुरे प्रतिबिम्बस्थम्। (तद्वत्··)

२. स्थाणौ यद्वत् नररूपत्वम्
भानुकरे यद्वत् तोयत्वम्। (तद्वत्···)

३. शुक्तौ यद्वत् रजतमयत्वम्
रज्जौ यद्वत् फणिदेहत्वम। (तद्वत्···)

४. परमहंसगुरुणा अद्वयविद्या
भणिता धिक्कृतमायाविद्या ।   (तद्वत्)

अर्थ

ब्रह्म में जीवत्व वैसे ही है,

१. जैसे कि जल में चन्द्रमा का प्रतिबिम्ब देख कर दो चन्द्रमा होने का भ्रम होना, अथवा दर्पण में मुकुर की परछाईं,

२. अथवा अन्धकार में वृक्ष के ठूँठ को देख कर उसके मनुष्य होने का भ्रम, अथवा मृग-मरीचिका में जल का भ्रम,

३. अथवा सीपी में चांदी का भ्रम, अथवा क्षीण प्रकाश में रज्जु में सर्प भ्रम।

४. परमहंस गुरु के द्वारा बतलाई हुई अद्वैत विद्या माया को दूर कर देती है।

नामावली

अन्तर्ज्योतिर्बहिर्ज्योतिः प्रत्यग्ज्योतिः परात्परः।
ज्योतिर्ज्योतिः स्वयंज्योतिः आत्मज्योतिः शिवोऽस्म्यहम् ॥

७१

तायागि तंदैयुमाइ
(श्री रामलिंग स्वामी कृत)

गीत

१. तायागि तंदैयुमाइ, तांगुगित्र दैवम्।
तन्नै निकरिल्लाद, तनित्तलैमै दैवम् ॥

२. वायार वाल्तुकिन्न रोर् , मनत्तमन्र्त दैवम् ।
मलरडि येन शेन्नि मिशै, वैत्त पेरु देवम् ॥

३. कायाद कनियागि, कलंदिनिक्कुं दैवम् ।
करुणै निधि दैवं मुद्र् काट् टुविक्कुं दैवम् ॥

४. शेयाग ऐनै वल्क्कूम् , दैवं महादैवम् ।
चित् सभैइल विलंगुगिन्न, दैवं अदे दैवम् ॥

अर्थ

वह भगवान् है जो माँ भी बनता है, पिता भी बनता है और (हमारा) सहारा भी बनता है। वह भगवान् है जो अनुपम और परम प्रमुख है।१।

वह भगवान् है जो पूर्ण हृदय से स्तुति करने वालों के हृदय में निवास करता है। वह परमेश्वर है जिसके चरण-कमल मेरे मस्तक पर हैं।२।

वह भगवान् है जो विना फूले ही फल देता है और बड़ा मधुर होता है। वह ईश्वर है जो दया-सागर है। वह ईश्वर है जो अन्त तक हमारा मार्ग-दर्शन करता और हमें अपने से मिलाता है।३।

वह भगवान् है, परमेश्वर है जो मुझे बच्चे की तरह ऊपर लाता है। वह भगवान् है हृदय-मन्दिर में सुशोभित होता है और वही एक सच्चा ईश्वर है।४।

नामावली

एन्नप्पनल्लवा एन् तायुमल्लवा ।
पोन्नप्पनल्लवा पोन्नंबलत्तवा ॥

अर्थ

मेरे हृदय-मन्दिर में निवास करने वाले भगवान्! क्या तुम मेरे पिता नहीं हो? क्या तुम मेरी माता भी नहीं हो? क्या तुम मेरे प्रिय पिता नहीं हो?

७९

भज गोविन्दम्

(श्रीशङ्कराचार्यकृतं)

श्लोक

नमः परस्मै पुरुषाय भूयसे सदुद्भवस्थाननिरोधलीलया।
गृहीतशक्तित्रितयाय देहिनां अन्तर्भवायानुपलक्ष्यवर्त्मने॥

अर्थ

मैं उस अखण्ड परमात्मा को नमस्कार करता हूँ जो तीन गुणों वाली प्रकृति की सहायता से त्रिमूर्तियों का रूप धारण कर जगत् की सृष्टि, पालन तथा विनाश की लीला रचता है तथा जो सभी भूतों में अन्तर्यामी के रूप से आसीन है और जिसकी चाल किसी को ज्ञात नहीं।

गीत

१. भज गोविन्दं भज गोविन्दं, गोविन्दं भज मूढमते।
सम्प्राप्ते सन्निहिते काले, नहि नहि रक्षति डुकृञ्करणे॥
(भज…)

२. का ते कान्ता कस्ते पुत्रः, संसारोऽयमतीव विचित्रः ।
कस्य त्वं वा कुत आयातः, तत्त्वं चिन्तय यदिदं भ्रातः ॥
(भज…)

३. सत्संगत्वे निःसंगत्वं, निःसंगत्वे निर्मोहत्वम् ।
निर्मोहत्वे निश्चलचित्तं, निश्चलचित्ते जीवन्मुक्तिः ॥
(भज…)

४. मा कुरु धनजनयौवनगर्वं, हरति निमेषात्कालः सर्वम् ।
मायामयमिदमखिलं हित्वा, ब्रह्मपदं त्वं प्रविश विदित्वा ॥
(भज…)

५. दिनमपि रजनी सायं प्रातः, शिशिरवसन्तौ पुनरायातः ।
कालः क्रीडति गच्छत्यायुस्तदपि न मुंचत्याशावायुः ॥
(भज…)

६. का ते कान्ता धनगतचिन्ता, वातुल किं तव नास्ति नियन्ता ।
क्षणमपि सज्जनसंगतिरेका, भवति भवार्णवतरणे नौका ॥
(भज…)

७. योगरतो वा भोगरतो वा, संगरतो वा संगविहीनः ।
यस्य ब्रह्मणि रमते चित्तं, नन्दति नन्दति नन्दत्येव ॥
(भज…)

८. पुनरपि जननं पुनरपि मरणं, पुनरपि जननीजठरे शयनम् ।
इह संसारे बहुदुस्तारे, कृपयापारे पाहि मुरारे ॥
(भज…)

९. रथ्याकर्पटविरचितकन्थः, पुण्यापुण्यविवर्जितपन्थः।
योगी योगनियोजितचित्तो, रमते बालोन्मत्तवदेव॥
(भज ˙˙)

१०. त्वयि मयि सर्वत्रैको विष्णुर्व्यर्थं कुप्यसि मय्यसहिष्णुः।
सर्वस्मिन्नपि पश्यात्मानं, सर्वत्रोत्सृज भेदाज्ञानम्॥
(भज)

११. गेयं गीतानामसहस्रं, ध्येयं श्रीपतिरूपमजस्रम्।
नेयं सज्जनसंगे चित्तं, देयं दीनजनाय च वित्तम्॥
(भज)

१२. गुरुचरणाम्बुजनिर्भरभक्तः, संसारादचिराद् भव मुक्तः।
सेन्द्रियमानसनियमादेवं, द्रक्ष्यसि निजहृदयस्थं देवम्॥
(भज ˙˙)

अर्थ

हे मूढ नर, गोविन्द का भजन करो, गोविन्द की शरण जाओ, गोविन्द का कीर्तन करो। मृत्युकाल के निकट आने पर यह व्याकरण सूत्र (डुकृञ्करणे) तुम्हारी सहायता नहीं करेगा।१।

तुम्हारी स्त्री कौन है, तुम्हारा पुत्र कौन है ? यह संसार बड़ा ही विचित्र है, तुम किसके हो, तुम कहाँ से आये हो ? हे भाई ! इस सत्य का विचार तो करो।२।

सत्संग के द्वारा अनासक्ति की प्राप्ति होती है, अनासक्ति से मोह का निवारण होता है, मोह के नष्ट हो जाने पर चित्त शान्त हो जाता है तथा चित्त की शान्ति से जीवन्मुक्ति की प्राप्ति हो जाती है।३।

धन, जन, यौवन का अभिमान न करो। काल क्षण मात्र में ही इन सबों को नष्ट कर डालता है। इन सारे मायामय विषयों का परित्याग कर ज्ञान के द्वारा ब्रह्मपद को प्राप्त करो।४।

बारम्बार दिन, रात्रि, सायं, प्रातः, शिशिर, वसन्त का पुनरागमन होता रहता है; काल क्रीडा कर रहा है, आयु बीतती जा रही है, फिर भी आशा की शृंखला टूटती नहीं।५।

हे नर! स्त्री तथा धन के लिए यह चिन्ता क्यों? क्या कोई भी व्यक्ति तुम्हारा नियन्ता अथवा पथ-प्रदर्शक नहीं? एक क्षण के लिए भी सज्जनों की संगति संसार-सागर से पार ले जाने के लिए नौका के समान है।६।

चाहे मनुष्य योग में रत हो अथवा भोग में, किसी के संग में हो अथवा संग रहित, जिसका मन ब्रह्म में ही आनन्द लेता है, एकमेव वही वास्तव में बारम्बार आनन्द लेता है।७।

पुनः जन्म, पुनः मृत्यु तथा पुनः माता के गर्भ में पड़ना इस दुस्तर संसार में ईश्वर ही अपनी करुणा से मुझे पार उतारे।८।

फटे-पुराने कपड़े पहन कर पाप-पुण्य से विवर्जित मार्ग का अनुगमन कर योगी गम्भीर ध्यान में मग्न होता है, शिशु के समान अथवा उन्मत्त मनुष्य के समान आनन्द लूटता है।९।

तुममें, मुझमें तथा सर्वत्र वह एक ही विष्णु वर्तमान है; फिर भी सहिष्णुता से रहित हो कर तुम व्यर्थ ही क्रोध कर रहे हो। सबों में एक ही आत्मा के दर्शन करो। भेदभ्रान्ति का सर्वत्र परित्याग करो।१०।

भगवद्गीता तथा विष्णुसहस्रनाम का गायन करो। लक्ष्मीपति नारायण पर ध्यान लगाओ। अपने मन को सज्जनों की संगति में लगाओ। अपने सारे धन को गरीबों तथा पीड़ितों को दे डालो।११।

गुरु के चरण-कमल में अविचल भक्ति के द्वारा तुम अल्प समय में ही संसार से विमुक्त हो जाओगे। इन्द्रियों तथा मन के निग्रह द्वारा तुम अपने हृदय में ही ज्योति के दर्शन करोगे।१२।

नामावली

गोविन्द जय जय गोपाल जय जय।
राधारमण हरि गोविन्द जय जय॥

७

नमो आदिरूप

(श्री तुकाराम कृत)

श्लोक

त्वमेव माता च पिता त्वमेव, त्वमेव बन्धुश्च सखा त्वमेव।
त्वमेव विद्या द्रविणं त्वमेव, त्वमेव सर्वं मम देवदेव॥

अर्थ

हे देवाधिदेव! तू ही मेरी माँ, तू ही मेरा पिता, मेरा बन्धु, मित्र, विद्या, धन और सर्वस्व है।

गीत

१. नमो आदिरूप ओंकारस्वरूप
विश्वाचिय बाप श्री पाण्डुरंगा।
२. तुजिया सत्तेने तुझे गुण गाऊँ
तेणें सुखी राहूँ सर्व काल। (नमो....)

३. तूंचि वक्ता ज्ञानासि अंजन
सर्व होणें जाणें तुभ्या हाती। (नमो···)

४. तुका म्हणे जेथें नाहिं मी-तूं-पण
स्तवाव तें कोण कोण लागी। (नमो)

अर्थ

आदिस्वरूप और ओंकार-रूपी हे पाण्डुरंग, हे जगत्पिता, तुझे प्रणाम ।१।

हे भगवन्, तेरी सत्ता से तेरे गुण गाऊँ और फिर सदा सुखी रहूँ ।२।

तू ही वक्ता है और ज्ञान-प्राप्ति का अंजन है। जो कुछ होता है सब तेरे हाथ में है ।३।

तुकाराम कहता हैं कि जब 'मैंपन' और 'तूपन' ही समाप्त हो गया तो कौन किसकी स्तुति करे ।४।

नामावली

नमो आदिरूप ओंकारस्वरूप।
जय पाण्डुरंगा जय पाण्डुरंगा ॥

७४

आदि बीज एकले

(श्री तुकाराम कृत)

श्लोक

यस्मादिदं जगदुदेति चतुर्मुखाद्यं, यस्मिन्नवस्थितमशेषमशेषमूले।
यत्रोपयाति विलयं च समस्तमन्ते, दृग्गोचरो भवतु मेऽद्य स
दीनबन्धुः ॥

अर्थ

चतुर्मुख ब्रह्मा आदि सारी सृष्टि जिससे उदित होती है, समस्त संसार जिस एकमूल में अवस्थित होता है और अन्त में जिसमें सब कुछ विलीन हो जाता है, वह दीनबन्धु आज मेरे दृष्टिगोचर हो !

गीत

आदि बीज एकले
बीज अंकुरले रोप वाढले ।

१. एक बीजापोटी तरु कोटि कोटि
जन्म घेती सुमनें फलें
कोटि जन्म घेतीं सुमनें फलें (आदि)

२. व्यापुनि जगता तूं हि अनन्ता
बहुविधरूपा घेसि घेसि
परी अन्ती ब्रह्म एकले
घेसि परी अन्ती ब्रह्म एकले । (आदि…)

अर्थ

प्रथमतः वहाँ केवल एक बीज था । बीज फूटा, अंकुरित हुआ और पौधा बना । एक बीज के अन्दर करोड़ों पेड़, फूल और फल पैदा होते हैं ।१।

हे अनन्त, तू ही सारे जग में व्याप्त होकर अनेकानेक रूप धारण करता है; परन्तु अन्त में एकमात्र ब्रह्म ही रह जाता है ।२।

नामावली

जय हरि विट्ठल पाण्डुरंगा विट्ठल ।

७५

नहि रे नहि शङ्का

(श्रीसदाशिवब्रह्मेन्द्रकृतं)

श्लोक

रवेर्यथा कर्मणि साक्षिभावो, वह्नेर्यथा वायसि दाहकत्वम् ।
रज्जोर्यथारोपितवस्तुसंगः, तथैव कूटस्थचिदात्मनो मे ॥

अर्थ

सूर्य जिस प्रकार प्रत्येक कार्य का साक्षी है, अग्नि जिस प्रकार लोहे के जलाने की शक्ति रखती है या रस्सी में जिस प्रकार सर्प का भ्रम आरोपित होता है, उसी प्रकार मेरा भी सम्बन्ध इन वस्तुओं से है। वास्तव में तो मैं कूटस्थ और चिदात्मा हूँ ।

गीत

नहि रे नहि शंका काचित्
नहि रे नहि शंका ।

१. अजमक्षरमद्वैतमनन्तं
ध्यायन्ति ब्रह्म परं शान्तम् । (नहि रे ··)

२. ये त्यजन्ति बहुतरपरितापं
ये भजन्ति सच्चित्सुखरूपम् । (नहि रे···)

३. परमहंसगुरुभणितं गीतं
ये पठन्ति निगमार्थसमेतम् । (नहि रे·)

अर्थ

कोई शंका नहीं है। कुछ भी शंका नहीं है।

जो अजन्मा, अविनाशी, अद्वितीय, अनन्त, परम शान्त ब्रह्म का ध्यान करते हैं, उनको कोई शंका नहीं है।१।

जो अनेकों सांसारिक सन्तापों का त्याग कर देते हैं और सत्-चित्-आनन्द-रूप ब्रह्म का भजन करते हैं, उनको कोई शंका नहीं है।२।

परमहंस गुरुओं द्वारा गाये गये गीतों को, जिनमें कि सारे वेदों का अर्थ समाया हुआ है, जो गाते हैं उनको कोई शंका नहीं है।३।

नामावली

ओं ओं ओं ओं ओं विचार।
ओं ओं ओं ओं भज ओंकार॥

७६

मुक्ति नेरि

शंकरने शंकरने, शम्भो गंगाधरने।

१. मुक्ति नेरि अरियाद,
मूर्खरोड्ड मुयल्वैनै

भक्ति नेरि अरिवित्तु
पलविनैकल् पारुं वएणम् ।

२. चित्तमलं अरुवित्तृ
शिवभविक एनै आएड
अत्तन् एनक्मरुलियवारु
आर् पेरुवार अच्चोवे ॥

अर्थ

मैं मुक्ति के मार्ग को नहीं जानता था, इसलिए मूर्ख और दुष्टजनों की संगति में पड़ा था। ऐसी स्थिति में मुझे भगवान् की भक्ति का मार्ग सिखाया गया। इस भक्ति ने मेरे सारे कर्मों को उड़ा दिया। मेरे मन का सारा मैल धुल कर वह अब ईश्वरमय बन गया। भगवान् ने यह सब कुछ मेरे लिए किया और मेरी रक्षा की। ऐसी कृपा और किसमें होगी ? कितना अद्भुत है !

नामावली

शंकरने शंकरने, शम्भो गंगाधरने ।

७७

सर्वं ब्रह्ममयम्

(श्रीसदाशिवब्रह्मेन्द्रकृतं)

गीत

सर्वं ब्रह्ममयं रे रे, सर्वं ब्रह्ममयम् ।

१. किं वचनीयं किमवचनीयं, किं रचनीयं किमरचनीयम् ।
(सर्वं···)

२. किं पठनीयं किमपठनीयं, किं भजनीयं किमभजनीयम् ।
(सर्वं ···)

३. किं बोधव्यं किमबोधव्यं, किं भोक्तव्यं किमभोक्तव्यम् ।
(सर्वं ··)

४. सर्वत्र सदा हंसध्यानं कर्तव्यं, भो मुक्तिनिधानम् ।
(सर्वं ···)

अर्थ

सब ब्रह्म ही है, देखो सब ब्रह्म ही है ।

कहने के लिए क्या है, न कहने के लिए क्या है ? करने के लिए क्या है, न करने के लिए क्या है ।१।

सीखने के लिए क्या है, न सीखने के लिए क्या है ? पूजा करने के लिए क्या है, न पूजा करने के लिए क्या है ।२।

जानने के लिए क्या है, न जानने के लिए क्या है ? भोग करने के लिए क्या है, न भोग करने के लिए क्या है ।३।

व्यक्ति को सदा सर्वत्र हंस का ही ध्यान करना चाहिए, यही मुक्ति प्रदान करता है ।४।

नामावली

नारायण, नारायण, नारायण, लक्ष्मी

७८

अस्थूलं-(ब्रह्म-भावना)

(विवेक-चूडामणि से)

(श्री शङ्कराचार्य कृत)

गीत

१. अस्थूलमित्येतदसन्निरस्य
सिद्धं स्वतो व्योमवदप्रतर्क्यम् ।
यतो मृषामात्रमिदं प्रतीतं
जहीहि यत्स्वात्मतया गृहीतम् ।
ब्रह्माहमित्येव विशुद्धबुद्ध्या
विद्धि स्वमात्मानमखण्डबोधम् ॥

२. मृत्कार्यं सकलं घटादि सततं मृन्मात्रमेवाभित-
स्तद्वत्सज्जनितं सदात्मकमिदं सन्मात्रमेवाखिलम् ।
यस्मान्नास्ति सतः परं किमपि तत्सत्यं स आत्मा स्वयं
तस्मात्तत्त्वमसि प्रशान्ममलं ब्रह्माद्वयं यत्परम् ॥

३. निद्राकल्पितदेशकालविषयज्ञात्रादि सर्वं यथा
मिथ्या तद्वदिहापि जाग्रति जगत्स्वाज्ञानकार्यत्वतः ।
यस्मादेवमिदं शरीरकरणप्राणाहमाद्यप्यसत्
तस्मात्तत्त्वमसि प्रशान्तममलं ब्रह्माद्वयं यत्परम् ॥

४. यत्र भ्रान्त्या कल्पितं तद्विवेके
तत्तन्मात्रं नैव तस्माद्विभिन्नम् ।
स्वप्ने नष्टे स्वप्नविश्वं विचित्रं
स्वस्माद्भिन्नं किन्तु दृष्टं प्रबोधे ॥

५. जातिनीतिकुलगोत्रदूरगं
नामरूपगुणदोषवर्जितम् ।
देशकालविषयातिवर्ति यद्
ब्रह्म तत्त्वमसि भावयात्मनि ॥

६. यत्परं सकलवागगोचरं
गोचरं विमलबोधचक्षुषः ।
शुद्धचिद्घनमनादिवस्तु यद्
ब्रह्म तत्त्वमसि भावयात्मनि ॥

७. षड्भिरूर्मिभिरयोगि योगिहृद्-
भावितं न करणैर्विभावितम् ।
बुद्ध्यवेद्यमनवद्यमस्ति यद्
ब्रह्म तत्त्वमसि भावयात्मनि ॥

८. भ्रान्तिकल्पितजगत्कलाश्रयं
स्वाश्रयं च सदसद्विलक्षणम् ।
निष्कलं निरुपमानवद्धि यद्
ब्रह्म तत्त्वमसि भावयात्मनि ॥

९. जन्मवृद्धिपरिणत्यपक्षय-
व्याधिनाशनविहीनमव्ययम् ।
विश्वसृष्ट्यवनघातकारणं
ब्रह्म तत्त्वमसि भावयात्मनि ॥

१०. अस्तभेदमनपास्तलक्षणं
निस्तरंगजलराशिनिश्चलम् ।
नित्यमुक्तमविभक्तमूर्ति यद्
ब्रह्म तत्त्वमसि भावयात्मनि ॥

११. एकमेव सदनेककारणं
कारणान्तरनिरासकारणम् ।
कार्यकारणविलक्षणं स्वयं
ब्रह्म तत्त्वमसि भावयात्मनि ॥

१२. निर्विकल्पकमनल्पमक्षरं
यत्क्षराक्षरविलक्षणं परम् ।
नित्यमव्ययसुखं निरंजनं
ब्रह्म तत्त्वमसि भावयात्मनि ॥

१३. यद्विभाति सदनेकधा भ्रमा-
न्नामरूपगुणविक्रियात्मना ।
हेमवत्स्वयमविक्रियं सदा
ब्रह्म तत्त्वमसि भावयात्मनि ॥

१४. यच्चकास्त्यनपरं परात्परं
प्रत्यगेकरसमात्मलक्षणम् ।
सत्यचित्सुखमनन्तमव्ययं
ब्रह्म तत्त्वमसि भावयात्मनि ॥

१५. उक्तमर्थमिममात्मनि स्वयं
भावय प्रथितयुक्तिभिर्धिया ।
संशयादिरहितं कराम्बुवत्
तेन तत्त्वनिगमो भविष्यति ॥

१६. स्वंबोधमात्रं परिशुद्धतत्त्वं
विज्ञाय संघे नृपवच्च सैन्ये ।
तदाश्रय स्वात्मनि सर्वदा स्थितौ
विलापय ब्रह्मणि विश्वजातम् ॥

१७. बुद्धौ गुहायां सदसद्विलक्षणं
ब्रह्मास्ति सत्यं परमद्वितीयम् ।
तदात्मना योऽत्र वसेद् गुहायां
पुनर्न तस्यांग गुहाप्रवेशः ॥

अर्थ

'अस्थूलमनण्वह्रस्वमदीर्घम्' इत्यादि श्रुति से असत् स्थूलता आदि का निरास करने से आकाश के समान व्यापक अतर्क्य वस्तु स्वयं ही सिद्ध हो जाती है। इसलिए आत्मरूप से गहीत ये देह आदि मिथ्या

ही प्रतीत होते हैं। इनमें आत्मबुद्धि को छोड़ और 'मैं ब्रह्म हूँ' इस शुद्ध बुद्धि से अखण्ड बोधस्वरूप अपने आत्मा को जान।१।

जिस प्रकार मृत्तिका के कार्य घट आदि हर तरह से मृत्तिका ही हैं, उसी प्रकार सत् से उत्पन्न हुआ यह सत्स्वरूप सम्पूर्ण जगत् सन्मात्र ही है; क्योंकि सत् से परे और कुछ भी नहीं है तथा वही सत्य और स्वयम् आत्मा भी है; इसलिए जो शान्त, निर्मल और अद्वितीय परब्रह्म है वह तुम्हीं हो।२।

जिस प्रकार स्वप्न में निद्रा-दोष से कल्पित देश, काल, विषय और ज्ञाता आदि सभी मिथ्या होते हैं, उसी प्रकार जाग्रदवस्था में भी यह जगत् अपने ज्ञान का कार्य होने के कारण मिथ्या ही है। इस प्रकार क्योंकि ये शरीर, इन्द्रिय, प्राण और अहंकार आदि सभी असत्य हैं, अतः तुम वही परब्रह्म हो जो शान्त, निर्मल और अद्वितीय है।३।

जिसमें कोई वस्तु भ्रम से कल्पित होती है विचार होने पर वह तद्रूप ही प्रतीत होती है, उससे पृथक् नहीं। स्वप्न के नष्ट हो जाने पर जाग्रदवस्था में क्या विचित्र स्वप्नप्रपंच अपने से पृथक् दिखायी देता है।४।

जो जाति, नीति, कुल और गोत्र से परे है; नाम, रूप, गुण और दोष से रहित है तथा देश, काल और वस्तु से भी पृथक् है, तुम वही ब्रह्म हो—ऐसी अपने अन्तःकरण में भावना करो।५।

जो प्रकृति से परे और वाणी का अविषय है, निर्मल ज्ञानचक्षुओं से जाना जा सकता है तथा शुद्ध चिद्घन अनादि वस्तु है, तुम वही ब्रह्म हो—ऐसी अपने अन्तःकरण में भावना करो।६।

क्षुधा-पिपासा आदि छः ऊर्मियों से रहित योगिजन जिसका हृदय में ध्यान करते हैं, जो इद्रियों से ग्रहण नहीं किया जा सकता तथा

बुद्धि से अगम्य और निर्दोष है, तुम वही ब्रह्म हो—ऐसी अपने अन्तःकरण में भावना करो ।७।

जो इस भ्रान्तिकल्पित जगद्रूप कला का आधार है, स्वयं अपने ही आश्रय पर स्थित है, सत् और असत् दोनों से भिन्न है तथा जो निरवयव और उपमारहित है, तुम वही ब्रह्म हो—ऐसी अपने अन्तःकरण में भावना करो ।८।

जो जन्म, वृद्धि, परिणति, अपक्षय, व्याधि और नाश—शरीर के इन छः विकारों से रहित और अविनाशी है तथा विश्व की सृष्टि, पालन और विनाश का कारण है, तुम वही ब्रह्म हो—ऐसी अपने अन्तःकरण में भावना करो ।९।

जो भेद रहित और अपरिणामी स्वरूप है, तरंग रहित जलराशि के समान निश्चल है तथा नित्यमुक्त और विभाग रहित है, तुम वही ब्रह्म हो—ऐसी अपने अन्तःकरण में भावना करो ।१०।

जो एक होकर भी अनेकों का कारण तथा अन्य कारणों के निषेध का कारण है, किन्तु जो स्वयं कार्य-कारण भाव से अलग है, तुम वही ब्रह्म हो—ऐसी अपने अन्तःकरण में भावना करो ।११।

जो निर्विकल्प, महान् और अविनाशी है, क्षर (संसार) और अक्षर (माया) से भिन्न है तथा नित्य, अव्यय, आनन्दस्वरूप और निष्कलंक है, तुम वही ब्रह्म हो—ऐसी अपने अन्तःकरण में भावना करो ।१२।

जो सर्वदा सत् और सुवर्ण के समान स्वयं निर्विकार है तथापि भ्रमवश नाना नाम, रूप, गुण और विकारों के रूप में भासता है, तुम वही ब्रह्म हो—ऐसी अपने मन में भावना करो ।१३।

जो 'अनपर' रूप से प्रकाशमान है, पर (अव्यक्त प्रकृति) से भी परे है, प्रत्यक्, एकरस और सबका अन्तरात्मा है तथा सच्चिदानन्द-

स्वरूप, अनन्त और अव्यय है, तुम वही ब्रह्म हो—ऐसी अपने अन्तःकरण में भावना करो ।१४।

इस पूर्वोक्त विषय को अपनी बुद्धि से प्रसिद्ध युक्तियों द्वारा अपने चित्त में स्वयं विचारो। इससे हस्तगत जल के समाम संशय-विपर्यय से रहित तत्त्व बोध हो जायगा ।१५।

सेना के बीच में रहने वाले राजा के समान, सब भूतों के संघात रूप शरीर के मध्य में स्थित इस स्वयंप्रकाशस्वरूप विशुद्ध तत्त्व को जान कर तथा उस पर सदा निर्भर और स्वस्वरूप में स्थित रहते हुए सम्पूर्ण दृश्यवर्ग को उस ब्रह्म में लीन करो ।१६।

वह सत्-असत् से विलक्षण अद्वितीय सत्य परब्रह्म बुद्धिरूप गुहा में विराजमान है। जो गुहा में उससे एक रूप होकर रहता है, हे वत्स! उसका फिर शरीर रूपी कन्दरा में प्रवेश नहीं होता (अर्थात् वह फिर जन्म ग्रहण नहीं करता) ।१७।

नामावली

ब्रह्म तत्त्वमसि भावयात्मनि।

७९

मनोबुद्ध्यहंकारचित्तानि नाहं

(निर्वाणषट्कम्)

(श्री शङ्कराचार्यकृत)

श्लोक

ओंकारं निगमैरवेद्यमनिशं वेदान्ततत्त्वास्पदं,
चोत्पत्तिस्थितिनाशहेतुममलं विश्वस्य विश्वात्मकम्।

विश्वत्राणपरायणं श्रुतिशतैः संप्रोच्यमानं विभुं,
सत्यज्ञानमनन्तमूर्तिममलं शुद्धात्मकं तं भजे ।।

अर्थ

जो निगम अर्थात् वेद के द्वारा जाना जाने वाला, वेदान्त तत्त्व के आधार स्वरूप, विश्व की उत्पत्ति स्थिति और विनाश के कारण रूप, निर्मल, विश्व का विश्वात्मक अर्थात् अतिव्यापक, विश्व की रक्षा करने वाला, वेदों के द्वारा कथित, सत्यज्ञान स्वरूप, अनन्त मूर्ति, अति निर्मल, शुद्धात्मक, सर्वव्यापक विभु है उस ओंकार का मैं हमेशा ध्यान करता हूँ।

गीत

१. मनोबुद्धयहंकारचित्तानि नाहं,
न च श्रोत्रजिह्वे न च घ्राणनेत्रे।
न च व्योम भूमिर्न तेजो न वायु-
श्चिदानन्दरूपः शिवोऽहं शिवोऽहम् ।।

२. न च प्राणसंज्ञो न पंचानिलो मे,
न तोयं न मे धातवो नैव कोशः।
न वाक्पाणिपादौ न चोपस्थपायू,
चिदानन्दरूपः शिवोऽहं शिवोऽहम् ।।

३. न मे द्वेषरागौ न मे लोभमोहौ,
मदो नैव मे नैव मात्सर्यभावः।

न धर्मो न चार्थो न कामो न मोक्ष-
श्चिदानन्दरूपः शिवोऽहं शिवोऽहम् ॥

४. न पुण्यं न पापं न सौख्यं न दुःखं,
न मन्त्रो न तीर्थं न वेदा न यज्ञाः ।
अहं भोजनं नैव भोज्यं न भोक्ता,
चिदानन्दरूपः शिवोऽहं शिवोऽहम ॥

५. न मे मृत्युशंका न मे जातिभेदः,
पिता नैव मे नैव माता न जन्म ।
न वन्धुर्न मित्रं गुरुर्नैव शिष्य-
श्चिदानन्दरूपः शिवोऽहं शिवोऽहम् ॥

६. अहं निर्विकल्पो निराकाररूपो,
विभुर्व्याप्य सर्वत्र सर्वेन्द्रियाणि ।
सदा मे समत्वं न मुक्तिर्न वन्धः,
चिदानन्दरूपः शिवोऽहं शिवोऽहम् ॥

अर्थ

मैं मन, वुद्धि, अहंकार और चित्त नहीं हूँ; कान, जिह्वा, नासिका और नेत्र भी नहीं हूँ । न आकाश हूँ, न भूमि हूँ, न अग्नि हूँ न वायु । केवल चिदानन्दरूप शिव हूँ ।१।

न प्राण हूँ, न पंचवायु, न सात धातु हूँ न पंचकोश । न वाक्, न हाथ-पैर, न उपस्थ (जननेन्द्रिय) एवं पायु (मलत्याग करने वाली इन्द्रिय) ही हूँ । केवल चिदानन्दरूप शिव हूँ ।२।

मुझ में राग है न द्वेष, न लोभ है न मोह, न मद है न डाह, न अर्थ है न काम है न मोक्ष। मैं केवल चिदानन्दरूप शिव हूँ, शिव हूँ।३।

मैं न पुण्य न पाप, न सुख न दुःख, न मन्त्र न तीर्थ, न वेद न यज्ञ, न भोजन न भोज्य और न भोक्ता हूँ। मैं केवल चिदानन्दरूप शिव हूँ, शिव हूँ।४।

मुझे न मृत्यु प्राप्त होती है न शंका, न मेरे लिए जातिभेद है, न पिता है न माता और न मेरा जन्म हुआ है, मेरा न कोई बन्धु है न मित्र, न गुरु है न शिष्य। मैं केवल चिदानन्दरूप शिव हूँ, शिव हूँ।५।

मैं भेदशून्य और निराकार रूप हूँ। सर्वव्यापी होने के कारण सर्वत्र और सम्पूर्ण इन्द्रियों में हूँ। मुझमें असंगता, मुक्ति और बन्धन भी नहीं है। मैं केवल चिदानन्दरूप शिव हूँ, शिव हूँ।६।

नामावली

ओं ओं ओं ओं ओं विचार।
ओं ओं ओं ओं भज ओंकार॥

मंगल गान

८०

शंकराय मंगलम्

गीत

१. शंकराय शंकराय शंकराय मंगलम्।
शंकरीमनोहराय शाश्वताय मंगलम्॥

२. गजाननाय मंगलं षडाननाय मंगलम् ।
सनातनाय मंगलं सदाशिवाय मंगलम् ॥

३. सीतारामाय मंगलं राधाकृष्णाय मंगलम् ।
आंजनेयाय मंगलं दत्तात्रेयाय मंगलम् ॥

४. शिवानन्दाय मंगलं सद्गुरुभ्यो मंगलम् ।
सर्वनामरूपसर्वेश्वराय मंगलम ॥

अर्थ

१. शंकर भगवान् का, पार्वतीप्रिय का, शाश्वत पुरुष का मंगल हो !

२. गणेश जी का, स्वामिकार्तिक का, सनातन पुरुष का तथा सदाशिव का मंगल हो !

३. सीता और राम का, राधा और कृष्ण का, हनुमान जी का तथा दत्तात्रेय का मंगल हो !

४. शिवानन्द का, सद्गुरु का तथा सर्वनामरूपमय सर्वेश्वर का मंगल हो !

शान्ति मन्त्र

८१

ओं त्र्यम्बकं यजामहे

१. ॐ त्र्यम्बकं यजामहे, सुगन्धिं पुष्टिवर्द्धनम् ।
उर्वारुकमिव बन्धनान्मृत्योर्मुक्षीय मामृतात् ॥

अर्थ

हम त्रिनेत्रधारी भगवान् शिव की पूजा करते हैं, जो सुगन्धिमय हैं तथा जो समस्त भूतों को पुष्टि प्रदान करते हैं। जिस तरह ककड़ी अपनी लता के बन्धन से मुक्त हो जाती है उसी तरह वह मुझे अमृतत्व की प्राप्ति के लिए मृत्यु के पाश से मुक्त करें !

२. ॐ सर्वेषां स्वस्ति भवतु, सर्वेषां शान्तिर्भवतु ।
सर्वेषां पूर्णं भवतु, सर्वेषां मंगलं भवतु ॥

अर्थ

सबों के लिए स्वस्ति अथवा समृद्धि हो, सबों के लिए शान्ति हो, सभी पूर्णता प्राप्त करें, सबों का मंगल हो !

३. ॐ सर्वे भवन्तु सुखिनः सर्वे सन्तु निरामयाः ।
सर्वे भद्राणि पश्यन्तु मा कश्चिद् दुःखभाग्भवेत् ॥

अर्थ

सभी सुखी हों, सभी रोगों से मुक्त हों, सभी सुख का दर्शन करें। किसी को भी दुःख न प्राप्त हो !

४. ॐ असतो मा सद्गमय। तमसो मा ज्योतिर्गमय।
मृत्योर्मा अमृतं गमय।

ॐ पूर्णमदः पूर्णमिदं पूर्णात् पूर्णमुदच्यते।
पूर्णस्य पूर्णमादाय पूर्णमेवावशिष्यते ॥
ॐ शान्तिः शान्तिः शान्तिः

अर्थ

मुझे असत्य से सत्य की ओर ले चल। अन्धकार से प्रकाश की ओर ले चल। मृत्यु से अमृतत्व की ओर ले चल।

वह (ब्रह्म) पूर्ण है। यह (विश्व) भी पूर्ण है। पूर्ण (ब्रह्म) से पूर्ण (संसार) निकाल लेने पर पूर्ण ही शेष रहता है।

ॐ शान्तिः शान्तिः शान्तिः।

सर्वं ब्रह्मार्पणम्

८२

कायेन वाचा मनसेन्द्रियैर्वा

श्लोक

कायेन वाचा मनसेन्द्रियैर्वा
बुद्ध्यात्मना वा प्रकृतेः स्वभावात्।

करोमि यद्यत् सकलं परस्मै
नारायणायेति समर्पयामि ॥

अर्थ

मैं अपने शरीर से, वाणी से, मन से, इन्द्रियों से, बुद्धि से या आत्मा से अथवा प्रकृति के स्वभाव से जो कुछ करता हूँ, वह सब परमात्म-स्वरूप नारायण को समर्पण करता हूँ।

ओं शान्तिः शान्तिः शान्तिः

भारत माता

८३

जय भारत माता

(श्री स्वामी विद्यानन्द कृत)

गीत

१. जय जय जय जय भारत माता।
जय विजयीभव श्री जगन्माता ॥

२. जय जय जय जय हे मम माता।
जय विजयीभव श्री जगन्माता ॥

३. सत्यरूपिणी भारत माता।
जय विजयीभव श्री जगन्माता ॥

४. ज्ञानरूपिणी भारत माता।
जय जय जय जय हे मम माता॥

५. आनन्दरूपिणी भारत माता।
जय विजयीभव हे मम माता॥

६. शक्तिदायिनी भारत माता।
जय जय जय जय हे मम माता॥

७. भुक्तिदायिनी भारत माता।
जय विजयीभव श्री जगन्माता॥

८. भक्तिदायिनी भारत माता।
जय जय जय जय हे मम माता॥

९. ज्ञानदायिनी भारत माता।
जय विजयीभव श्री जगन्माता॥

१०. शान्तिदायिनी भारत माता।
जय जय जय जय हे मम माता॥

११. सर्वदायिनी भारत माता।
जय विजयीभव श्री जगन्माता॥

१२. सच्चिदानन्दस्वरूपिणी माता।
जम विजयीभव भारत माता॥

भावार्थ

पारमार्थिक दृष्टि से भगवान् नाम, रूप और गुणों से रहित है; किन्तु हमारी सीमित मानव बुद्धि के लिए ऐसा भगवान् सहज बोधगम्य नहीं है। अतः हम पर अनुकम्पा कर भगवान् अनेक नाम, रूप धारण करता है। इन अनेकों नामों में से 'माँ' का नाम ही हमारे लिए सर्वाधिक सुगम और सुपरिचित है। भगवान् माँ का रूप धारण कर हमारा हाथ पकड़ कर हमें उच्चतम शिखर पर पहुँचा देता है। यही हमारी भारत माता, जगन्माता, आनन्दरूपिणी, ज्ञानस्वरूपिणी, सत्यस्वरूपिणी, शक्तिदायिनी, मुक्तिदायिनी, शान्तिदायिनी और सर्वदायिनी है। इस गीत में उसी भारत माता के विजय की कामना की गयी है।
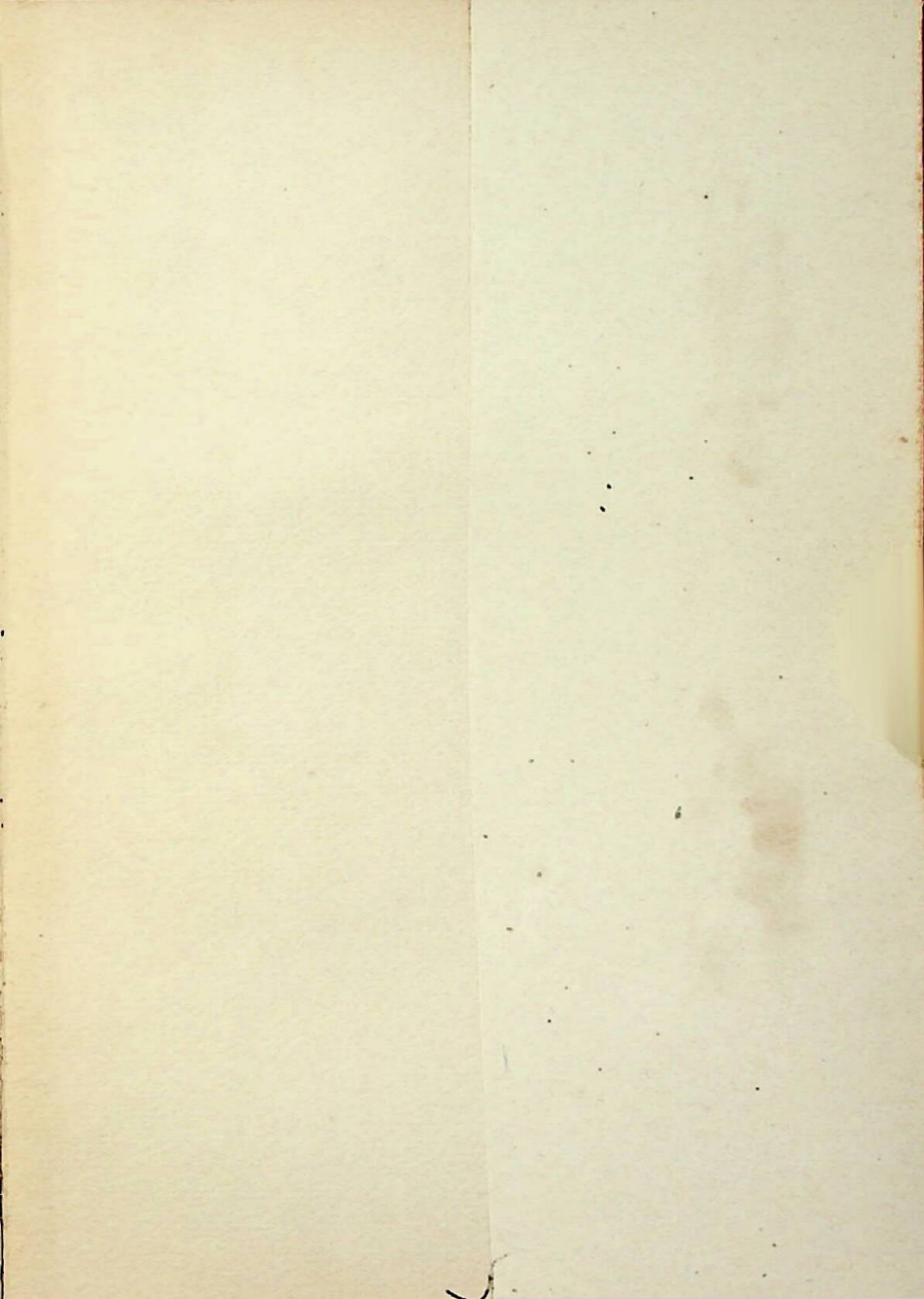
स्वामी विद्यानन्द जी

संकीर्तन विभाग के अध्यक्ष श्री स्वामी विद्यानन्द जी महाराज भक्ति तथा संगीत के सच्चे प्रेमी हैं। वह दम्भ तथा बाह्यप्रदर्शन से रहित हैं। संगीत-योग की सेवा में उन्होंने अपने जीवन को अर्पित कर दिया है। सच्चे साधकों के लिए वह सदा दया से पूर्ण हैं। अपने छात्रों के हृदय में संगीत-योग के प्रति दिलचस्पी उत्पन्न करने तथा सच्ची निष्ठा लाने के लिए वह हार्दिक प्रयत्न करते हैं तथा नित्यप्रति दयापूर्वक उन छात्रों की सेवा में तैयार रहते हैं।